DR. KAILASH KHANNA
M.A.,Ph.D.
Reader Deptt. of History
Bundelkhand College, Jhansi
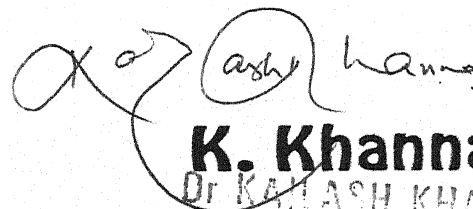
Residence
57, Civil Lines,
JHANSI.

Date 13-10-'96

CERTIFICATE

This is to certify that the research work embodied in this thesis, submitted for the Degree of Ph.D. in History, entitled " बुन्देलखण्ड में राष्ट्रीय एकता का इतिहास 1526 – 1947 ई0 " is the original research work done by Smt. Swadesh Khatri .

She has worked under my guidance and supervision during the required period.

K. Khanna.
Dr KAILASH KHANNA
M.A., P.H.D.
READER DEPT. OF HISTORY
Bundelkhand College, Jhansi

बुन्देलखण्ड में राष्ट्रीय एकता का इतिहास

(१५२६ से १९४७)

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी में इतिहास
विषय की पी॰ एच॰ डी॰ की उपाधि हेतु

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध
1996

शोध निर्देशक :
डॉ॰ कैलाश खन्ना
रीडर
इतिहास विभाग
बुन्देलखण्ड कालेज, झाँसी
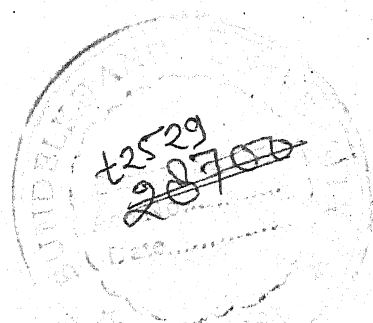
शोध छात्रा :
श्रीमती स्वदेश खत्री
सहायक अध्यापिका
डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद कन्या इन्टर कालेज, झाँसी

विषय सूची

चित्र सूची-

—o—

प्राक्कथन

भारत के मध्य में स्थित बुन्देलखण्ड अपनी स्वतन्त्रता-प्रियता, साहस, पराक्रम तथा राष्ट्रीय-प्रेम की परम्पराओं की एक अच्छी झाँकी प्रस्तुत करता है । विदेशी शासन से मुक्ति की भावना सतत ही बुन्देलखण्ड के लोगों के मन में पल्लवित होती रही । इस क्षेत्र की स्वतन्त्रता-प्रियता का सबसे अच्छा उदाहरण पन्ना नरेश छत्रसाल बुन्देला ने प्रस्तुत किया जिन्होंने पेशवा बाजीराव प्रथम के सहयोग से मुगलों को पराजित कर स्वतन्त्र बुन्देला राज्य की स्थापना की । छत्रसाल का संघर्ष वीरसिंह देव, जुझारसिंह तथा चम्पतराय के स्वतन्त्रता संघर्षों के उद्देश्यों की प्राप्ति था ।

पेशवा बाजीराव के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुये महाराज छत्रसाल ने उनके सम्मान में पन्ना में एक समारोह का आयोजन किया तथा अपने दरबार की एक प्रसिद्ध नर्तकी एवम् वीरांगना मस्तानी को पेशवा की सेवा में सौंप दिया था । बुन्देलखण्ड में राष्ट्रीय एकता तथा हिन्दू-मुस्लिम सहयोग इस घटना से अधिक सबल आधार प्राप्त करने लगा । मस्तानी एक मुस्लिम महिला थी जिसे बाजीराव ने अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार किया । मस्तानी तथा बाजीराव से उत्पन्न सन्तान अली बहादुर जुल्फीकार अली, शमशेर बहादुर तथा अली बहादुर द्वितीय बुन्देलखण्ड स्थित पेशवा के क्षेत्र बाँदा में नवाब के रूप में स्थापित हुये । यहाँ से इन नवाबों

ने हिन्दू-मुस्लिम सहयोग तथा राष्ट्रीय-एकता को ठोस आधार प्रदान किया ।

झाँसी के मराठा सरदारों ने भी इस राष्ट्रीय एकता को सशक्त करने का प्रयास किया है । 1857 के महान् विद्रोह में एकता की यह कड़ी एक चट्टान के रूप में प्रकट हुई जिसमें हिन्दू तथा मुसलमानों ने अँग्रेजी हुकूमत के दाँत खट्टे कर दिये थे ।

1857 के विद्रोह के दमन के समय इस क्षेत्र में अँग्रेजों को अत्यन्त परेशानी उठानी पड़ी थी । अतः यहाँ के लोगों के विरुद्ध कटुता विदेशी शासकों के मन में निरन्तर पल्लवित होती रही । इसीलिये बुन्देलखण्ड को सामाजिक तथा आर्थिक रूप से पिछड़ा बनाये रखा गया । हिन्दू-मुस्लिम सहयोग तथा राष्ट्रीय-एकता को विखण्डित करने के लिये अँग्रेजी सरकार ने ईसाई धर्म प्रचारक भेजकर बुन्देलखण्ड में एक वफादार प्रजा का निर्माण करना चाहा किन्तु यहाँ के लोगों की उदारता, सर्वधर्म समभाव की नीति तथा सभी को अंगीकार करने की प्रवृत्ति आदि गुणों ने ईसाई मिशनरियों को सहयोग देते हुये उन्हें भी गले लगा लिया । गाँधी जी के नेतृत्व में लड़े गये स्वतन्त्रता संघर्ष में बुन्देलखण्ड में हिन्दू-मुस्लिम, ईसाई सभी एक-दूसरे से मिलकर विदेशी सत्ता के विरुद्ध जनान्दोलन में सक्रिय सहयोग देते रहे । यहाँ के सूफियों, सन्तों तथा महात्माओं ने राष्ट्रीय-एकता की कड़ी को और सशक्त किया है और आज भी विभिन्न धर्मावलम्बियों में सद्भाव तथा मैत्री यथावत बनी हुई है ।

मैंने अपने शोध-प्रबन्ध "बुन्देलखण्ड में राष्ट्रीय-एकता का इतिहास" [1526 से 1947 तक] में इन्हीं तथ्यों को प्रस्तुत करने का एक छोटा सा प्रयास किया है । मेरे इस कार्य में डॉ0 कैलाश खन्ना , रीडर, इतिहास विभाग, बुन्देलखण्ड कालेज, झाँसी ने अपना अमूल्य सहयोग देकर हमें निर्देशन देने का कष्ट किया है उनके प्रति मैं हृदय से आभारी हूँ । मैं डायरेक्टर , राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली, लाइब्रेरियन आगरा, विश्वविद्यालय, लखनऊ विश्वविद्यालय, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, लाइब्रेरियन डिस्ट्रिक्ट लाईब्रेरी झाँसी तथा अपने टाईपिस्ट श्री रामदास कुशवाहा की भी आभारी हूँ जिन्होंने समय-समय पर मेरी सहायता की ।

मैं डॉ0 एस0पी0 पाठक , रीडर एवम् अध्यक्ष, इतिहास विभाग, बुन्देलखण्ड कालेज, झाँसी के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करना चाहूँगी जिनके मार्गदर्शन एवम् सहयोग से यह कार्य सम्भव हो सका ।

मैं अपने विद्यालय "डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद कन्या इन्टर कालेज, झाँसी के अध्यक्ष श्री सीताराम श्रीवास्तव, एडवोकेट, प्रबन्धक श्री लखन कुमार खरे , एडवोकेट, प्रधानाचार्या कुमारी नीलमधु श्रीवास्तव की अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होंने मुझे यह शोध कार्य करने के लिये प्रेरित किया तथा अनुकूल वातावरण प्रदान

किया । अन्त में मैं उन सभी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करती हूँ जिन्होंने प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से मेरी इस कार्य में मदद की है ।

भवदीया,

दिनांक: 27-9-96

Swadesh Khatri

[स्वदेश खत्री]

सहायक अध्यापिका

डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद कन्या इण्टर कालेज,

झाँसी।

अध्याय प्रथम

बुन्देलखण्ड का भौगोलिक परिवेश एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

बुन्देलखण्ड की स्थिति भारत के केन्द्र में है । अपनी भौगोलिक पृष्ठभूमि के कारण यह क्षेत्र सदैव राजनैतिक गतिविधियों का केन्द्र बिन्दु बना रहा । इसके उत्तर में यमुना नदी, दक्षिण में नर्मदा, पश्चिम में चम्बल तथा पूर्व में केन तथा विन्ध्याचल की पर्वत श्रेणियाँ इस क्षेत्र की सीमाओं का निर्धारण करतीं हैं ।

बुन्देलखण्ड का प्राचीन नाम "दशार्ण" प्राप्त होता है । सम्भवतः इस क्षेत्र में दस नदियों के प्रवाहित होने के कारण ही इसे दशार्ण प्रदेश कहा गया जो इस प्रकार है :- धसान, पार्वती, सिन्धु, बेतवा, चम्बल, जमुना, नर्मदा, केन, टोंस और जामनेर ।[1] ईसा से पूर्व कात्यायन, कौटिल्य, कालिदास आदि ने अपने ग्रन्थों में इस प्रदेश को दशार्ण नाम से ही पुकारा है ।[2] इसी प्रान्त को आगे चलकर "जेजाकभुक्ति" नाम भी प्राप्त हुआ । जयशक्ति या विजाक नामक राजा ने अपने राज्य का विस्तार यमुना से नर्मदा तक किया था और सम्भवतः

---

1. बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप-कृष्णलाल हंस, पृष्ठ-3.
2. वही.

इसलिये यमुना से नर्मदा तक का भाग जैजाक भूमि के नाम से पुकारा गया है ।[3] एक अन्य मत के अनुसार सर्वप्रथम इसी क्षेत्र में ही वैदिक-कालीन यजुर्विदीय कर्मकाण्ड का अभ्युदय हुआ था ।[4]

एक अन्य मत यह है कि चन्देलों की सत्ता के अवसान के पश्चात् इस गहरवार क्षेत्र पर काशी के गहरवार क्षत्रियों ने आधिपत्य जमाया जिन्होंने यहाँ अपने साथियों का संगठन कर अपने नाम के आगे बुन्देला की पदवी धारण की ।[5] बुन्देलखण्ड के बुन्देला शासक स्वंय को काशी के गहरवार राजा वीरभद्र के पंचम पुत्र का स्वंय को वंशज बताते हैं ।[6] बाद में इन्हीं नरेशों के प्रभुत्व से प्रसारित हो सम्पूर्ण प्रदेश का नाम बुन्देलखण्ड हो गया ।[7]

बुन्देलखण्ड का भौगोलिक आधार

बुन्देलखण्ड 22 डिग्री और 27 डिग्री अक्षांश तक तथा 75 डिग्री और 84 डिग्री पूर्वीय भू-रेखाओं के मध्य में है । उत्तर की ओर गंगा और यमुना से मकानद तथा दक्षिण में नर्मदा नदी जिसमें मालवा भी सम्मिलित था, इसकी सीमाओं को निर्धारित करती है । पश्चिम में इसकी सीमा सामान्य रूप से चम्बल नदी थी जो विन्ध्य मेखला तक

---

3. वही.
4. मधुकर पाक्षिक, 15 दिसम्बर, पृष्ठ-35.
5. महाराजा छत्रसाल बुन्देला-भगवानदास गुप्त, पृष्ठ-18.
6. मधुकर, 1943, पृष्ठ-249.
7. वही.

पहुँचती है । जैजाकभुक्ति की पूर्वी सीमा इतनी स्पष्ट नहीं रखी जा सकती । उत्तर पूर्व में सोन नदी सीमा थी, परन्तु इसका दक्षिण भाग बुन्देल साम्राज्य में घुस गया था । यदि बनारस के एक अंश पूर्व की देशान्तर रेखा को सीमा मान लिया जाये तो कुछ अनुचित् नहीं होगा ।[8]

बुन्देलखण्ड मध्य भारत का वह भाग है जिसकी पूर्वी सीमा बुन्देलखण्ड की सीमा से मिलती है ।[9]

इसी के मध्य विन्ध्य पर्वत माला विराजमान है । प्राकृतिक दृष्टिकोण से इस प्रदेश को विन्ध्याचल की पर्वत श्रेणियों और पुष्प-सरिताओं का वरदान प्राप्त है । समुद्र तल से इसकी ऊँचाई 400 फुट से 3000 फुट तक है और इसका क्षेत्रफल लगभग 80,000 वर्गमील है तथा आबादी लगभग तीन करोड़ है । इसकी लम्बाई उत्तर से दक्षिण तक 366 मील और चौड़ाई पूर्व से पश्चिम तक 280 मील है ।[10]

बुन्देलखण्ड क्षेत्र के अन्तर्गत उत्तर प्रदेश के झाँसी, जालौन, बाँदा और हमीरपुर जिले तथा भूतपूर्व बुन्देलखण्ड एजेन्सी के ओरछा, दतिया, समथर, पन्ना, चरखारी, बिजावर, अजयगढ़, छतरपुर, अलीपुरा, टोड़ी-फतेहपुर, बिजना पहाड़ी, बंका, वरोंघ, पावनी, बेरी बीहट, सोहियान, कालिंजर, भसिण्डा, कामता रजौला, पालदेव,

---

8. चन्देले और उनका राजत्वकाल-केशवचन्द्र मिश्र, पृष्ठ-6.
9. इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका, पृष्ठ-409.
10. बुन्देलखण्ड दर्शन-मोतीलाल त्रिपाठी, पृष्ठ- 27-28.

दराय, गहरौली, गौरिहार, जसोह, जिगनी, बनियाधाना, लुगासी, नौगाँव, सरीला आदि देशी राज्यों एवं जागीरें शामिल थीं ।[11]

अतः सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड वर्तमान उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश के सीमावर्ती जिलों में बंटा हुआ है । इससे बुन्देलखण्ड के दो भाग दृष्टिगोचर होते हैं -प्रथमः उत्तर प्रदेशीय बुन्देलखण्ड और द्वितीयः मध्य प्रदेशीय बुन्देलखण्ड । उत्तर प्रदेशीय बुन्देलखण्ड के अन्तर्गत झाँसी, जालौन, बाँदा, हमीरपुर तथा ललितपुर जिले सम्मिलित हैं और मध्य प्रदेशीय बुन्देलखण्ड के अन्तर्गत दतिया, टीकमगढ़, छतरपुर, जबलपुर, सागर, मुरैना, ग्वालियर, भिण्ड, शिवपुरी, दमोह, गुना, सतना, पन्ना, विदिशा, नरसिंहपुर, मंडला, रायसेन, बैतूल, होशंगाबाद, छिंदवाड़ा, बालाघाट, सियोनी, बंगलाघाट आदि सम्मिलित हैं ।

बुन्देलखण्ड की प्राचीनता

बुन्देलखण्ड की प्राचीनता के बारे में सबसे पहले विवरण रोम के भूगोलवेत्ता टालमी का उल्लेख करना उचित् प्रतीत होता है । टालमी ने अपनी भूगोल नामक ग्रन्थ को लगभग 151 ई0 में पूरा किया, जिसमें उसने कालिंजर को कनगौरा नाम से उल्लेखित किया है । कनगौरा की स्थिति जमुना के दक्षिण में थी ।[12] टालमी ने बुन्देलखण्ड का प्राचीन न

---

11. इन्ट्रोडक्ट्री नोट टू डिस्क्रिप्टिव लिस्ट ऑफ रिकार्डस् ऑफ द बुन्देलखण्ड पॉलिटिकल ऐजेन्सी-राष्ट्रीय अभिलेखागार ।
12. स्टेटिस्टीकल डिसक्रिप्टिव एण्ड हिस्टोरिकल एकाउण्ट ऑफ नार्थ-वेस्ट प्राविंसेस ऑफ इंडिया, भाग-1, एटकिंसन, ई0टी0, इलाहाबाद, 1874, पृष्ठ-2.

चन्द्रावती बताया है, जिसके कुछ नगरों का उल्लेख इस प्रकार किया है जैसे: तमासित जो सम्भवतः टौंस नदी के समीप बुन्देलखण्ड के मध्य में स्थित था । करपोरीना एक अन्य महत्वपूर्ण नगर था जो सम्भवतः आधुनिक करहिल [ग्वालियर के समीप] स्थित था ।[13] चेदिराज्य की राजधानी थी । गुप्तकालीन अभिलेखों से यह स्पष्ट होता है कि यमुना तथा नर्मदा का क्षेत्र गुप्तकालीन शासकों के अधीन था । इस क्षेत्र में नागवंशीय शासकों के अनेक सिक्के प्राप्त हुये हैं जो नरवर और बुन्देलखण्ड में इन शासकों की सत्ता के होने का प्रमाण देते हैं ।[14] विष्णुपुराण में यह वर्णन मिलता है कि पद्मावती तथा कान्तीपुरी के क्षेत्र में नागवंश के 9 राजा शासन करेंगे तथा गुप्तवंश के अधीन मगध से लेकर गंगा तथा प्रयाग का क्षेत्र साकेत और मगध के सहित शामिल रहेगा ।[15]

पद्मावती की पहचान जनरल कनिंघम ने सिन्ध नदी के तट पर स्थित नर्वर के साथ की है । इसी प्रकार कान्तीपुरी आधुनिक कुटूवल [ग्वालियर के बीस मील उत्तर में स्थित थी] के साथ की गई है ।[16] इससे यह संकेत मिलता है कि वह क्षेत्र जो यमुना तथा नर्मदा एवं चम्बल और केन से घिरा हुआ था और जिसका क्षेत्रफल लगभग 1800 वर्ग मील

---

13. स्टेटिस्ट्रीकल डिसक्रिप्टिव एण्ड हिस्टोरिकल एकाउन्ट ऑफ नार्थ-वेस्ट प्राविंसेस ऑफ इंडिया, भाग-1, एटकिंसन, ई0टी0, इलाहाबाद, 1874, पृष्ठ-2.
14. एटकिंसन, भाग-1, वही.
15. वही.
16. वही.

में फैला हुआ था । उस पर नागवंशीय शासकों ने शासन किया । नर्वर इस क्षेत्र का मुख्य केन्द्र था ।[17] यही कारण है कि नागवंशीय शासकों के अधिकांश सिक्के यहाँ प्राप्त हुये हैं ।[18]

जनरल कनिंघम की यह धारणा है कि लगभग 275 ई0 तक नर्वर गुप्त शासकों के अधीन था और इसी तिथि के आसपास इस क्षेत्र की प्रभुसत्ता यमुना के दक्षिण वाले क्षेत्र में तोरमाण का शासन स्थापित हो गया ।[19] ऐसा प्रतीत होता है कि गुप्तों ने नागवंशीय शासकों का यह क्षेत्र जीत लिया था । समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति में भी आर्यावर्त विजय के सन्दर्भ में गणपति नाग का उल्लेख आया था, जो समुद्रगुप्त द्वारा पराजित कर दिया गया था ।[20] तोरमाण ने भोपाल के निकट एरच से लेकर उत्तर में ग्वालियर तक शासन किया । इस प्रकार पश्चिमी बुन्देलखण्ड का क्षेत्र तोरमाण के अधीन था ।[21] सम्भवतः 243 ई0 में तोरमाण को पदच्युत कर समुद्रगुप्त ने अपना शासन स्थापित किया । तोरमाण के पश्चात् ग्वालियर में कछुवाह वंश का शासन स्थापित किया ।[22] राजेन्द्र मिश्र ने[23] एक अभिलेख के आधार पर यह प्रमाणित किया है कि तोरमाण के पुत्र पशुपति ने अपने शासन के पन्द्रवें वर्ष में भगवान सूर्य के एक मन्दिर का निर्माण कराया । यह मन्दिर गोपाद्रेय की पहाड़ी पर स्थित था।

---

17. वही.
18. वही.
19. एटकिंसन {वही} पृष्ठ-2 और 3.
20. वही.
21. आरकोलोजिकल रिपोर्ट, भाग-2, पृष्ठ-328.
22. वही.
23. आरकोलोजिकल रिपोर्ट, भाग-2, पृष्ठ-372.

गोपाध्येय की स्पष्ट पहचान गोपगिरी, उदयगिरि अथवा ग्वालियर की पहाड़ी के साथ की जाती है । पशुमति के कई सिक्के तोरमाण के सिक्के के ही समान हैं ।[24] ग्वालियर के आसपास के क्षेत्र से प्राप्त हुये हैं । अतः यह स्पष्ट होता है कि एरच और ग्वालियर का शासक तोरमाण एक ही व्यक्ति था ।[25]

चन्देलों के पूर्व बुन्देलखण्ड के इतिहास का संक्षिप्त वर्णन:

तीसरी शताब्दी से लेकर लगभग चन्देलों के उदय से लेकर लगभग आठवीं शताब्दी तक के बुन्देलखण्ड के इतिहास का वंशानुक्रम एवं क्रमबद्ध निरूपण एक उलझनपूर्ण कार्य है, फिर भी यह स्पष्ट प्रमाणित है कि नागों की सत्ता की समाप्ति के पश्चात् इस क्षेत्र में एरच तथा ग्वालियर के बीच तोरमाण ने शासन किया ।[26] चीनी यात्री ह्वेनसांग ने कन्नौज के राजा हर्षवर्धन के समय लगभग सातवीं शताब्दी के मध्य कन्नौज की यात्रा की थी तथा उसने लिखा था कि यमुना तथा नर्मदा के क्षेत्र तक हर्षवर्धन ने जीतकर अपने अधीन कर लिया था ।[27] इस सन्दर्भ में मुस्लिम इतिहासकारों का वर्णन भी महत्त्वपूर्ण है । इस विवरण से प्रतीत होता है कि हर्ष की मृत्यु के पश्चात् सम्पूर्ण भारत में धार्मिक संकट पैदा हुआ और सम्भवतः इसी समय अनेकों राजपूत वंशों का उदय हुआ । इन्हीं वंशों में महोबा

---

24. एटकिंसन {वही}, पृष्ठ-4.
25. जनरल ऑफ एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल, भाग-34, पृष्ठ-124.
26. वही.
27. वही.

और खजुराहो के चन्देल, नर्वर तथा ग्वालियर के कछुवाहा वंशों का भी उदय हुआ ।[28]

बुन्देलखण्ड में चन्देलों के शासन में कला, संस्कृति तथा अन्य क्षेत्रों में अभूतपूर्व प्रगति हुई । चन्देलों की शक्ति मुस्लिम आक्रमणकारियों के लिये भी अवरोधक साबित हुई । अपनी शक्ति समृद्धि और कलात्मक प्रगति के द्वारा चन्देलों का शासन बुन्देलखण्ड में स्वर्णयुग की भाँति था । जिस समय महमूद गजनवी के आक्रमणों से उत्तर भारत की राजपूत शक्ति एक-एक करके धाराशाई हो रही थी । तुर्क आक्रमण की इस आँधी में विद्याधर चन्देल एक दृढ़ चट्टान की भाँति प्रकट हुआ जिसमें राजपूती शान थी और जिसने कन्नौज के प्रतिहार शासक राज्यपाल के कायरतापूर्ण व्यवहार के कारण उसकी हत्या कर दी थी । निःसन्देह चन्देल शासन ने बुन्देलखण्ड में प्रत्येक क्षेत्र में प्रगति की ।

चन्देलों की शक्ति के पराभव के पश्चात् स्थानीय परम्परा के अनुसार बुन्देलखण्ड की सत्ता कुछ समय के लिये खंगारों के हाथ में आ गई।[29] यह खंगार चन्देल शासकों के नौकर और सेवक के रूप में कार्यरत थे किन्तु चन्देलों के पतन के पश्चात् खंगारों ने इस क्षेत्र में अपना आधिपत्य स्थापित किया तथा करार में अपने किले का निर्माण भी किया । 14वीं शताब्दी में बुन्देलों ने खंगारों का दमन कर इस क्षेत्र में अपनी सत्ता की स्थापना की ।[30]

---

28. वही.
29. एटकिंसन (वही), पृष्ठ-19.
30. वही.

बुन्देलों का आधिपत्य

स्थानीय परम्परा के अनुसार बुन्देलों की उत्पत्ति काशी के गहरवार वंश के राजा की संतान पंचम से हुई ।[31] इस परम्परा के अनुसार राजगद्दी से वंचित् होने के उपरान्त पंचम जब अपने भाईयों के द्वारा काशी राज्य से निष्कासित कर दिया गया तब वह मिर्जापुर के निकट विन्ध्याचल नामक स्थान से विन्ध्यवासिनी देवी के समक्ष तपस्या करने लगा । तपस्या करते समय उसने कटार निकाल कर देवी के समक्ष अपनी बलि देने का निश्चय किया और जैसे ही उसने गले पर कटार मारी उसी समय देवी प्रकट हुई जो उसकी भक्ति से प्रभावित होकर उसे वरदान दिया कि पंचम को न केवल अपना राज्य ही मिलेगा बल्कि उसके घाव से जो रक्त की बूँद जमीन पर गिरी थी इसलिये उसके उत्तराधिकारी बुन्देले कहे जाने लगे ।[32]

इलियट[33] ने इस कहानी की सत्यता पर प्रश्नचिन्ह लगाते हुये यह कहा है कि इस कहानी का उद्देश्य बुन्देलों की साधारण उत्पत्ति को अपमान से बचाने के लिये रचा गया है । उसने बुन्देलों की उत्पत्ति के बारे में वर्णन देते हुये लिखा है कि गहरवार वंशीय हरदेव एक दासी कन्या के साथ खैरागढ़ से आकर ओरछा में निवास करने लगा । करार के खंगार राजा ने हरदेव को उसकी पुत्री का विवाह अपने साथ करने को

---

31. स्टकिंसन (वही), पृष्ठ-19.
32. हिस्ट्री ऑफ बुन्देलाज, पाग्सन, पृष्ठ-8.
33. बीम द्वारा अनुदित, भाग-1, पृष्ठ-45.

कहा किन्तु इस प्रस्ताव को हरदेव ने सर्वप्रथम अस्वीकार कर दिया । बाद में खंगार राजा के अधिक आग्रह पर हरदेव ने उक्त प्रस्ताव इस शर्त पर स्वीकार कर लिया कि वह अपने सभी भाईयों परिवारजनों के साथ हरदेव के यहाँ दावत में भोज करेंगा ताकि सभी प्रकार के जातीय प्रतिबन्ध समाप्त हो सकें । इस प्रस्ताव को खंगार राजा ने स्वीकार कर लिया । हरदेव ने जो भोज दिया उसमें उसने धोखा देकर खाने में जहर मिला दिया अतएव खंगार राजा का परिवार मृत्यु को प्राप्त हो गया और इस प्रकार गहरवार वंश ने बेतवा से लेकर धसान नदी के बीच का वर्गक्षेत्र जो खंगारों के हाथ में था उस पर अपना आधिपत्य स्थापित किया । बुन्देला उपनाम गहरवारों ने इसलिये जोड़ा क्योंकि इस विवाह का सम्बन्ध एक दासी पुत्री के साथ जुड़ा हुआ था ।

उपरोक्त कहानी से इस मत की ओर संकेत मिलता है कि दक्षिण भारत की ओर से अनेक नेताओं के अधीन कई जातियों का समूह बुन्देलखण्ड में आकर बस गया तथा धीरे-धीरे यहाँ के हिन्दू राजाओं को सत्ता से बाहर कर दिया और स्वयं अपने हाथ में सत्ता ग्रहण कर ली । वास्तव में बुन्देलों के आने के पूर्व मुस्लिम आक्रमण से यहाँ के चन्देलवंशीय राजा अत्यन्त कमजोर हो चुके थे । आपसी मतभेद एवं वैमनस्य के कारण राजपूत शक्तियाँ विशेषकर चन्देल, चौहान युद्ध में परिणामस्वरूप अत्यन्त शक्तिहीन हो चुकी थी । उनकी दुर्बलता का लाभ लेकर खंगारों ने चन्देलों का शासन समाप्त कर दिया और अपने शासन की स्थापना कर ली । मुस्लिम आक्रमणों ने भी चन्देला की शक्ति को काफी झकझोर दिया था ।

ऐसी परिस्थिति में गहरवार वंश शासन की स्थापना बुन्देलखण्ड में 13वीं शताब्दी में सम्भव हो सकी ।

छत्र प्रकाश[34] से भी यह जानकारी मिलती है किन्तु बुन्देलखण्ड में मुसलमानों की बस्तियाँ 13वीं शताब्दी से पूर्व स्थापित नहीं हुई थीं । इलियट[35] ने भी यह मत स्वीकार किया है तथा यह भी संकेत किया है कि चन्देल, चौहान युद्ध में चन्देलों की पराजय के पश्चात् भी बुन्देलखण्ड में मुस्लिम बस्तियाँ स्थापित हो चुकीं थीं । दूसरी ओर फ्रैंकलीन[36] ने बुन्देलों की उत्पत्ति तथा इस क्षेत्र में उनके शासन की स्थापना वीरसिंहदेव के समय से माना है जो सम्भवतः 14वीं शताब्दी के अन्तिम दशक का संकेत देता है । अन्तिम चन्देल शासक भोज वर्मन के समय के शासकों से यह प्रमाणित होता है कि 1228 ई0 में इस क्षेत्र में उसका पूर्ण आधिपत्य था । अतः यह सम्भव प्रतीत होता है कि बुन्देलों का प्रवेश इस भू-भाग पर चन्देलों के शासन की तुरन्त समाप्ति के पश्चात् हुआ अथवा 14वीं शताब्दी के प्रारम्भ में[37] मऊ पर सर्वप्रथम आधिपत्य स्थापित करते हुये कालिंजर और कालपी पर बुन्देलों ने नियन्त्रण स्थापित किया तथा महौनी को अपनी राजधानी बनाया[38] और धीरे-धीरे पूरे बुन्देलखण्ड पर बुन्देलों ने अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया ।

---

34. हिस्ट्री ऑफ बुन्देलाज्, पाग्सन, कलकत्ता, 1828, पृष्ठ-9.
35. इलियट डाउसन, भाग-1, पृष्ठ-45.
36. एटकिंसन {वही}, पृष्ठ-20.
37. एटकिंसन {वही}, पृष्ठ-20.
38. वही.

स्वतन्त्र मनोवृत्ति एवं विदेशी सत्ता से संघर्ष

बुन्देलखण्ड का इतिहास शौर्य, साहस तथा स्वतन्त्राप्रिय भावना से सम्बन्धित रहा है । यहाँ की पठारी जलवायु तथा ऊबड़-खाबड़ भूमि के कारण लोगों के कठिन परिश्रम तथा स्वतन्त्रा प्रेरणा की भावना प्रधान रही है । इसलिये यहाँ के लोग भारतीय सत्ता से संघर्ष करते रहे । यहाँ के लोगों ने हमेशा-हमेशा के लिये किसी विदेशी सत्ता के सामने समर्पण नहीं किया और न ही उनकी स्वतन्त्रा की भावना हमेशा के लिये समाप्त हुई । ऐसी परिस्थिति में जब भी अपने विपक्षियों की महती शक्ति के कारण परिस्थिति विपरीत हुई तो थोड़े समय तक यहाँ के लोग अवश्य शान्त रहे, किन्तु फिर भी स्वतन्त्रा की भावना किसी न किसी रूप में परिलक्षित होती रही ।

इसका सबसे अच्छा उदाहरण पन्ना नरेश छत्रसाल बुन्देला ने 18वीं शताब्दी के प्रारम्भ में प्रस्तुत किया । मुगलों की सत्ता के विरुद्ध उनका संघर्ष वीरसिंह देव, जुझारसिंह तथा उनके पिता चम्पतराय के ही संघर्ष के क्रम में था । औरंगजेब की धार्मिक कट्टरता की नीति के विरुद्ध जो प्रतिक्रिया हुई थी उसके फलस्वरूप इस साहसी बुन्देला शासक ने बहादुर शाह के समय में बुन्देलखण्ड में एक स्वतन्त्र सत्ता की स्थापना कर ली थी ।[39]

जिस समय छत्रसाल बुन्देलखण्ड में अपनी स्वतन्त्र सत्ता की स्थापना कर रहे थे उस समय मुगल सम्राट फर्रुखशियर (1713-19) ने

---

39. गोरेलाल तिवारी, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, काशी नागरी प्रचारणी सभा, वाराणसी, पृष्ठ- 66-116.

बुन्देलखण्ड में अपनी शासन सत्ता की पुनः स्थापना करने के लिये अपने सबसे बहादुर सरदार मुहम्मद खान बंगश को इस आशय से बुन्देलखण्ड भेजा कि वह छत्रसाल की सत्ता को नष्ट कर सके । एक विशाल सेना के साथ मोहम्मद खान बंगश में बुन्देलखण्ड में प्रवेश किया और ऐसी परिस्थितियों में छत्रसाल को जून 1728 में जैतपुर के किले में स्वंय को बन्द करना पड़ा । जिस समय बंगश जैतपुर के किले में घेरा डाले हुये थे उस समय पेशवा बाजीराव प्रथम उत्तर भारत के अभियान के सिलसिले में गढ़मंडला के दुर्ग के पास घेरा डाले हुये था । छत्रसाल ने अपना एक प्रतिनिधि भेजकर पेशवा की मदद् की याचना की जिससे प्रेरित होकर बाजीराव ने बंगश के विरुद्ध छत्रसाल की सहायता की ।[40] अतः मराठा तथा बुन्देला सेनाओं ने मिलकर न केवल बंगश को पराजित ही किया, बल्कि उसे यहाँ से भाग जाने के लिये विवश किया ।

इस सामयिक मदद् से प्रसन्न होकर छत्रसाल ने पेशवा बाजीराव को अपने तीसरे पुत्र के रुप में समझकर अपने साम्राज्य का 1/3 भाग उसे दे दिया ।[41] अपनी मृत्यु से पूर्व 14 दिसम्बर, 1731 को उन्होंने पेशवा के सम्मान में एक दरबार किया तथा अपने दोनों पुत्रों हृदयशाह और जगत राज को पेशवा के संरक्षण में प्रस्तुत किया ।

साम्राज्य के बँटवारे के समय पेशवा को जो हिस्सा मिला उसमें कालपी, सागर, झाँसी, सिरोंज, पूँछ, कोंच, गढ़कोटा तथा हृदय नगर शामिल हैं । पेशवा का हिस्सा धसान नदी की दक्षिणी क्षेत्र में था,

---

40. जी०एस० सरदेसाई, न्यू हिस्ट्री ऑफ दी मराठा, भाग-2, पृष्ठ- 105-107.

41. वही.

जिसकी वार्षिक आय 32 लाख रुपये थी ।[42] मराठों तथा बुन्देलों के मधुर सम्बन्ध आने वाले वर्षों में कायम न रह सके । शीघ्र ही बुन्देलखण्ड को क्षेत्र बनाकर मराठों ने अपनी शक्ति का विस्तार प्रारम्भ किया । अतः मराठा तथा बुन्देला सम्बन्धों में कटुता प्रारम्भ हो गई । पेशवा ने अपने बुन्देलखण्ड के साम्राज्य का तीन भागों में बंटवारा किया- पहला भाग- गोविन्द पन्त खेर को मिला जिसका मुख्यालय सागर था । दूसरा भाग- जिसमें बाँदा व कालपी शामिल था वह पेशवा के पुत्र शमशीर बहादुर को मिला । तीसरा भाग- जिसमें झाँसी शामिल था वह रघुनाथ हरी निवालकर के वंश को मिला ।[43]

बुन्देलखण्ड में अपनी सत्ता को सुदृढ करने के पश्चात् मराठों ने दिल्ली तथा उत्तर भारत की ओर साम्राज्य विस्तार प्रारम्भ किया किन्तु 1761 में पानीपत के तृतीय युद्ध में मराठों की पराजय के पश्चात् उनकी सत्ता और प्रतिष्ठा को गहरा धक्का लगा। गोविन्द पंत खेर की मृत्यु पानीपत के युद्ध में हुई . परिणामस्वरूप बुन्देलखण्ड में अराजकता तथा अस्त-व्यवस्तता प्रारम्भ हुई और बुन्देला सरदार मराठा के विरुद्ध विद्रोह करने लगे ।

---

42. इम्पीरियल गजेटियर, सेन्ट्रल इण्डिया, 1908, पृष्ठ-366.
43. एट्टीन फिफ्टी सेवन, एस०एन० सेन, पृष्ठ-267.

हिम्मत बहादुर गुसांई का बुन्देलखण्ड पर आक्रमण

बुन्देलखण्ड में मराठों की गिरती हुई प्रतिष्ठा तथा बुन्देलों के उनके प्रति विद्रोह से उत्पन्न अराजक स्थिति का लाभ लेने के लिये अवध के नवाब शुजाउद्दौला ने इस क्षेत्र में अपनी सत्ता स्थापित करने के लिये अपने बहादुर सरदार हिम्मत बहादुर गुसांई को भेजा । यद्यपि 1763 के तिन्दवारी के युद्ध में उसकी पराजय हुई थी, किन्तु इसके बावजूद भी हिम्मत बहादुर उस क्षेत्र में अपनी सत्ता स्थापित करने के लिये डटा रहा ।

हिम्मत बहादुर का वास्तविक नाम अनूपगिरि गुसांई था जिसके प्रारम्भिक इतिहास के बारे में विशेष जानकारी नहीं मिली । सर जदुनाथ सरकार के अनुसार यह गुसांई दतिया का निवासी था, जहाँ अकाल पड़ने के कारण उसकी माँ ने किसी सन्यासी के हाथ बेच दिया था ।[44] बाद में चलकर यह नवाब वजीर शुजाउद्दौला की सेवा में अवध चला आया और अपनी बहादुरी के बल पर उसका विश्वास पात्र बन गया । बक्सर के युद्ध में उसने अपने साहस का परिचय देते हुये उसने अपने मालिक शुजाउद्दौला के प्राणों की रक्षा की थी जिससे प्रभावित होकर शुजाउद्दौला ने उसे हिम्मत बहादुर की पदवी दी ।

अवध की एक विशाल सेना के साथ हिम्मत बहादुर ने बुन्देलखण्ड अभियान प्रारम्भ किया । सबसे पहले दतिया के राजा राम चन्द्र को पराजित कर उसने उससे चौथ वसूल किया तत्पश्चात् मोंठ और

---

44. फाल ऑफ दि मुगल इम्पायर, जे०एन०सरकार, जिल्द-3, पृष्ठ-226.

गुरसरांय पर आक्रमण किया । फलतः मराठा सरदार बालाजी गोविन्द ने पूना दरबार में सहायता की मांग की । किसी प्रकार फड़नवीस ने दिनकर राव अन्ना के नेतृत्व में एक मराठा सेना बालाजी गोविन्द की मदद के लिये भेज दी । साथ ही ग्वालियर तथा इन्दौर के मराठा सरदारों को दिनकर राव की मदद करने के लिये आदेश दिया । दिनकर राव अन्ना ने उस समय झाँसी के सूबेदार रघुनाथ राव हरिनिवालकर के सहयोग से हिम्मत बहादुर गुसाईं को परास्त किया । फलतः उसे गुरसरांय छोड़कर भागना पड़ा । सिन्धिया और होल्कर की सेनाओं के आगमन से हिम्मत बहादुर को और अधिक आतंकित कर मोंठ से भी बाहर भेज दिया गया ।

अपने साम्राज्यवादी लिप्सा तथा बुन्देलखण्ड में सत्ता की स्थापना के लिये हिम्मत बहादुर दृढ़ निश्चय था । स्थिति का अवलोकन करते हुये वह अवध वापस चला गया ।

1775 में हिम्मत बहादुर मराठों की सेवा में आ गया और इसी समय मराठों की ओर से लड़ते हुये उत्तर भारत के अभियान में वह अली बहादुर के सम्पर्क में आया । बाद में अली बहादुर से साँठ-गाँठ करके उसने बुन्देलखण्ड विजय कर आपस में बाँटने का निश्चय किया ।

बुन्देलखण्ड में अँग्रेजी प्रभुसत्ता का उदय

जब अली बहादुर और हिम्मत बहादुर बुन्देलखण्ड की विजय की योजना बना रहे थे उसी समय 1778 में अँग्रेजों ने इस क्षेत्र पर

अधिकार करने की योजना बनाई । इस क्षेत्र की केन्द्रीय स्थिति सामरिक महत्व आदि कारणों से ब्रिटिश शासक प्रारम्भ से ही यहाँ अपनी शक्ति स्थापित करना चाहते थे । अब समय भी अनुकूल था । मराठे और बुंदेले जो पहले एक दूसरे के मित्र थे वे अब आपस में एक दूसरे का गला दबाने लगे । साथ ही हिम्मत बहादुर और अली बहादुर इस क्षेत्र के विजय की अपनी योजना बना रहे थे । ऐसी परिस्थिति में 1775 में रघोवा को पेशवा पद पर समर्थन देने के लिये अंग्रेजों ने एक सेना कालपी होकर महाराष्ट्र भेजना चाही । वोरेन हेस्टिंग कालपी को मध्य भारत में प्रवेश का मुख्य द्वार मानता था । फलतः 1778 में यहाँ अधिकार कर लिया गया । यद्यपि एक बार पुनः मराठों ने अंग्रेजों का पदार्पण का विरोध करना चाहा, लेकिन वारेन हेस्टिंग ने कालिंजर के शासक कायमजी चौबे, भोपाल के नवाब तथा नागपुर के भोसला राजा से संधि करके कर्नल गोडार्ड के नेतृत्व में अंग्रेजी सेना महाराष्ट्र भेज दी । बुन्देलखण्ड की छाती पर से ब्रिटिश सेना का पदार्पण यहाँ की प्रतिष्ठा तथा स्वतन्त्रता के लिये आघात था ।

अली बहादुर तथा हिम्मत बहादुर गुसाँई का बुन्देलखण्ड अभियान

1789 में अली बहादुर और हिम्मत बहादुर ने इस क्षेत्र पर विजय अभियान प्रारम्भ किया जिसमें दोनों ने यह तय किया कि विजित प्रदेशों में बाँदा सहित कुछ प्रदेश अली बहादुर को मिलेंगे तथा शेष हिम्मत बहादुर को मिलेंगे ।[45] दोनों की लगभग 40 हजार सेनाओं ने बाँदा, चरखारी, बिजावर, पन्ना और छतरपुर पर अधिकार किया । जिस

---

45. बुन्देलखण्ड का इतिहास-गोरेलाल तिवारी, पृष्ठ-176.

समय यह लोग कालिंजर पर घेरा डाले हुये थे उसी समय 20 अगस्त, 1802 में अली बहादुर की मृत्यु हो गई। इसके पश्चात् उसका उत्तराधिकारी शमशेर बहादुर हुआ ।

सिंधिया 1803 की बेसिन की संधि से नाराज था और दोआब तथा ब्रिटिश समीपवर्ती क्षेत्रों पर आक्रमण की योजना बना रहा था । उधर नाना फड़नवीस ने बुन्देलखण्ड में मराठों की खोई हुई प्रतिष्ठा की पुनः स्थापना के लिये शमशेर बहादुर को नियुक्त किया था । शमशेर बहादुर से मिलकर ग्वालियर के सिंधिया ने बुन्देलखण्ड पर मराठा साम्राज्य की स्थापना के लिये संयुक्त अभियान, प्रारम्भ किया लेकिन इसी बीच हिम्मत बहादुर ने अंग्रेजों से हाथ मिला लिया जिससे मराठों का प्रयास सफल नहीं हुआ । हिम्मत बहादुर ने अंग्रेजों की ओर से लड़ते हुये अंग्रेजों की सत्ता बुन्देलखण्ड में स्थापित कराने का अथक प्रयास किया । इसके बदले जमुना के दाहिने किनारे की जागीर जिसकी वार्षिक आय 20 लाख रुपये थी, हिम्मत बहादुर को अंग्रेजों की ओर से मिली ।[46]

हिम्मत बहादुर के इस धोखेपूर्ण नीति से इस क्षेत्र की स्वतन्त्रता को धक्का लगा और 1802-1803 में बेसिन की संधि से बुन्देलखण्ड में अंग्रेजों का आधिपत्य प्रारम्भ हुआ । 1803 में कैप्टन बेली बुन्देलखण्ड आया जिसने यहाँ का शासन प्रारम्भ किया ।[47] हिम्मत बहादुर को जमुना के आस-पास के जो क्षेत्र मिले थे वे उसकी मृत्यु के बाद अंग्रेजी शासन का अंग बन गये और उन्हीं क्षेत्रों से बाँदा, हमीरपुर और जालौन जिलों का गठन हुआ ।

इस प्रकार 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक पूरा बुन्देलखण्ड

---

46. ट्रिटीज इंगेजमेंट एण्ड सनद-सी0यू0 एटचिसन, पृष्ठ-187.
47. ट्रिटीज इंगेजमेंट एण्ड सनद-सी0यू0 एटचिसन, पृष्ठ- 227-230.

अँग्रेजी शासन के अधीन आ गया । अँग्रेजों ने इस क्षेत्र में अपने संगठन को दिन प्रति दिन मजबूत बना लिया । विदेशी शासन के घातक परिणाम निकले । उदाहरण के लिये -बुन्देला सरदारों का साहस, शौर्य तथा उनमें युद्ध लड़ने की प्रवृत्ति लगभग समाप्त होती गयी । शाँति स्थापित हो जाने के बाद अब ये सरदार आराम की जिन्दगी जीने लगे । यही स्थिति मराठा सरदारों की भी हुई । इसके साथ ही साथ उनमें धोखा, छल तथा कपट जैसी बुरी प्रवृत्तियों का जन्म हुआ । इस प्रकार 1804-1857 तक अँग्रेजी शासन में बुन्देलखण्ड के इतिहास में दुखद अध्याय प्रारम्भ हुआ जिसमें यहाँ के शासक तथा शासित दोनों न केवल दयनीय स्थिति के शिकार हुये बल्कि उन दोनों के बीच आपसी विश्वास का अभाव भी दिखायी देने लगा ।

बुन्देलखण्ड में 1857 का विद्रोह

ब्रिटिश साम्राज्यवादी नीति की प्रतिक्रिया के रूप में चारों ओर असन्तोष तथा निराशा का जन्म हो चुका था । लार्ड डलहौजी की अपहरण नीति ने इस असन्तोष में और अधिक वृद्धि के परिणाम् स्वरूप बुन्देलखण्ड में जालौन तथा झाँसी की रियासतों को ब्रिटिश साम्राज्य का अंग बनाया गया । बाँदा के नवाब अली बहादुर के साथ भी अँग्रेजों ने इसी साम्राज्यवादी नीति का परिचय दिया । फलतः बुन्देलखण्ड के राजे महाराजे अँग्रेजी शासन से असन्तुष्ट हो चुके थे । अँग्रेजी शासन के अधीन राजस्व का जो निर्धारण किया गया वह तर्कसंगत न होकर राजस्व की कठोर नीति पर आधारित था । [48]

---

48. दि रिवोल्ट आफ 1857 इन बुन्देलखण्ड, सिन्हा, एस0एन0, लखनऊ, सन् 1982, पृष्ठ-39.

राजस्व की इस कठोर नीति ने कृषकों की स्थिति दयनीय बनाने में काफी सहायक सिद्ध हुई ।

ब्रिटिश शासन काल में ईसाई मिशनरियों का बुन्देलखण्ड में प्रवेश से यहाँ के लोगों ने विदेशी धर्म के प्रति प्रतिक्रिया पैदा हुई । प्रायः सोचा जाता था कि इन मिशनरियों की नियुक्ति सरकार द्वारा होती थी तथा उनके कार्य में पुलिस मदद किया करती थी।[49]

इस क्षेत्र की धर्मभीरु जनता ईसाई मिशनरियों के भारत आगमन तथा उनके क्रिया-कलापों से चिन्तित थी और उनकी यह धारणा बन रही थी कि किसी भी समय बुन्देलखण्ड भी ईसाई मिशनरियों के कार्यक्षेत्र में आ जायेगा । इसके अतिरिक्त अँग्रेज सरकार ने 1856 में विधवा पुनर्विवाह कानून [विडो रिमैरीज एक्ट] पास किया ।[50] जिसमें विधवाओं को पुनः विवाह करने की छूट दे दी । हिन्दुओं ने उसे अपने धार्मिक विश्वासों में हस्तक्षेप समझा । 1850 में जातीय अयोग्यता उन्मूलन कानून पास हुआ जिसमें यह नियम बनाया गया कि कोई व्यक्ति दूसरी जाति अथवा धर्म स्वीकार कर लेता है तो उसे पूर्वजों की सम्पत्ति से वंचित नहीं किया जायेगा । इसके पूर्व 1802 में सतीप्रथा पर प्रतिबन्ध लगा दिया था । 1829 में बैंटिंग ने इस पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाया ।[51] यद्यपि यह एक अच्छा कार्य था किन्तु

---

49. दि रिवोल्ट ऑफ 1857 इन बुन्देलखण्ड, सिन्हा, एस०एन०, लखनऊ, सन् 1982, पृष्ठ-40.
50. श्री धारनर, लाईफ ऑफ दि मारक्युस डलहौजी, भाग-2, पृष्ठ-364.
51. रैगुलेशन्स् ऑफ दि बैंगाल कोड, पृष्ठ-1145.

रूढ़िवादी हिन्दुओं ने इसे भी धार्मिक विश्वासों में हस्तक्षेप समझा । इन तमाम तथ्यों ने असन्तोष की आग में घी डालने का काम किया ।

बुन्देलखण्ड में लार्ड डलहौजी ने गंगाधर राव को गोद लेने के अधिकार से वंचित रखकर झाँसी की रियासत को अंग्रेजी राज्य में मिला लिया ।[52] इसके अतिरिक्त झाँसी के राजा ने महालक्ष्मी मन्दिर के लिये जो गाँव दिये थे उसे भी अंग्रेजों ने अपने अधीन कर लिया ।[53] अपने पति की मृत्यु के बाद तत्कालीन परम्परा के अनुसार अपना मुण्डन कराने के लिये लक्ष्मीबाई ने बनारस जाने के लिये अनुमति चाही ।[54] इन घटनाओं ने असन्तोष रूपी झरने को भर दिया था ।

बानपुर के राजा मर्दनसिंह को भी उनके राज्य के 1/3 हिस्से से वंचित रखा गया । उल्लेखनीय है कि मर्दनसिंह ने जवाहर सिंह को अंग्रेजी शासन के प्रति विद्रोह करने के लिये भड़काया था ।[55]

शाहगढ़ के राजा बखत अली के साथ भी यही व्यवहार हुआ ।[56] बाँदा के नवाब अली बहादुर के भी अधिकारों को छीनकर सरकार ने पेंशन देने का निश्चय किया । जालौन की ताई बाई

52. दि रिवोल्ट ऑफ 1857 इन बुन्देलखण्ड, सिन्हा, एस0एन0, लखनऊ, सन् 1982, पृष्ठ-48.

53. झाँसी डिवीजन म्यूटिनी रिकार्ड वॉल्यूम-47, डिपार्टमेन्ट-111, फाइल नं0-319, सिविल वॉल्यूम-84, डिपार्टमेंट-19, फाईल नं0-175.

54. बी0 गोड्से, झाँसी प्रवास, हिन्दी अनुवाद, माई0एस0एल0 नागर, शीर्षक-आँखों देखा गदर, पृष्ठ-79.

55. एन0ई0 झाँसी डिवीजन, पृष्ठ-3.

56. सिन्हा, एस0एन0-वही-, पृष्ठ-49.

को भी ब्रिटिश अधिकारियों ने हेय दृष्टि से देखा ।[57] इन कारणों से बुन्देलखण्ड में विद्रोह का प्रारम्भ हुआ ।

बुन्देलखण्ड में इससे पहले झाँसी से ही विद्रोह का सूत्रपात हुआ । 12वीं रेजीमेंन्ट का मुख्यालय झाँसी में ही स्थित था, जिसका अधिकारी कैप्टन डनलप था ।[58] इसमें योरोपीय सैनिकों की संख्या देशी सैनिकों की संख्या से काफी कम थी । देशी सैनिकों की संख्या 522 थी, जबकि यूरोपीय सैनिक केवल 6 ही थे । कुल मिलाकर 881 देशी सैनिकों में केवल 11 ही यूरोपीय सैनिक थे ।

मई 30, 1857 को झाँसी में क्रान्तिकारियों की एक बैठक हुई जिसमें पैदल सेना के सिपाही भी शामिल थे । जून 1, 1857 को कैप्टन जार्डन ने कैप्टन स्कीने को सूचित किया कि करेरा के पवार ठाकुर 2 जून को विद्रोह कर करेरा पर अधिकार करना चाहते हैं । । या 2 जून को झाँसी छावनी में स्थित दो बंगलों को आग लगा दी गई ।[59] इसी तरह बाँदा में अली बहादुर के नेतृत्व में क्रान्ति का श्रीगणेश हुआ ।

झाँसी, नौगाँव तथा चन्देरी में क्रान्तिकारियों का विशेष प्रभाव रहा । अपनी जागीरें, छीन लिये जाने के कारण बुन्देला

---

57. सिन्हा, एस0एन0 [वही], पृष्ठ-52.
58. वही.
59. एन0ई0, झाँसी डिवीजन, पृष्ठ-4.

ठाकुरों ने चारों ओर विद्रोह कर दिया ।[60] चन्देरी, तालबेहट तथा ललितपुर के चारों ओर बुन्देला ठाकुरों ने अँग्रेजी शासन के विरुद्ध झण्डे उठा लिये । बानपुर में मर्दनसिंह ने क्रान्ति का नेतृत्व किया । यही स्थिति जालौन, हमीरपुर आदि सभी जिलों में हुई ।

झाँसी के सुपरिन्टेन्डेन्ट पिनकने ने सेक्रेटरी उत्तर पश्चिम प्रान्त को 11 मार्च, 1858 को सूचित् किया कि हीरोज के नेतृत्व में हमारी सेना ने शाहगढ़ के राजा तथा वहाँ के विद्रोहियों को 3 मार्च, 1858 को मदनपुर में पराजित कर दिया है ।[61] झाँसी की स्थिति का उल्लेख करते हुये इसी पत्र में पिनकने ने लिखा है कि झाँसी में क्रान्तिकारियों की कुल संख्या लगभग 10,000 है । कुछ ही दिन पूर्व इन लोगों ने हमारा साथ देने वाली टहरी की रानी पर आक्रमण किया है ।[62]

14 मार्च को पिनकने ने अपने शासन के सचिव् को पुनः सूचित् किया कि झाँसी तथा मऊरानीपुर के क्रान्तिकारियों ने बरूआसागर किले पर अधिकार कर लिया है तथा ओरछा के किले पर आक्रमण करने की योजना बना रहे हैं । इसके साथ ही साथ

---

60. फारेन सीक्रेट कन्सल्टेशन, 18 दिसम्बर, 1857, नं0-237.
61. लैटर नं0-19, 1858, हेडक्वार्टर कैम्प कानपुर, 11 मार्च, 1858.
62. वही.

बानपुर के राजा मर्दनसिंह भी अब मदनपुर से भागकर झाँसी आ चुका है ।[63] 22 मार्च को पिनकने ने पुनः सूचित् किया कि हीरोज के नेतृत्व में सेना 21 मार्च को पहुँच चुकी है । लेकिन तब तक रानी लक्ष्मीबाई ने झाँसी की रक्षा के लिये किले की दीवारे ऊँची कर दी हैं तथा इन्हीं किले की दीवारों से लक्ष्मी बाई की तोपों ने हमारी सेना पर गोला-बारूद प्रारम्भ कर दी है । रानी इस समय किले में ही रह रही है । यह कहा जाता है कि उनके पास 20 से 30 के बीच तोपें हैं जो किले पर चारों किनारों पर लगा दी हैं । झाँसी के क्रान्तिकारियों के विद्रोह के बारे में प्राप्त सूचना के आधार पर कहा जाता है कि विद्रोही सैनिकों की संख्या लगभग 300 या 400 है । 100 तथा 105 के बीच घुड़सवार विद्रोही सैनिक हैं । 400 विलायती तथा 5000 या 6000 बुन्देला और मेवाती इसमें शामिल हैं, लेकिन इन संख्या पर पूर्ण विश्वास नहीं किया जा सकता है, क्योंकि चारों ओर से शहर के दरवाजे बन्द कर दिये गये हैं ।[64] 29 मार्च को पिनकने ने यह सूचित् किया है कि झाँसी के क्रान्तिकारियों ने हमारी मदद कर रही दतिया की सेना को परास्त कर दिया है।[65]

झाँसी के अतिरिक्त हमीरपुर, जालौन, ललितपुर आदि क्षेत्रों में भी यही स्थिति चली आ रही थी । 20 नवम्बर, 1858

---

63. लेटर नं0-22, ऑफ 1858 डेटेड कैम्प बिफोर तालबेहट, दि0 14 मार्च, 1858.
64. लेटर नं0-48, ऑफ 1858 डेटेड कैम्प बिफोर झाँसी, दि0 22 मार्च, 1858.
65. लेटर नं0-69, ऑफ 1858 डेटेड कैम्प बिफोर झाँसी, दि0 29 मार्च, 1858.

को हमीरपुर की स्थिति का उल्लेख करते हुये पिनकने ने लिखा है कि इस जिले में अब भी क्रान्तिकारियों के गुट अधिक सक्रिय हैं और जैसा कि मैंने पहले संस्तुति की है कि जब तक इस जिले के राठ और जैतपुर के क्षेत्र में स्थायी सेना पुलिस की मदद के लिये नियुक्त नहीं कर दी जाती, तब तक इस जिले में क्रान्तिकारियों का सफाया नहीं किया जा सकता। हमीरपुर के क्रान्तिकारियों में गुलाबसिंह तथा ईश्वरी बाजपेई का नाम विशेष उल्लेखनीय है जिन्हें 5 दिसम्बर, 1858 को इमलिया (अलीपुर जागीर) नामक स्थान पर कैप्टन फ्रीलिंग ने पकड़ने में सफलता प्राप्त की है।[66]

बुन्देलखण्ड में ब्रिटिश शासन के विरोध के प्रति विद्रोह की गतिविधियाँ व्यापक स्तर पर चलतीं रहीं। जालौन जिले में कौंच के निकट बिलवा के जागीरदार बरजोरसिंह[67] ने छापामार युद्ध प्रणाली अपनाते हुये ब्रिटिश सेना को भरसक परेशान किया। बरजोरसिंह की गतिविधियों से तंग आकर तथा लुक-छिपकर युद्ध करने की उसकी नीति के कारण ब्रिटिश सेना को अपनी रण नीति में परिवर्तन करना पड़ा[68] और उसे परास्त करने के लिये कैमल ब्रिगेड का गठन अँग्रेजी सेना को करने के लिये बाध्य होना पड़ा। बरजोरसिंह की क्रान्तिकारी गतिविधियों के बारे में झाँसी के सुपरिन्टेन्डेन्ट पिनकने[69] ने बिलवा

---

66. पिनकने वीकली रिपोर्ट नं0 205, कैम्प बिलवा, 31 मई, 1858.
67. वही.
68. वही.
69. वही नं0 217, कैम्प मोंठ, 5 जून, 1858.

से 6 मई 1858 को उत्तर-पश्चिमी प्रान्त के सचिव् को एक गोपनीय पत्र में लिखा था, 3 मई को जब मैं उरई पहुँचा तब मुझे यह प्रामाणिक सूचना मिली कि एक बड़ी सेना के साथ अस्त्र-शस्त्र लिये हुये बरजोर सिंह बिलवा के किले में शरण लिये हुये है । मेजर ओर ने अपनी सेना की टुकड़ी के साथ बिलवा के किले को घेरने का प्रयास किया । रात्रि 10 बजे स्वयं मेजर ओर ने बिलवा पर आक्रमण किया । हमारी सेना के आक्रमण की जानकारी से बरजोरसिंह ने अँग्रेजी सेना पर गोलाबारी आरम्भ कर दी , कुछ ही समय बाद आस-पास के घने जंगलों का लाभ लेते हुये वह बेतवा के करीब वाले क्षेत्र में चला गया । इस अभियान में 7 अँग्रेजी सैनिक मारे गये और 9 घायल हो गये । घायलों में लेफ्टीनेन्ट वेस्ट वर्ड भी शामिल हैं ।[70] पिनकने[71] ने 5 जून को मोंठ से पुनः एक गोपनीय पत्र लिखते हुये अपने सचिव् को सूचित् किया, "बिलवा में बरजोरसिंह के दल पर अँग्रेजी सेना के अभियान के अच्छे परिणाम दिखाई पड़े हैं । इस अभियान की सफलता से बेहट तथा अमरा के तीन प्रभावशाली ठाकुर जो अभी तक बरजोरसिंह के साथ थे, वे मेरे द्वारा सुरक्षा का आश्वासन दिये जाने पर अँग्रेजों की ओर आ गये हैं ।"

यद्यपि मेजर ओर के अभियान से बरजोरसिंह की विद्रोही गतिविधियाँ प्रभावित हुईं थीं लेकिन कुछ ही समय में बरजोरसिंह ने कोंच पर अपना शासन स्थापित कर लिया था । जालौन के आस-पास

---

70. वही.
71. पिनकने वीकली रिपोर्ट नं0 217, कैम्प मोंठ, 5 जून, 1858.

की रियासतों से भी अँग्रेज अधिकारियों को विद्रोह के दमन में पर्याप्त सहायता नहीं मिल पा रही थी । झाँसी सम्भाग के कमिश्नर पिनकने ने इस स्थिति पर प्रकाश डालते हुये लिखा था ।[72] यद्यपि शत्रु सेना पराजित की जा चुकी है और वह इधर-उधर जंगलों में भाग गयी है किन्तु इस क्षेत्र में बड़ी सेनाओं के बल पर विद्रोह का दमन नहीं किया जा सकता । इस क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति में सेना की छोटी-छोटी टुकड़ियाँ सक्रिय अधिकारियों के नेतृत्व में विद्रोह का दमन कर सकने में तभी सफल हो सकती है जबकि उनका मार्ग दर्शन सिविल अधिकारी करें, जो सेना को यह बता सकेंगे कि कौन सा सैनिक अँग्रेजों का समर्थक है और कौन सा अँग्रेजों का विरोधी । इसी उद्देश्य से मेजर ओर के नेतृत्व में हैदराबाद सेना, की टुकड़ी का गठन किया गया है । इसमें सन्देह नहीं कि बरजोरसिंह और दौलतसिंह जैसे जिन्होंने क्रान्तिकारियों ने छापामार युद्ध प्रणाली द्वारा जालौन क्षेत्र में अँग्रेजी सेना को काफी समय तक परेशान किया ।

अँग्रेजी सेना की जिन छोटी टुकड़ियों का गठन विद्रोहियों का दमन करने के लिये किया गया था उसमें एक टुकड़ी ने मऊ-महोनी और कौंच के समीप बरजोरसिंह की ओर अभियान किया ।[73] जिसका नेतृत्व कैप्टन वर्नर कर रहा था । इस आक्रमण से बरजोरसिंह को मऊ,

---

72. हमीरपुर कलेक्ट्रेट प्री म्यूटनी रिकार्ड्स, फाईल नं० XII- 153.
73. सिन्हा, एस०एन०, (वही), पृष्ठ- 174-175.

महोनी छोड़ना पड़ा ।[74] क्रान्तिकारियों का एक दूसरा दल जालौन से 10 मील उत्तर की ओर भी सक्रिय था जिसे ब्रिगेडियर मिडआफ ने परास्त किया ।[75] इस प्रकार कैप्टन बर्नर और मिडआफ के नेतृत्व में अंग्रेजी सेना की छोटी-छोटी टुकड़ियों ने विद्रोही नेताओं का दमन किया ।[76]

<u>1859 तथा उसके बाद बरजोरसिंह की क्रान्तिकारी गतिविधियाँ:</u>

अंग्रेजी सेनाओं के सघन अभियान के कारण 1859 के प्रारम्भ में जालौन में क्रान्तिकारी नेता पड़ोसी राज्य ग्वालियर तथा दतिया की ओर चले गये, किन्तु हमीरपुर, चन्देरी व बाँदा में क्रान्तिकारी सक्रिय रहे ।[77] 10 अक्टूबर 1859 को बरजोरसिंह पुनः दतिया से जालौन की सीमा में प्रवेश करने में सफल रहा किन्तु थोड़े दिन पश्चात् वह पुनः दतिया चला गया ।

दतिया के राजा पर बरजोरसिंह को संरक्षण देने का आरोप लगाया गया । अतः गवर्नर जनरल के ऐजेन्ट ने दतिया की रियासत पर जुर्माना कर दिया ।[78] इस घटना से दतिया की रियासत ने बरजोर सिंह को अपनी रियासत में घुसने पर प्रतिबन्ध लगा दिया । अंग्रेज

---

74. वही.
75. वही.
76. वही.
77. सिन्हा, एस0एन0, (वही), पृष्ठ-178.
78. जालौन कलेक्ट्रेट प्री म्यूटनी रिकार्डस् फाइल नं0 52.

सरकार का यह कार्य किसी स्वतन्त्र रियासत के प्रति उचित नहीं कहा जा सकता । वास्तव में बुन्देलखण्ड की जनता भी क्रान्तिकारी नेताओं के प्रति सहानुभूति रखती थी । अंग्रेज अधिकारी यह सोच रहे थे कि यदि दतिया की रियासत के अधिकारियों ने पूरे मन से अंग्रेजों का साथ दिया होता तो झाँसी जिले का विद्रोह आसानी से दबा दिया जाता ।[79]

संक्षेप में जहाँ पूरे हिन्दुस्तान में विद्रोह समाप्त हो चुका था वहाँ बुन्देलखण्ड में यह कई वर्षों तक जारी रहा । निःसन्देह हम यह कह सकते हैं कि बुन्देलखण्ड की जनता की सक्रिय भागीदारी से ही यह सम्भव हुआ । जालौन जिले में बरजोरसिंह जैसे क्रान्तिकारियों के पतन के बाद ही शांति स्थापित हो सकी ।

सर्व धर्म समन्वय की प्राचीन परम्परायें :

बुन्देलखण्ड के इतिहास की यह शानदार परम्परा रही है कि इस भूमि में सर्व धर्म समन्वय का अद्भुत उदाहरण देखने को मिलता है यहाँ कि पहाड़ियों एवम् गुफाओं में सभी धर्मों के ऋषि-मुनि अपने आध्यात्मिक उत्थान के लिये शरण लेते रहे हैं । हमें भलीभाँति ज्ञात है कि महाभारत के रचयिता महर्षि वेद व्यास बुन्देलखण्ड में कालपी के ही निवासी थे । जालौन में जैवाल ऋषि का आश्रम था । बाँदा वामदेव की कर्मस्थली थी और चित्रकूट तो अनेकों ऋषि मुनियों की आश्रमस्थली

---

79. वही.

रही ही है । यह भी ज्ञात है कि प्राचीन काल में अनेकों राजाओं तथा महाराजाओं ने हिन्दू, जैन, बौद्ध तथा अन्य देवी देवताओं के मन्दिरों का निर्माण भी प्रचुर मात्रा में इस क्षेत्र में कराया है । चन्देल शासकों का गौरवमय इतिहास इसका अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत करता है इन शासकों के समय हिन्दू तथा जैन मन्दिरों का निर्माण ही नहीं हुआ बल्कि इन धर्मावलम्बियों में परस्पर मेल जोल सद्भाव और सहिष्णुता के स्पष्ट संकेत देखने को मिलते हैं । चन्देल शासकों की धार्मिक सहिष्णुता के कारण लोग यह समझने लगे थे कि हिन्दू तथा जैन दोनों एक ही वृक्ष की शाखायें हैं ।

बुन्देलखण्ड के समीप ही साँची में बौद्ध स्तूप का निर्माण इस क्षेत्र की सर्व धर्म समन्वय की भावना को और मजबूती प्रदान करता है । गुप्त शासकों के समय दतिया के निकट सेवड़ा नामक स्थान पर सनकानिक महाराज का मन्दिर निर्मित कराया गया । सेवड़ा के निकट सनकुँआ नामक स्थान सनकानिक सम्प्रदाय का प्रमुख केन्द्र था । बुन्देलों के समय सर्व धर्म समन्वय की यह परम्परा अनवरत रूप से चलती रही महाराजा छत्रसाल बुन्देला ने अपने गुरु प्राण नाथ के नाम पर प्रणामी सम्प्रदाय चलाया । वीरसिंह देव के समय तो मुगल बुन्देला के सम्बन्धों की जो प्रगाढ़ श्रृंखला प्रारम्भ हुई उससे सर्व धर्म समभाव तथा राष्ट्रीय एकता का ठोस आधार तैयार हुआ जिसके चिन्ह बुन्देलखण्ड के जन जीवन में स्पष्ट परिलक्षित होते हैं ।

---0---

अध्याय द्वितीय

सामाजिक आर्थिक दशा एवम् सांस्कृतिक समन्वय

बुन्देलखण्ड की आर्थिक स्थिति मुख्यतः कृषि पर आधारित थी । जहाँ अधिकांश लोग खेती के कार्य में संलग्न थे । 19 वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में 1892 ई0 में राजस्व विभाग के सचिव् कालविन[1] ने लिखा था कि झाँसी जिले में ही सम्पूर्ण जनसंख्या का 53.25 प्रतिशत भाग कृषि पर आधारित जीवन व्यतीत करता था । यही स्थिति 19 वीं शताब्दी के अन्त तक बनी रही । 1903 ई0 में झाँसी जिले के राजस्व[2] बन्दोबस्त के समय में बन्दोबस्त अधिकारी पिम ने लिखा था कि इस जिले के महत्वपूर्ण नगरों जैसे-झाँसी, मऊ, गुरसराय तथा कटेरा आदि में भी व्यापार और उत्पादन निम्नस्तर पर है तथा अधिकांश लोगों का जीवन कृषि उत्पादन और घी के व्यापार पर ही आधारित है । यही स्थिति ललितपुर जिले की भी थी जो 1891 ई0 में

---

1. जेनकिन्सन, ई0 जी0, झाँसी सेटिलमेन्ट रिपोर्ट (फारवर्ड नोट), पृष्ठ-1, इलाहाबाद, 1871.

2. पिम, ए0 डब्लू0, फाईनल सेटिलमेन्ट रिपोर्ट ऑफ झाँसी डिस्ट्रिक्ट, इलाहाबाद, 1907, पृष्ठ-1.

झाँसी जिले के अन्तर्गत एक सब डिवीजन बना दिया गया था[3]. ललितपुर में जनसंख्या का एक न्यून प्रतिशत ही व्यापार तथा वाणिज्य के कार्यों में संलग्न था । यह व्यापारिक गतिविधि रुपये के उधार लेन-देन तक सीमित थी । जालौन जिले में भी लगभग यही स्थिति थी । बुन्देलखण्ड की कृषि-व्यवस्था किसी भी प्रकार दोआब की कृषि-व्यवस्था के समकक्ष नहीं थी । इसका कारण भी स्पष्ट है चूँकि बुन्देलखण्ड में कृषि योग्य अच्छी भूमि का दोआब की तुलना में गुणवत्ता की दृष्टि से अभाव रहा है । इसीलिये यह क्षेत्र कृषि उत्पादन की दृष्टि से दोआब के जिलों की तुलना नहीं कर सकता था । किन्तु जहाँ तक बुन्देलखण्ड के जिलों की तुलनात्मक स्थिति का प्रश्न है । इसमें सन्देह नहीं कि जालौन में भूमि की किस्म का प्रतिशत अधिक होने के कारण उपज की दृष्टि से यह जिला बुन्देलखण्ड के सम्भवतः अन्य जिलों से अच्छा था ।

<u>कृषि की दशाः</u>

ब्रिटिश शासन से पूर्व बुन्देलखण्ड में कृषि की स्थिति सन्तोषजनक थी । यह ज्ञात है कि 1526 में बाबर ने पानीपत के प्रथम-युद्ध में इब्राहिम लोदी को परास्त कर मुगल साम्राज्य की नींव डाली थी । मुगल शासन की स्थापना के पश्चात् बुन्देलखण्ड में मुगलों

---

3. पिम, ए० डब्लू०, फाईनल सेटिलमेंट रिपोर्ट ऑफ झाँसी डिस्ट्रिक्ट, इलाहाबाद, 1907, पृष्ठ-1.

की सत्ता स्थापित हो गई और यहाँ के बुन्देले राजा मुगलों की ओर से इस क्षेत्र पर शासन करने लगे । महाराजा रूद्रप्रताप (1501 से 1531 ई0) ओरछा राज्यवंश के आदि पुरूष माने जाते हैं । वे सिकन्दर लोदी, इब्राहिम लोदी तथा मुगल शासक बाबर के सम कालीन थे ।[4]

उन्होंने इब्राहिम लोदी के समय ही सवा करोड़ का विशाल बुन्देला राज्य स्थापित कर लिया था जो कालिन्जर से कालपी तक फैला हुआ था ।[5] 1528 ई0 में बाबर ने चन्देरी पर आक्रमण किया तथा मेदनीराय को पराजित कर मालवा और चन्देरी पर अधिकार कर लिया था । इसी समय बाबर ने कालपी पर अधिकार कर लिया । इस घटना के पश्चात् मुगलों के आक्रमणों से आशंकित होकर रूद्रप्रताप ने ओरछा को अपनी राजधानी बना लिया । 1531 ई0 में ओरछा दुर्ग का शिलान्यास कर नगर की स्थापना की थी ।[6]

1531 से 1554 ई0 तक बुन्देला ओरछा नरेश भारती चन्द्र हुये जो हुमायूँ तथा शेरशाह सूरी के समकालीन थे ।[7] हुमायूँ

---

4. बुन्देलखण्ड का इतिहास, के0पी0 त्रिपाठी, प्रथम संस्करण, 1951, पृष्ठ-36.
5. वही.
6. वही.
7. वही, पृष्ठ-37.

और शेरशाह के परस्पर संघर्ष का लाभ लेकर भारतीचन्द्र ने सिन्ध से लेकर तमस तथा यमुना से नर्मदा के बीच दो करोड़ वार्षिक आय का ओरछा राज्य बना लिया था ।[8] शेरशाह की मृत्यु के पश्चात् उसके पुत्र इस्लामशाह सूर ने पूर्वी बुन्देलखण्ड को अपने अधिकार में लेकर जतारा पर अधिकार कर लिया तथा उसका नाम इस्लामाबाद कर दिया ।[9] जतारा एक उपजाऊ क्षेत्र था जिसे प्राप्त करने के लिये मुगलों ने भी इसे बार-बार लेने की चेष्टा की थी । इस उपजाऊ क्षेत्र के कारण ही भारतीचन्द्र ने जतारा से इस्लाम शाह को भगा कर वहाँ अपना पूरा अधिकार कर लिया था ।

अकबर के समय ऐरच, कालपी, भाण्डेर और जतारा सूबा आगरा से तथा ललितपुर, चन्देरी, सूबा मालवा से एवम् बालाबेहट और धमौनी रायसेन से नियन्त्रित होते थे ।[10] कालपी कामरान के हिस्से में आया था किन्तु 1561 ई० में अकबर ने वहाँ का सूबेदार अब्दुलाखाँ को बना दिया था ।[11] गढ़कुण्ढ़ और जालौन का क्षेत्र अपनी उपज और आर्थिक समृद्धि के कारण हमेशा प्रसिद्ध रहा है । अकबर के समय आसकरन कछुआ जालौन में रामपुरा और लाहर के सूबेदार थे ।[12]

---

8. बुन्देलखण्ड का इतिहास, के०पी० त्रिपाठी, प्रथम संस्करण, 1951, पृष्ठ-37.

9. वही.

10. वही, पृष्ठ-38.

11. इलियट डाउसन, जिल्द 5, पृष्ठ-107.

12. वही.

वीरसिंह देव के समय बुन्देलखण्ड की आर्थिक दशा:

वीरसिंह देव का काल बुन्देलखण्ड के इतिहास में आर्थिक समृद्धि कला साहित्य एवम् सांस्कृतिक विकास के क्षेत्र में स्वर्णयुग माना जाता है । जहाँगीर के समय के मनसबदारों में वीरसिंहदेव बुन्देला को प्रथम स्थान प्राप्त था । परवर्ती मुस्लिम इतिहासकार शाहनवाजखाँ ने मासिर-उल-उमरा में वीरसिंह देव की शान एवम् वैभव का उल्लेख करते हुये समकालीन हिन्दू राजाओं में उनके ऐश्वर्य को अतुलनीय बताया है । वे ऐसे पहले बुन्देला शासक थे जिन्हें पंचहजारी के उच्च मनसब और महाराज की उपाधि से विभूषित किया गया था ।[13]

वीरसिंह देव एक कुशल प्रशासक थे उन्होंने अपने राज्य को भली-भाँति चलाने के लिये उसे इक्यासी परगनों में विभाजित किया था । उनके समय में ओरछा राज्य में एक लाख पच्चीस हजार गाँव थे और इसकी वार्षिक आमदनी लगभग दो करोड़ रुपये थी ।[14] वीर-सिंह देव के काल में बुन्देलखण्ड आर्थिक रूप से समृद्ध एवम् खुशहाल था । प्रजा सम्पन्न थी ।कृषि तथा व्यवसाय में पर्याप्त प्रगति हो चुकी थी । इस आर्थिक समृद्धि की पुष्टि इस बात से होती है कि उनकी मृत्यु के लगभग 9 साल बाद जब वीरसिंह देव के विद्रोही पुत्र राजा जुझारसिंह

---

13. जहाँगीरनामा, पृष्ठ-45,46 एवम् 669 तथा मासिर-उल-उमरा, भाग (1), पृष्ठ-396,397.

14. ओरछा गजेटियर, पृष्ठ-22 एवम् गोरेलाल तिवारी, कृत बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, पृष्ठ-140.

की मृत्यु के पश्चात् मुगलों का बुन्देलखण्ड के विभिन्न प्रदेशों में गड़ा हुआ असंख्य धन प्राप्त हुआ था ।[15]

वीरसिंहदेव प्रजा के हितैषी थे । बुन्देलखण्ड के विभिन्न प्रदेशों में आज भी उनकी न्यायप्रियता के बारे में अनेकों कथायें प्रचलित हैं ।[16] वह प्रजा के सुख-दुख का पता लगाने के लिये प्रायः रात्रि में वेश बदलकर घूमा करते थे । उनके समकालीन कवि केशव ने उनके द्वारा अनेकों अवसरों पर गरीबों को दान दिये जाने का उल्लेख किया है । मथुरा के विश्राम घाट पर उन्होंने इक्यासी मन सोने का तुलादान किया था ।[17] उनके काल में बनी हुई अनेकों महत्वपूर्ण इमारतें भी तत्कालीन आर्थिक समृद्धि का उदाहरण प्रस्तुत करतीं हैं ।

ब्रिटिश कालीन बुन्देलखण्ड की सामाजिक, आर्थिक दशा:

1802 ई० की बेसीन की सन्धि से बुन्देलखण्ड में अंग्रेजी प्रभुसत्ता का प्रारम्भ हुआ । इसके साथ ही केप्टन बेली को इस क्षेत्र पर अधिकार करने के लिये नियुक्त किया, गया । बेली ने बांदा में आकर कार्यभार ग्रहण किया । चूँकि अंग्रेजी शासन का प्रमुख उद्देश्य यहाँ का सामाजिक, आर्थिक शोषण करते हुये अधिक से अधिक राजस्व प्राप्त

---

15. रामस्वरूप ढेंगुला, बुन्देलखण्ड का राजनैतिक एवम् आर्थिक अनुशीलन प्रथम संस्करण, कानपुर, 1987, पृष्ठ-35.

16. वही.

17. ओरछा गजेटियर, पृष्ठ-22 तथा गोरेलाल तिवारी, कृत बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, पृष्ठ-140.

करना था इसलिये केली ने इस क्षेत्र के किसानों एवम् जमीदारों के लिये राजस्व की दरें निर्धारित करने की दिशा में तत्परता दिखायी । राजस्व के मामले में तथा इस क्षेत्र के बारे में अधिक परिचित न होने के कारण उसने मिर्जा जाफर को लखनऊ से बुला कर राजस्व प्रबन्ध के कार्य का श्री गणेश किया । बाँदा के नवाब के समय की राजस्व दरों को ध्यान में रखते हुये स्थायी व्यवस्था होने तक जल्दबाजी में भूमिकर की दरें निर्धारित की गयीं ।

बाँदा का लगभग सम्पूर्ण जिला अँग्रेजों को दिसम्बर 1803 ई० की पूना की संधि के द्वारा प्राप्त हुआ था ।[18] इस क्षेत्र पर 1804 ई० का रेगुलेशन नम्बर 4 लागू किया गया ।[19] जहाँतक कालिन्जर का प्रश्न था, उसका प्रबन्ध 1812 ई० तक कालिन्जर के चौबे जागीरदारों के पास में था ।[20] बाद में चलकर अँग्रेजी सरकार तथा चौबे जागीरदारों के बीच क्षेत्र का आपस में आदान-प्रदान किया गया । अतः चौबे जागीरदार को भिटारी तथा बदौसा के कुछ गाँव प्राप्त हुये । इसके बदले अँग्रेजों ने कालिन्जर के क्षेत्र पर अधिकार कर लिया ।[21]

---

18. एचीन्सन, सी०यू०, ट्रीटीज इन्गेजमेन्ट एण्ड सनद, जिल्द-V, कलकत्ता, 1909, पृष्ठ-295.

19. वही.

20. एटकिन्सन, ई०टी०, बुन्देलखण्ड गजेटियर, इलाहाबाद, 1878, पृष्ठ-366.

21. वही.

परगना खानदेह जो जालौन के मराठा सूबेदार के अधीन था, वह भी 1818 ई0 में अंग्रेजों को प्राप्त हो गया। ठीक इसी तरह बाँदा के अन्य क्षेत्रों पर भी अंग्रेज अपना आधिपत्य स्थापित करने में सफल हो गये।

1854 ई0 में राजा गंगाधर राव की मृत्यु के बाद झाँसी की रियासत जो अंग्रेजी शासन में मिला लिया गया था। इसके बाद के कुछ वर्षों का समय रानी लक्ष्मीबाई और अंग्रेजों के बीच परस्पर विरोधी दावे को लेकर गुजरता रहा, किन्तु 1858 ई0 में शान्ति व्यवस्था स्थापित होने के बाद राजस्व कर-निर्धारण की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। राजा गंगाधर राव की मृत्यु के समय झाँसी की रियासत जिस पर अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया था। उसमें 9 परगने थे, झाँसी, पिछोर, करेरा, मऊ, पंडवाल और विजयगढ, इसके अतिरिक्त मोंठ, भाण्डेर, और गरौठा भी अंग्रेजी शासन के अंग थे।[22] ललितपुर 1891 ई0 तक एक पृथक जिला था।[23] अतः झाँसी व ललितपुर के राजस्व बन्दोबस्त अलग-अलग समय पर किये गये। लेकिन 1903 ई0 में झाँसी और ललितपुर का राजस्व-प्रबन्ध पिम ने साथ-साथ किया, क्योंकि उस समय ललितपुर, झाँसी में मिलाकर उसका एक सब-डिवीजन बना दिया गया था।

---

22. पाठक, एस0पी0, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-92.

23. वही.

क्षेत्रों में प्रायः परिवर्तन होने के कारण राजस्व इतिहास के प्रारम्भिक स्वरूप के बारे में विशेष जानकारी प्राप्त करना कठिन प्रतीत होता है ।[24] 1857 ई0 के विद्रोह के समय राजस्व निर्धारण सम्बन्धी पत्रावलियों के नष्ट हो जाने के कारण भी हमें इस सम्बन्ध में काफी कठिनाई उठानी पड़ती है ।[25]

राजस्व की कठोर दरें:

अंग्रेजी शासन का प्रमुख उद्देश्य बुन्देलखण्ड के क्षेत्रों से अधिक से अधिक धन वसूल करना था । चूँकि यहाँ की अधिकांश जनसंख्या कृषि पर आधारित थी इसलिये राजस्व की दरें इस प्रकार निर्धारित की गई ताकि अधिक से अधिक धनराशि कर के रूप में वसूल कर इंग्लैण्ड भेजी जा सके । प्रायः सभी प्रशासनिक अधिकारी सैनिक अधिकारी थे जो जनकल्याण के स्थान पर अपने उच्च अधिकारियों को प्रसन्न करने के लिये जनता से अधिक से अधिक कर वसूल करने के लिये प्रयत्नशील थे । राजस्व निर्धारण के लिये अलग-अलग तरीके अपनाये गये । 1804 ई0 में केप्टन बेली जैसे ही बाँदा पहुँचा वैसे ही उसने ऊँची से ऊँची दरों का निर्धारण किया ।[26]

---

24. ड्रेक ब्रोकमैन, डी0एल0, झाँसी गजेटियर, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-136.
25. जेनकिन्सन, ई0जी0, झाँसी सेटिलमेन्ट रिपोर्ट, इलाहाबाद, 1871, पृष्ठ-108.
26. ड्रेक ब्रोकमैन, डी0एल0, बाँदा गजेटियर, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-132.

यह दरें इतनी ऊँची थीं कि एक ही वर्ष पश्चात् बाध्य होकर इसमें कटौती करनी पड़ी ।[27] इस दुखद घटना का अन्त यहीं नहीं हुआ बल्कि बाद में राजस्व अधिकारियों ने इन दरों में निरन्तर वृद्धि जारी रखी । लगातार पड़ रहे अकालों तथा प्राकृतिक आपदाओं से किसान पहले से ही परेशान थे । आश्चर्य की बात यह है कि उन्हें राहत देने के स्थान पर सरकार ने राजस्व की बढ़ी हुई दरों को तेजी से वसूल करने का आदेश दिया ।[28]

बाँदा के कलेक्टर कैडिल ने राजस्व की उच्च दरों के निर्धारण की तीखी आलोचना करते हुये कहा, "ऐसा प्रतीत होता है कि हमारा प्रशासन राजस्व वसूली के तरीकों में उन अमानुषिक परम्पराओं का पालन कर रहे हैं जो किसी काल में अत्याचारी शासकों द्वारा किये जाते रहे हैं ।"[29]

झाँसी तथा ललितपुर जिलों की भी यही स्थिति रही । समय-समय पर राजस्व अधिकारियों के स्थानान्तरण से इन जिलों में भी कर-निर्धारण की एक समान नीति नहीं अपनाई जा सकी ।[30] यह उल्लेखनीय है कि कैप्टन जोर्डन ने जहाँ झाँसी जिले में भूमि के उत्पादन के आधार पर कर का निर्धारण किया था, वहीं अन्य अधिकारियों ने

---

27. ड्रेक ब्रोकमेन, डी०एल०, बाँदा गजेटियर, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-132.
28. कैडिल, ए०, सेटिलमेन्ट रिपोर्ट ऑफ बाँदा, पृष्ठ-14.
29. वही.
30. पाठक, एस०पी०, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-111.

भूमि की किस्म के आधार पर लगान की दरें निर्धारित कीं। आश्चर्य की बात तो यह थी कि राजस्व की दरें कहीं कम थीं तो कहीं ज्यादा। एक ही परगनें में कई गाँवों की राजस्व की दरों के निर्धारण में भिन्नता दिखाई पड़ती है।[31] जालौन तथा हमीरपुर में भी यही स्थिति थी। करों की कठोरता के कारण किसान अपनी भूमि बेचने लगे। कहीं पर तो इतनी बुरी स्थिति हुई कि ऋण से ग्रस्त किसानों के पास बीज खरीदने के लिये भी पैसे नहीं थे।[32] 1855 ई0 में जालौन जिले की स्थिति का वर्णन करते हुये बाकमेन ने लिखा था कि जालौन जिले का $\frac{1}{6}$ भाग खेती की परिधि से बाहर हो गया है।[33]

यह कहना गलत नहीं होगा कि राजस्व की कठोर दरें 1857 ई0 के विद्रोह का कारण बनी। कठोर राजस्व निर्धारण 1858 ई0 के बाद भी जारी रहा। फलतः बुन्देलखण्ड में गरीबी, भुखमरी तथा बेरोजगारी में निरन्तर वृद्धि हुई।

बुन्देलखण्ड का आर्थिक शोषणः

1804 ई0 में बुन्देलखण्ड में अंग्रेजी शासन की स्थापना बेसिन

---

31. जेनकिन्सन, ई0जी0, झाँसी सेटिलमेन्ट रिपोर्ट, इलाहाबाद, 1871, पृष्ठ-105.
32. एटकिन्सन, ई0टी0, बुन्देलखण्ड गजेटियर, पृष्ठ-219.
33. वही.

की सन्धि द्वारा हुई । 1947 ई0 तक विदेशी शासन पूरे देश की ही भाँति इस क्षेत्र में भी छाया रहा । यहाँ की केन्द्रीय स्थिति सामाजिक महत्व तथा शौर्यपूर्ण इतिहास के कारण ही विदेशी शासक इस क्षेत्र में अपना पूर्ण नियन्त्रण स्थापित करना चाहते थे और इस दिशा में उन्हें सफलता भी प्राप्त हो गई । अंग्रेजी शासन काल में पूरे देश का आर्थिक शोषण हुआ और बुन्देलखण्ड भी इसका अपवाद नहीं था । धीरे-धीरे ईस्ट इंडिया कम्पनी द्वारा इंग्लैण्ड में हो रहे उत्पादन तथा व्यापारिक वस्तुओं को इस क्षेत्र में प्रवेश दिलाया गया । अतः शीघ्र ही विदेशी कपड़े , लोहे तथा अन्य जरूरत की लगभग सभी चीजें, मानचेस्टर, लीवरपूल, लंकाशायर बरमिंघम आदि औद्योगिक नगरों से लाकर पूरे देश की ही भाँति बुन्देलखण्ड में भी इसकी बिक्री प्रारम्भ की गई ।

विदेशी वस्तुओं की बिक्री को प्रसिद्ध बनाने के लिये इस बात की आवश्यकता महसूस की गई कि यहाँ के उद्योग तथा धन्धों का विनाश किया जाये और यदि इस क्षेत्र का व्यापार चौपट हो जायेगा तो ऐसी स्थिति में लोगों को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये इंग्लैण्ड के उद्योग पर आधारित होना पड़ेगा ।सरकार की इस नीति के परिणाम स्वरूप लिटन जैसे गवर्नर जनरल के समय इंग्लैण्ड से भारत आने वाली वस्तुओं पर से कर या तो बिल्कुल नाम मात्र कर दिया गया अथवा बिल्कुल ही समाप्त कर दिया गया । साथ

ही विदेशी व्यापार को प्रोत्साहन देने के लिये यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि इस क्षेत्र में हो रहे औद्योगिक उत्पादनों तथा कुटीर उद्योग धन्धों को नष्ट कर दिया जाये। इसी नीति के अन्तर्गत बुन्देलखण्ड के उद्योग तथा धन्धों का विनाश कर दिया गया।

बुन्देलखण्ड में नील उद्योग का विनाश:

अंग्रेजी शासन काल में बुन्देलखण्ड की अच्छी किस्म की मार-भूमि में अल नामक पौधे की खेती की जाती थी।[34] इस पौधे की जड़ को खोदकर तथा उसे भट्ठियों में जलाकर विभिन्न प्रकार के रंगों का निर्माण किया जाता था जिसका उपयोग वस्त्रों के रंगने के कार्य में होता था।[35] यह रंगाई उद्योग इस क्षेत्र में मुख्यतः मऊरानी पुर तथा उसके आस-पास के क्षेत्रों तक फैला हुआ था। इस क्षेत्र में एक प्रकार के वस्त्र की बुनाई होती थी। जिसे खरुआ वस्त्र उद्योग के नाम से पुकारा जाता है।[36] खरुआ उद्योग का प्रधान केन्द्र मऊरानीपुर में स्थित था। इस कपड़े की रंगाई में जो विभिन्न प्रकार के रंग प्रयोग होते थे वे अल पौधे की जड़ को पका कर तैयार किये जाते थे। उन दिनों यह बड़ा ही प्रसिद्ध उद्योग था जिससे इसकी खेती करने वाले किसान लाभान्वित होते रहते थे।

---

34. एटकिन्सन, ई०टी०, बुन्देलखण्ड गजेटियर, पृष्ठ-252.
35. पाठक, एस०पी०, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-57.
36. वही.

अल नामक पौधे की खेती अच्छे किस्म की भार-भूमि में की जाती थी और लगभग एक एकड़ भूमि में इस पौधे की 10 मन जड़ का उत्पादन हो जाता था ।[37] 1873 में यह अनुमान लगाया गया था कि यह जड़ 8 रुपये प्रति मन के हिसाब से बेची जाती थी।[38]

यह बड़े आश्चर्य का विषय है कि यह पौधा जो कि यहाँ के कृषकों के लिये आमदनी का एक प्रमुख स्रोत था उसकी खेती का पतन अंग्रेजी शासन काल में हुआ । ऐसा प्रतीत होता है कि अंग्रेजी शासक इस क्षेत्र के रंग उद्योग को नष्ट करना चाहते थे । इसके पीछे उनका इरादा यह था कि इंग्लैण्ड में जिस रंग का उत्पादन हो रहा है उसे भारत में बेचा जाये । यही कारण था कि अल पौधे की खेती को अंग्रेजी शासकों का संरक्षण नहीं मिला ।

झाँसी जिले के दूसरे बन्दोबस्त के समय 1892 ई0 में हूपर ने लिखा था कि इस पौधे की खेती इस क्षेत्र के किसानों के लिये एक लाभप्रद उद्योग था, लेकिन 1892 तक इसकी खेती काफी कम हो गई । परिणाम स्वरूप झाँसी, हमीरपुर, जालौन तथा बाँदा के किसानों को आर्थिक रूप से भारी नुकसान हुआ ।[39] मऊरानीपुर का प्रसिद्ध खरुआ वस्त्र उद्योग जो अल पौधे के रंग से रंगा जाता था, उसको भी गहरा

---

37. एटकिन्सन, ई0टी0, बुन्देलखण्ड गजेटियर, पृष्ठ-252.
38. वही.
39. इम्पे, डब्लू0एच0एल0 तथा मेस्टन, जे0एस0, झाँसी सेटिलमेन्ट रिपोर्ट, इलाहाबाद, 1892, पृष्ठ-3.

धक्का लगा । अल पौधे की खेती को नष्ट होने के निम्नलिखित कारण प्रतीत होते हैं- पहला, इस पौधे की खेती में लाभ का अनुपात कम था। दूसरा, इस पौधे की खेती की देख-रेख करने की बहुत ही आवश्यकता थी, क्योंकि इसमें कीड़े भी लग जाते थे । तीसरा, इस पौधे की जड़ें काफी गहराई में जातीं थीं तथा इनकी खुदाई के लिये काफी पैसा खर्च करना पड़ता था ।[40] इसके साथ ही सरकार की ओर से अल पौधे की खेती को हतोत्साहित किया गया । अतः नील उद्योग पूर्णतः नष्ट हो गया ।

कुटीर उद्योग धन्धों का पतनः

जहाँ बुन्देलखण्ड के किसान आर्थिक रूप से नष्ट हो रहे थे, वहीं दूसरी ओर व्यापारी तथा उत्पादक वर्ग भी खुशहाल नहीं था । इसका कारण स्पष्ट था । अंग्रेज अधिकारियों को बुन्देलखण्ड के क्षेत्रीय विकास में कोई रुचि नहीं थी और वे तो इस क्षेत्र को औद्योगिक रूप से पिछड़ा बनाये रखना चाहते थे, ताकि 1857 ई0 के विद्रोह में भाग लेने की उचित् सजा यहाँ के निवासियों को दी जा सके । 1872 ई0 में एटकिन्सन ने लिखा था कि झाँसी जिले में कुल 6,222 व्यक्ति व्यापारिक कार्यों में जुड़े हुये हैं इसके अलावा कुछ ऐसे लोग हैं जो आयात-निर्यात तथा ऋण लेन-देन का काम भी किया करते हैं ।[41]

---

40. एटकिन्सन, ई0टी0, बुन्देलखण्ड गजेटियर, पृष्ठ-252-253.
41. एटकिन्सन, ई0टी0, बुन्देलखण्ड गजेटियर, पृष्ठ-269.

ललितपुर जिले की भी यही स्थिति थी जो 1891 ई0 तक एक पृथक जिला था ।[42] यहाँ कुछ ऐसे जैन व्यापारी थे जो गल्ला, तम्बाकू तथा ऋण के लेन-देन का व्यापार करते थे ।[43] प्राप्त आँकड़ों से प्रतीत होता है कि इस जिले से अन्य क्षेत्रों को मोटा अनाज, दालें, तिलहन, सूती कपड़ा तथा घी का व्यापार यहाँ के लोगों को अधिक प्रेरणा प्रदान नहीं कर सका ।

1880-81 ई0 में झाँसी जिले में 4,49,862 मन के मूल्य का सामान दूसरे जिलों को निर्यात किया गया, लेकिन दूसरी और विदेशी गल्ले के आयात नमक, चीनी, सूती कपड़े की वस्तुयें 7,50,308 मन तक के मूल्य के सामान इस क्षेत्र में मँगाने पड़े । इस प्रकार व्यापार का सन्तुलन बिगड़ता ही चला गया और इस क्षेत्र के लोगों को आयात तथा निर्यात की दृष्टि से कोई लाभ नहीं हुआ ।

मऊरानीपुर का खरूआ वस्त्र उद्योग का पतन:

बुन्देलखण्ड में ब्रिटिश शासन की स्थापना के लगभग 100 वर्ष पूर्व मऊरानीपुर इस सम्भाग के व्यापारिक तथा औद्योगिक केन्द्र के रूप में विकसित हुआ । जेनकिन्सन ने इसके बारे में जानकारी दी है- मऊरानीपुर पहले एक छोटा सा गाँव था, जहाँ लोगों का मुख्य पेशा खेती था । झाँसी के राजा रघुनाथ राव के समय छतरपुर से कुछ

42. एटकिन्सन, ई0टी0, बुन्देलखण्ड गजेटियर, पृष्ठ 347-348.
43. वही.

व्यापारी भागकर मऊरानीपुर आ गये जिन्हें रघुनाथ राव ने संरक्षण प्रदान किया । अतः इन व्यापारियों ने इस क्षेत्र में अपने औद्योगिक प्रतिष्ठान खोलने प्रारम्भ कर दिये ।[44] तभी से यह क्षेत्र व्यापारिक केन्द्र के रूप में विकसित होने लगा ।

मऊ का एक औद्योगिक केन्द्र के रूप में विकसित होने के पीछे क्या कहानी रही है, इसकी विवेचना किये बिना भी हम यह कह सकते हैं कि अंग्रेजी शासन से पूर्व ही यह क्षेत्र अपने खरुआ उद्योग के लिये महत्वपूर्ण हो चुका था । खरुआ वस्त्र एक प्रकार के रंग से रंगा जाता था जिसे अल नामक पौधे की जड़ से पकाया जाता था ।[45] यही कारण था कि अल पौधे की खेती बुन्देलखण्ड के जिलों में काफी प्रसिद्ध हो चुकी थी । एटकिन्सन ने इस खरुआ उद्योग के अन्तर्गत बनाये जाने वाले विभिन्न प्रकार के कपड़ों की विस्तृत सूची दी है जिसे यहाँ आस-पास के बुनकरों द्वारा बुना जाता था । इनकी रंगाई कर देने पर इसे खरुआ कपड़े के नाम से पुकारा जाता था । यह उद्योग इतना विकसित हो चुका था कि 1863 ई0 में डेनियल के अनुसार इस कपड़े का निर्यात लगभग 6 लाख, 80 हजार रुपया वार्षिक की दर से हुआ । मऊरानीपुर के व्यापारी भारत के दूर-दूर क्षेत्रों में अपना सामान बेचते थे । अमरावती, मिर्जापुर, नागपुर, इन्दौर, फर्रुखाबाद, हाथरस, कालपी, कानपुर और दिल्ली जैसे नगर इनके

---

44. पाठक, एस0पी0, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-60.
45. वही.

व्यापारिक सम्बन्धों के प्रमुख केन्द्र थे ।[46]

यह आश्चर्य का विषय है कि खआ वस्त्र उद्योग जो इतना लाभप्रद था वह अचानक नष्ट हो गया । सरकार की ओर से इस उद्योग को कोई प्रोत्साहन नहीं मिला, यहाँ तक कि विदेशी रंग आ जाने के कारण मऊरानीपुर के उद्योग को संरक्षण नहीं मिला तथा निषेधात्मक तरीके अपनाकर सरकारी नीति ने इन उद्योगों के पतन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । इंग्लैण्ड से भारत आने वाले कपड़ों पर कर न होने के कारण वे कपड़े बुन्देलखण्ड के बाजारों में सस्ते दर पर बिकने लगे । ऐसी स्थिति में सरकारी कर से दबा हुआ मऊ का वस्त्र उद्योग पतन की कगार पर पहुँच गया । साथ ही सरकार की ओर से इस उद्योग में निर्मित वस्त्रों के विकास की ओर ध्यान नहीं दिया गया जो इसके पतन का करण हुआ ।[47]

खआ वस्त्र उद्योग के अलावा मऊरानीपुर बुन्देलखण्ड के क्षेत्रों को विभिन्न व्यापारिक सामानों को पहुँचाने तथा उन्हें इकट्ठा करने का प्रमुख केन्द्र भी था । यहीं से दक्षिण बुन्देलखण्ड तथा मध्य भारत के नगरों को तथा हाथरस, फतेहगढ़, कानपुर, अलीगढ़ तथा मिर्जापुर आदि व्यापारिक नगरों को मऊरानीपुर से सामान भेजे तथा खरीदे जाते थे । इन दिनों बन्जारे व्यापारिक

---

46. एटकिन्सन, ई०टी०, बुन्देलखण्ड गजेटियर, पृष्ठ-289.
47. पाठक, एस०पी०, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-61.

सामानों को पहुँचाने व लाने का कार्य करते थे ।[48] धीरे-धीरे झाँसी में रेलवे स्टेशन हो जाने के कारण तथा इसकी केन्द्रीय स्थिति के कारण मऊरानीपुर का व्यापारिक महत्व घटने लगा और झाँसी इस क्षेत्र के आयात तथा निर्यात के लिये प्रसिद्ध हो गया ।

अन्य उद्योगः

वस्त्र उद्योग के अलावा बुन्देलखण्ड में कुछ अन्य कुटीर उद्योग भी थे जिनका पतन अंग्रेजी शासन काल में हुआ । 1825 ई0 में केप्टन जेम्स फ्रैंकलिन ने झाँसी में बनने वाली अच्छी किस्म की कालीन का उल्लेख किया था ।[49] 1844 ई0 में कर्नल स्लीमेन में भी इस क्षेत्र में बनने वाली ऊनी कालीन की प्रशंसा की थी ।[50] लेकिन आगे आने वाले दिनों में सरकार की निषेधात्मक व्यापार की नीति और संरक्षण के अभाव में इस क्षेत्र का यह उद्योग नष्ट हो गया । इसके अतिरिक्त झाँसी जिले के तालबेहट परगने में आस-पास के गाँव में कम्बल बुनाई का कार्य होता था ।[51] भड़ोरा में पीतल तथा लोहे की अनेक कलात्मक वस्तुयें बनाई जाती थीं ।[52] ललितपुर में भी अमेरिकन मिशनरियों ने सुअर की चर्बी से मसक बनाने का कार्य प्रारम्भ किया था ।[53] ऐरच में वहाँ के गाँव के आस-पास के मुसलमान बड़ी ही

---

48. पाठक,एस0पी0, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-62.
49. मेमायर्स ऑफ बुन्देलखण्ड, मई 12, 1825, पृष्ठ-277.
50. ड्रेक ब्राॅक मेन,डी0एल0, झाँसी गजेटियर, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-75, तथा जोशी,ई0बी0, झाँसी गजे0,लखनऊ,1965,पृष्ठ-144.
51. ड्रेक ब्राॅक मेन,डी0एल0, झाँसी गजे0, 1909, पृष्ठ-75.
52. वही.
53. वही.

कलात्मक ढंग की चुनरी बनाते थे।[54] इसके अतिरिक्त ललितपुर में चन्देरी में बनने वाली अच्छी प्रकार की साड़ी जैसा कुटीर उद्योग प्रारम्भ करने के लिये कुछ जुलाहे आकर बस गये थे, लेकिन 1865 ई0 में हैजा फैल जाने के कारण उनमें से अधिकांश जुलाहे मर गये।[55] इसके बाद कभी भी ऐसा प्रयास नहीं किया गया।

बाँदा जिले में भी इसी प्रकार के कुटीर उद्योग थे जिनका विकास करने पर इस क्षेत्र के लोगों को राहत प्रदान की जा सकती थी। यहाँ मोटे सूती कपड़े की बुनाई का कार्य होता था जिसे गजी कहा जाता था। इस कपड़े की रंगाई करके उसे फर्श इत्यादि पर बिछाने के कार्य में लाया जाता था।[56] बाँदा के विभिन्न स्थानों में खाना पकाने के लिये पीतल तथा ताँबे के बर्तन बनाने के कार्य भी होते थे तथा जगह-जगह सोने व चाँदी के अच्छे किस्म के आभूषण बनाये जाते थे।[57] इस जिले के कुछ कस्बों में कम्बल तथा सूती वस्त्र बुनाई के कार्य भी होते थे तथा कहीं-कहीं टाट भी बुना जाता था।[58] 1909 ई0 में ड्रेक ब्राक मैन ने लिखा था कि- बाँदा से जुड़े हुये गाँवों में जैसे- राजापुर, कल्यानपुर और गोंडा आदि स्थानों पर विभिन्न प्रकार के

---

54. इम्पे, डब्ल्यू0एच0एल0, एण्ड मेस्टन, जे0एस0, झाँसी सेटिलमेन्ट रिपोर्ट, इलाहाबाद, 1892, पृष्ठ-23.
55. एटकिन्सन, ई0टी0, बुन्देलखण्ड गजेटियर, पृष्ठ-348.
56. ड्रेक ब्राक मैन, डी0एल0, बाँदा गजे0, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-77.
57. वही.
58. वही.

पत्थरों को काटकर उन पर पालिश करके अलंकृत किया जाता था।[59] कर्वी में सिल्क की कढ़ाई का हस्तशिल्प विकसित दशा में था ।[60] इस जिले का सबसे प्रसिद्ध उद्योग पत्थरों की कटाई तथा पालिश करना था ।[61] केन नदी की तलहटी में जो छोटे किस्म के पत्थर पानी की रगड़ से मुलायम व चिकने हो जाते थे उन्हें लेकर यहाँ के कारीगर पालिश करके उन्हें अच्छी किस्म के चमकीले पत्थरों के रूप में कलात्मक सौन्दर्य प्रदान करते थे ।[62] इन पत्थरों को लकड़ी के टुकड़ों पर एक ऊँची ऊँचाई से मढ़कर अच्छी हस्त निर्मित चीजें बनाई जाती थीं । इस कलात्मक कार्य ने यहाँ के कारीगरों को दिल्ली प्रदर्शनी में पारितोषिक भी प्राप्त किया था ।[63] लेकिन दुर्भाग्यवश अंग्रेजी शासनकाल में उन उद्योगों को कोई संरक्षण नहीं दिया गया । बल्कि सरकार ने निषेधात्मक तरीके अपना कर इन्हें हतोत्साहित किया । आश्चर्य की बात तो यह थी कि सरकार ने बुन्देलखण्ड के व्यापार को नष्ट करने की एक योजना सी बना ली थी । कर्वी स्थित सूती मिल[64] जिसमें बुन्देलखण्ड के आस-पास सूत की कताई होती थी, 1903 ई0 में बन्द हो गई । अतः वहाँ कार्यरत 140 कर्मचारी निकाल दिये गये, इससे बेरोजगारी को बढ़ावा मिला ।[65]

---

59. ड्रेक ब्रोक मैन, डी0एल0, बाँदा गजे0, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-77.
60. वही.
61. वही.
62. वही.
63. वही.
64. केडिल, ए0, सेटिलमेन्ट रिपोर्ट, बाँदा 1881, पृष्ठ-102.
65. वही.

हमीरपुर जिले में भी खआ वस्त्र के निर्माण के कई केन्द्र थे[66] जो अंग्रेजी शासनकाल में नष्ट हो गये। यही स्थिति कुछ अन्य उद्योग धन्धों की भी रही जिसमें जुलाहों द्वारा निर्मित वस्त्र, लोहे, पीतल आदि के बर्तन निर्माण का कार्य, आभूषण निर्माण इत्यादि थे।[67] 1847 ई० में ऐलन ने लिखा था कि हमीरपुर जिले में कपड़ों की रँगाई का कार्य कुछ स्थानों पर होता है जिसमें खआ कपड़े शामिल हैं कहीं-कहीं पर आभूषण निर्माण का कार्य भी होता है। ये सम्पूर्ण उद्योग अंग्रेजी सरकार की निषेधात्मक नीति से नष्ट हो गये।

जालौन में भी अल पौधे की खेती काफी बड़े पैमाने पर की जाती थी। कौंच, कालपी, सैय्यद नगर और कोटरा में अल पौधे की जड़ से जो रँग तैयार किया जाता था उससे वस्त्रों की रँगाई की जाती थी।[68] खआ कपड़े के कई प्रकार होते थे जिनको बड़े ही कलात्मक ढंग से रँगा जाता था। इस प्रकार इस क्षेत्र में स्थित सभी उद्योग धन्धे अंग्रेजी शासन की नीति के कारण नष्ट हो गये जिससे आर्थिक, सामाजिक, पिछड़ापन आया और बेरोजगारी बढ़ी।

---

66. एटकिन्सन, ई०टी०, बुन्देलखण्ड गजेटियर, पृष्ठ-183.
67. वही.
68. वही, पृष्ठ-201.

बुन्देलखण्ड में कपास की खेती का पतन:

अंग्रेजी शासनकाल से पूर्व बुन्देलखण्ड की काली मिट्टी में उच्च किस्म की कपास पैदा होती थी । 1903 ई0 में झाँसी के बन्दोबस्त अधिकारी पिम[69] ने लिखा था "इस जिले में 10.1 प्रतिशत खेती योग्य जमीन में कपास उत्पादन होता है । मोंठ में यह प्रतिशत 10.1 है, जबकि गरौठा में 13.1 प्रतिशत है[70] झाँसी तथा मऊरानीपुर में कपास की खेती अधिक पैमाने पर नहीं होती थी। इसका कारण यह था कि यहाँ कि भूमि इसके लिये विशेष उपयुक्त नहीं थी । ललितपुर जिले की भी यही स्थिति थी[71] जहाँ पर निम्न कोटि की भूमि के कारण इस फसल का उत्पादन अधिक नहीं हो सका। 1874 ई0 में एटकिन्सन ने लिखा था[72] ललितपुर में कपास का जितना उत्पादन होता है वह अत्यन्त कम है इससे केवल स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति होती है बल्कि आस-पास के जिलों से भी ललितपुर में कपास मँगानी पड़ती है ।[73]

जालौन जिले की मार भूमि कपास उत्पादन के लिये अत्यधिक अनुकूल थी । एक एकड़ मार जमीन में 15 मन कच्चा कपास

---

69. पाठक, एस0पी0 झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-55.
70. वही.
71. एटकिन्सन, ई0टी0, बुन्देलखण्ड गजे0, पृष्ठ-316.
72. वही.
73. वही.

होता था । उन दिनों 18=00 रुपये प्रति मन के हिसाब से कपास की बिक्री होती थी ।[74] यह किसानों की आमदनी का अच्छा स्त्रोत था । लेकिन यह एक आश्चर्य का विषय है कि यह उत्पादन लगातार कम होता गया तथा कपास की खेती का लगभग पतन हो गया । कपास उत्पादन के कुछ आँकड़े इस बात की पुष्टि करते हैं । उदाहरण के लिये केवल झाँसी जिले में ही 1865 ई० में यह फसल 35107 एकड़ भूमि में बोई गई, किन्तु 1903 ई० तक आते-आते यह 34363 एकड़ रह गई[75] धीरे-धीरे कपास का उत्पादन और कम होता गया । ऐसा प्रतीत होता है कि गऊरानीपुर, कालपी, कौंच, कोटरा, सैय्यद नगर, ऐरछ आदि स्थानों पर वस्त्रों की रंगाई तथा प्रिन्टिंग निर्माण का कार्य होता था । उसमें बुन्देलखण्ड के ही कपास का प्रयोग होता था । किन्तु जैसे ही उपरोक्त केन्द्रों के उद्योग समाप्त हुये वैसे ही इस क्षेत्र के कपास की माँग कम हुई । इसके अलावा 1903 ई० में कर्वी की सूती मिल भी बन्द हो गई । इससे भी कपास उत्पादकों को धक्का लगा । अतः सरकार द्वारा संरक्षण का अभाव तथा विदेशी कपड़ों के आगमन से बुन्देलखण्ड का कपास उद्योग बन्द हुआ । इससे इस क्षेत्र का सामाजिक, आर्थिक पिछड़ापन निरन्तर बढ़ता गया ।

कपास के अलावा बुन्देलखण्ड के जिलों में तिलहन का भी

---

74. एटकिन्सन, ई०टी०, बुन्देलखण्ड गजे०, पृष्ठ-201.
75. ड्रेक ब्रॉक मैन, डी०एल०, झाँसी गजे०, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-43-44.

अच्छा उत्पादन होता था । इसमें मुख्यतः तिली का उत्पादन उच्च स्तर पर किया जाता था । 1864 ई0 में झाँसी जिले में लगभग 9266 एकड़ में[76] तिली का उत्पादन हुआ । ललितपुर सब-डिवीजन में तिलहन झाँसी से अधिक प्रसिद्ध था । 1869 के बन्दोबस्त के समय यह पता चला कि वहाँ की 10.7 प्रतिशत[77] खेती योग्य जमीन में तिली बोई गई थी । जालौन में तिली का उत्पादन काफी अच्छे पैमाने पर किया जाता था । 1869 ई0 की एक रिपोर्ट से पता चलता है कि इस जिले में 2172 एकड़ जमीन[78] में तिली बोई गई इसके अतिरिक्त अलसी की फसल 2476 एकड़ भूमि[79] में बोई गई । ठीक इसी तरह हमीरपुर तथा बाँदा की स्थिति थी । ऐसा प्रतीत होता है कि तिलहन के उत्पादन में भी किसानों की अभिरुचि कम होती गई । उत्पादन में अधिक लागत तथा कम पारिश्रमिक की प्राप्ति इसका मुख्य कारण था । इस प्रकार कपास तिलहन आदि खेती का पतन अंग्रेजी शासनकाल में हुआ जिससे इस क्षेत्र में गरीबी, बेकारी और मँहगाई बढ़ती गई ।

अकाल तथा प्राकृतिक आपदायेंः

बुन्देलखण्ड में समय-समय पर प्राकृतिक आपदायें जैसे अकाल,

---

76. एटकिन्सन, ई0टी0, बुन्देलखण्ड गजे0, पृष्ठ 250-251.
77. एटकिन्सन, ई0टी0, बुन्देलखण्ड गजे0, पृष्ठ-316.
78. एटकिन्सन, ई0टी0, बुन्देलखण्ड गजे0, पृष्ठ-198.
79. वही.

बाढ़ आदि के कारण न केवल भूमि की ही उर्वरा शक्ति नष्ट हुई बल्कि इससे लोगों को आर्थिक परेशानी तथा गरीबी का सामना करना पड़ा।[80] उन दिनों कृषि ही जीविका का मुख्य साधन था । अतः अकाल पड़ जाने के कारण जो क्षति होती थी उसे पूरा करना सम्भव नहीं था । इसलिये किसानों को कर्ज लेना पड़ा और उन्हें अपनी भूमि ऋणदाताओं को बेच देनी पड़ी ।[81] यद्यपि अंग्रेजी सरकार ने समय-समय पर कुछ सहायता दे देने का प्रयास किया, किन्तु अंग्रेजों द्वारा अपनाये गये ये तरीके न तो सामयिक थे और न ही पर्याप्त ।[82] 1857 ई0 के विद्रोह में जहाँ झाँसी के लोग अंग्रेजों से लड़ रहे थे, वहीं अंग्रेजों का साथ देने वाली ओरछा की रियासत ने न केवल झाँसी पर आक्रमण किया बल्कि यहाँ के आस-पास के गाँवों में बलपूर्वक राजस्व वसूल किये ।[83] दतिया ने भी इसी प्रकार झाँसी की जनता के साथ दुर्व्यवहार किया । पिनकने ने लिखा है कि "ओरछा और दतिया के राजाओं ने झाँसी की सीमाओं में घुसकर वहाँ की जनता से लाखों रुपये कर के रूप में वसूल कर लिये ।[84] अंग्रेजी सरकार ने इस मामले में चुप्पी साध ली, क्योंकि उसे डर था कि यदि इन राजाओं से कुछ कहा जायेगा तो वे अंग्रेजी शासन का विरोध करने लगेंगे ।[85] 1857

80. पाठक, एस0पी0, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-67.
81. वही.
82. वही.
83. वही, पृष्ठ 67-68.
84. रिपोर्ट नम्बर 122, कैम्प झाँसी, 23 अप्रैल, 1858.
85. वही.

ई0 में हुई लूट में झाँसी नगर के धनी लोगों को लूटा गया । यही स्थिति बाँदा की भी रही जहाँ 1858 ई0 में शाँति स्थापित हो जाने के बाद अंग्रेजी सेनाओं ने लूटपाट की ।[86] 20 अप्रैल से 28 अप्रैल तक यह लूट खुले आम चलती रही । बाँदा में शायद ही ऐसा घर रहा होगा जो अंग्रेजी सैनिकों के अत्याचार का शिकार न हुआ हो । यदि कोई भी अच्छी इमारत दिखाई पड़ी या तो उसे गिरा दिया गया या उसे बुरी तरह लूटा गया, क्योंकि अंग्रेजों को यह भय था कि यह क्रान्तिकारियों का निवास रहा होगा ।[87] बाँदा के नवाब अली बहादुर की शाही इमारत को नष्ट कर दिया गया । उसकी सम्पत्ति को भी जब्त कर लिया गया ।[88] निःसन्देह इन सब घटनाओं ने इस क्षेत्र की जनता को आर्थिक उत्पीड़न की कगार पर खड़ा कर दिया गया ।

<u>बुन्देलखण्ड के अकाल:</u>

इस क्षेत्र में अकाल यहाँ के देहात से जुड़े हुये थे चूँकि कृषि वर्षा पर आधारित थी । इसलिये वर्षा कम होने के कारण जो सूखा पड़ता था इससे लोगों की स्थिति असहनीय हो जाती थी ।[89] 1783,

---

86. पाठक, एस0पी0, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-17.
87. श्रीवास्तव, एम0पी0, इण्डियन म्यूटनी, पृष्ठ-122.
88. फारेन सीक्रेट कन्सल्टेशन नं0 326-328, 25 सितम्बर, 1858,
89. एटकिन्सन, ई0टी0, बुन्देलखण्ड गजे0, पृष्ठ-253.

1833, 1847, 1848 आदि वर्षों में बुन्देलखण्ड के जिलों में जो अकाल पड़े उनके भयंकर परिणाम लोगों को भुगतने पड़े ।[90] 1783 ई0 का अकाल तो इतना भयानक था कि आज भी लोग उसे महान चालीसा के नाम से पुकारते हैं ।[91] 1857 ई0 के विद्रोह के बाद इस क्षेत्र का पहला अकाल 1868, 1869 में पड़ा जो अपनी तरह का सबसे भयावह था ।[92] इसे लोग महान् चालीसा के नाम से पुकारते हैं, क्योंकि यह सम्वत् 1925 में पड़ा था ।[93]

सम्वत् 1925 के पड़े अकाल के बारे में हेन्वी ने लिखा है कि इस क्षेत्र में औसत वर्षा 30 से 40 इंच के बीच होती है । 1867 ई0 में 45 इंच 1869 ई0 में 46 इंच पुष्टि हुई किन्तु 1868 ई0 के जून से नवम्बर तक केवल 14 इंच पानी बरसा और वह भी समान रूप से नहीं था । जून में 1.8 इंच, जुलाई में 8.2 इंच, सितम्बर में 2 इंच वर्षा हुई किन्तु अक्टूबर और नवम्बर के महीनों में एक इंच भी पानी नहीं बरसा । दिसम्बर में थोड़ी सी फुहार जरूर हुई, लेकिन वह बिल्कुल ही अपर्याप्त थी ।[94] अकाल, बाढ़ तथा अन्य प्राकृतिक

---

90. एटकिन्सन, ई0टी0, बुन्देलखण्ड गजे0, पृष्ठ-253.
91. सिंह, प्रतिपाल, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, भाग-1, हितचिन्तक प्रेस, वाराणसी, सम्वत् 1985.
92. श्रीवास्तव, एच0एस0, फेमिन्स एण्ड फेमिन पोलिसी ऑफ द गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया, पृष्ठ-94.
93. सिंह, प्रतिपाल, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, भाग-1, हितचिन्तक प्रेस, वाराणसी, सम्वत् 1985.
94. एटकिन्सन, ई0टी0, बुन्देलखण्ड गजे0, पृष्ठ-254.

आपदाओं के अलावा बीमारी का भयंकर प्रकोप भी शुरू हुआ । झाँसी के डिप्टी कमिश्नर ने बड़े ही मार्मिक ढंग से इसका वर्णन किया है- "लोग कमजोर तथा भूखे प्यासे गर्मी में पानी पीते ही जमीन पर गिर पड़ते थे और मर जाते थे ।[95] 1869 ई० में वर्षा ऋतु में हैजे का प्रकोप हुआ जिसमें केवल झाँसी जिले से ही लगभग 20 हजार 331 लोग मर गये"।[96] ललितपुर जिले की स्थिति और खराब थी । 1874 ई० में एटकिन्सन ने लिखा था कि- "उत्तर पश्चिमी प्रान्त में बहुत ही कम ऐसे जिले रहे होंगे जो अकाल से इस प्रकार प्रभावित रहे हों, जिस प्रकार झाँसी तथा ललितपुर के जिले" ।[97]

जालौन जिले में भी 1868, 1869 का अकाल विनाश-लीला करने में सफल रहा । उरई तथा जालौन परगने सबसे ज्यादा प्रभावित हुये । ब्रिटिश सरकार को 28 प्रतिशत राजस्व कर की वसूली रोकनी पड़ी ।[98] इसी प्रकार 1895 ई० और 1896 ई० में अकाल पड़े जिससे बुन्देलखण्ड के जिलों की स्थिति निरन्तर खराब होती चली गई, चूँकि इस क्षेत्र में खरीफ की फसल रबी की अपेक्षा बहुत अधिक ली जाती थी । वर्षा के अभाव में यह फसल नष्ट हुई जिससे कृषकों को बहुत अधिक हानि हुई । स्थिति उस समय अधिक गम्भीर हो गई जब सितम्बर

---

95. एटकिन्सन, ई०टी०, बुन्देलखण्ड गजे०, पृष्ठ-254.
96. वही.
97. वही.
98. ड्रेक ब्रॉक मैन, डी०एल०, बाँदा गजे०, 1909, पृष्ठ- 64.

1897 ई0 में गेहूँ की कीमत 9 सेर 4 छटाँक प्रति रुपया हुई ।[99] निःसन्देह तत्कालीन परिस्थिति में इससे क्षेत्र की अर्थव्यवस्था को काफी धक्का लगा ।

अकाल के अतिरिक्त अन्य प्राकृतिक आपदायें जैसे-टिड्डी, पाला, गेरु आदि भी समय-समय पर कृषि व्यवस्था को प्रभावित करती रही । 1894, 1895 में ललितपुर में ओला पड़ जाने के कारण फसल को काफी नुकसान हुआ ।[100]

सरकार द्वारा अकाल पीड़ितों की सहायता के उपाय:

ब्रिटिश शासनकाल में अकाल से पीड़ित लोगों की सहायता के लिये कुछ नाममात्र के कार्य किये गये ।[101] झाँसी में 1868 ई0 में एक सहायता समिति बनाई गई जिसमें कुछ स्थानीय लोगों के अलावा सैनिक तथा राजस्व विभाग के अधिकारी थे ।[102] अक्टूबर 1862 में ग्वालियर की रियासत ने 400 रुपये झाँसी जिले की सहायता के लिये दिये ।[103] झाँसी, मऊरानीपुर, बरुआसागर

---

99. ड्रेक ब्रॉक मेन, डी0एल0, झाँसी गजे0, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ 63-64.
100. वही, पृष्ठ-67, तथा ड्रेक ब्रॉक मेन, डी0एल0, बाँदा गजे0, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-70.
101. पाठक, एस0पी0, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-72.
102. वही.
103. एटकिन्सन, ई0टी0, बुन्देलखण्ड गजे0, पृष्ठ-255.

तथा बबीना में गरीबों की मदद करने के लिये कुछ केन्द्र खोले गये ।[104] इसी समय सिंचाई के लिये मऊ परगना में बाँध बनाये गये । इन कार्यों में लगभग 9,42,465 लोगों को नियुक्त किया गया जिस पर कुल 71,881 रुपये खर्च हुये ।[105] राजस्व की वसूली भी स्थगित कर दी गई तथा कुयें, ट्यूबवेल इत्यादि बनाने के लिये ऋण दिये गये ।[106] ललितपुर में भी तालबेहट, झाँसी, बानपुर तथा महरौनी में सहायता केन्द्र खोले गये ।[107] 1895, 1896 में सार्वजनिक निर्माण विभाग से अकाल पीड़ितों को काम के बदले वेतन देने का प्रबन्ध किया गया । किन्तु यह सहायता कुछ ही दिनों बाद बन्द कर दी गई ।[108] 1897 ई० के भी अकाल में लोगों की इसी तरह कुछ सहायता प्रदान की गई ।[109]

सरकार द्वारा दी गई सहायता की विवेचना यह स्पष्ट करती है कि केवल अस्थायी तौर पर ये राहत कार्य प्रदान किये गये। इस क्षेत्र को भविष्य में अकालों से बचाने के लिये कुछ निश्चित स्थायी कार्यक्रमों की आवश्यकता थी । यदि बुन्देलखण्ड में सिंचाई का उचित

---

104. एटकिन्सन, ई०टी०, बुन्देलखण्ड गजे०, पृष्ठ-255.
105. पाठक, एस०पी०, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल , पृष्ठ-73.
106. वही.
107. एटकिन्सन, ई०टी०, बुन्देलखण्ड गजे०, पृष्ठ-319.
108. ड्रेक ब्रॉक मैन, डी०एल०, बाँदा गजे०, पृष्ठ-65 तथा इम्पीरियल गजे०, ऑफ इण्डिया, कलकत्ता, 1908, पृष्ठ-56.
109. वही.

बन्दोबस्त रहा होता तो यह निश्चित था कि निरन्तर पड़ने वाले अकालों से हो रही क्षति को कुछ कम किया जा सकता था ।

उपरोक्त अकालों के दूरगामी परिणाम निकले । इससे कृषकों के मस्तिष्क में अनिश्चितता पैदा हुई । अधिकाँश लोगों ने अपने क्षेत्रों को खाली कर मालवा तथा अन्य उपजाऊ क्षेत्रों में शरण ली । बाँदा के करवी सब डिवीजन में अकालों की वजह से लोगों ने अपने क्षेत्र खाली कर दिये थे ।[110] यही स्थिति झाँसी की भी रही । 1872 में झाँसी की जनसंख्या में 12.42 प्रतिशत हानि हुई ।[111] फलतः अधिकाँश खेतों में कोई खेती करने वाला ही नहीं था । ललितपुर जिला सबसे अधिक प्रभावित रहा । स्टकिन्सन ने लिखा है, "इस जिले में खेती योग्य अधिकाँश भूमि खाली पड़ी है किन्तु व्यक्ति तथा जानवरों की कमी के कारण खेती नहीं हो पा रही है ।[112] इन अकालों का मनोवैज्ञानिक प्रभाव यह हुआ कि लोग खेती को जुआ समझ बैठे, इससे उसकी ओर झुकाव कम हुआ ।[113]

काँस, घास का उद्गमः

इलाहाबाद प्रखण्ड के कमिश्नर राईट ने 1892 में अपनी

---

110. ट्रैक ब्रॉक मेन, डी०एल०, बाँदा गजे०, पृष्ठ-69.
111. पाठक, एस०पी०, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-74.
112. स्टकिन्सन, ई०टी०, बुन्देलखण्ड गजे०, पृष्ठ-320.
113. पाठक, एस०पी०, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-74.

एक टिप्पणी में लिखा था कि "कोई भी व्यक्ति बुन्देलखण्ड के बारे में तब तक नहीं बोल सकता, जब तक कि वहाँ की काँस, घास से उत्पन्न असन्तोष को न समझ ले।[114] वास्तव में बुन्देलखण्ड के आर्थिक पिछड़ापन के लिये काँस, घास का उदय एक महत्वपूर्ण कारण था। इससे भूमि की उर्वरा शक्ति नष्ट हो जाती थी तथा कृषकों में अराजकता व्याप्त होती थी। यह एक प्रकार की ऐसी लम्बी घास थी जो जुताई के अभाव में खेतों में काफी तेजी से उग जाती थी। इसकी जड़ें 6 या 7 फीट गहराई तक चली जाती थीं और इस प्रकार हल चलाने में बाधा उत्पन्न करती थीं।[115] 10 तथा 15 वर्षों के बाद इसकी जड़ों से दूसरी घास निकल आती थी और तभी यह भूमि जोतने योग्य हो सकती थी।[116] झाँसी के डिप्टी कमिश्नर जेनकिन्सन ने 1871 में इस घास के उग आने के कारण कृषकों को हुई व्यापक हानि का विस्तृत वर्णन किया है।[117] अतः परेशान हुये कृषकों में इतनी अराजकता की स्थिति पैदा हुई कि वे बाध्य होकर गाँव खाली कर गये और इस गाँव की भूमि का प्रबन्ध अंग्रेज सरकार को अपने हाथों में लेना पड़ा।[118]

सम्भवतः अत्यधिक वर्षा इस घास के उत्पन्न होने के

---

114. इम्पे, डबल्यू0एच0एल0 तथा मेस्टन, जे0एस0, झाँसी सेटिलमेन्ट रिपोर्ट, इलाहाबाद, 1892, पृष्ठ-2.
115. इम्पेरियल गजे0, ऑफ इण्डिया, भाग-1, पृष्ठ-91.
116. वही.
117. जेनकिन्सन, ई0जी0, झाँसी सेटिलमेन्ट रिपोर्ट, इलाहाबाद, 1871, पृष्ठ-92.
118. वही.

कारण होती थी । 1868 की व्यापक वृद्धि के बाद यह घास काफी मात्रा में उत्पन्न हुई । 1872 में केवल झाँसी जिले में ही इस घास ने 40 हजार एकड़ भूमि को तीव्रता से घेर लिया था ।[119] 1892 में जब झाँसी जिले का दूसरा बन्दोबस्त किया जा रहा था उस समय बन्दोबस्त अधिकारी को दो महत्वपूर्ण समस्याओं का सामना करना पड़ा ।[120] पहला जमींदारों का ऋण ग्रस्त होना, दूसरा काँस घास का प्रकोप । इस घास से खेती को इतनी क्षति हुई जिसके कारण सरकार को झाँसी जिले में 6 लाख रुपये के राजस्व की हाँनि हुई ।[121]

आगे आने वाले वर्षों में भी काँस ने इस क्षेत्र की कृषि व्यवस्था को क्षति ग्रस्त किया । 1896, 1897 में झाँसी जिले के अनेक क्षेत्रों में यह घास पुनः प्रगट हुई ।[122] 1886, 1887 में जालौन में सरकार को राजस्व की वसूली इसलिये रोक देनी पड़ी थी कि काँस से प्रभावित क्षेत्रों के कारण कृषि में कोई उत्पादन नहीं हो सका था ।[123] बाँदा जिले में भी 1867, 1868, 1869, 1871 आदि वर्षों में इस घास ने कृषि व्यवस्था को हाँनि पहुँचाई ।[124] 1887, 1888 में अधिक वर्षा होने के कारण इस जिले में पुनः घास

---

119. ड्रेक ब्रॉकमेन, डी०एल०, झाँसी गजे०, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-140.
120. हुम्फे, डब्ल्यू०एच०एल० तथा मेस्टन, जे०एस०, झाँसी सेटलमेन्ट रिपोर्ट , इलाहाबाद, 1892, पृष्ठ-56.
121. वही.
122. पाठक, एस०पी०, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-75.
123. ड्रेक ब्रॉकमेन, डी०एल०, जालौन गजे०, 1909, पृष्ठ-98.
124. केडिल, ए०, सेटिलमेन्ट रिपोर्ट आफ बाँदा, इलाहाबाद, 1881, पृष्ठ-6.

तेजी से उग आयी । बाँदा पैलानी, बबेरु और कमासीन परगने बुरी तरह प्रभावित हुये ।[125] यहाँ के कलेक्टर ने अपनी रिपोर्ट में लिखा कि "इस घास से हुई क्षति के कारण 1297 फसलों में राजस्व की वसूली रोकनी पड़ी ।[126] पहली बार डब्ल्यू0 ई0 नीले ने इस सम्बन्ध में कुछ सुझाव दिये जिसके अन्तर्गत इस घास को जलाना, गहरी खुदाई अथवा अच्छी तरह जुताई करना या खेत को वैसे ही खाली छोड़ देना आदि तरीके शामिल थे ।[127] सहारनपुर के वनस्पति विभाग के सुपरिन्टेन्डेन्ट ने इस सम्बन्ध में एक और सुझाव दिया ।[128] उनका यह मत था कि जिन खेतों में बराबर उर्वरक का प्रयोग किया जा रहा हो वहाँ इस घास के पैदा होने की कम सम्भावना रहती है ।

काँस के अतिरिक्त इस क्षेत्र में भूमि कटाव भी बराबर होते रहे हैं जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति नष्ट होती रही है । यही कारण था कि इस क्षेत्र में विशेषतः ब्रिटिश शासन काल में अच्छी खेती नहीं की जा सकी । झाँसी के बन्दोबस्त अधिकारी ने लिखा था कि "1864 से पहले इस क्षेत्र में अच्छी खेती होती थी, किन्तु लगातार भूमि-कटाव के कारण कुछ गाँवों की उर्वरा शक्ति

---

125. मुग्गीज, ई0बी0 एम0 फाइनल रिपोर्ट आन द सेटिलमेंट रिपोर्ट बाँदा, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-19.
126. वही.
127. हमीरपुर सेटिलमेन्ट रिपोर्ट, इलाहाबाद, 1880, पृष्ठ-118.
128. इम्पे, डब्ल्यू0एच0एल0 तथा मैस्टन, जे0एस0, झाँसी सेटिलमेंट रिपोर्ट, इलाहाबाद, 1892, पृष्ठ-8.

नष्ट होती गई । फलतः 1892 तक आते-आते ये गाँव खेती की दृष्टि से बेकार साबित हो गये ।[129] झाँसी जिले की गरौठा तहसील जहाँ अच्छे किस्म की खेती योग्य जमीन थी वह कटाव के कारण काफी कम हो गई ।[130] ललितपुर में यद्यपि बेतवा ने अधिक कटाव पैदा नहीं किया, किन्तु शहजाद, सजाम, जामिनी नदियों ने पर्याप्त भूमि कटाव किये हैं ।[131]

सरकार की ओर से इन कटावों को रोकने के लिये अल्प प्रयास किये गये । 1880 में झाँसी तहसील के रक्शा गाँव में एक बाँध के निर्माण की योजना बनाई गई ।[132] किन्तु इसमें अधिक धनराशि खर्च होने की सम्भावना थी अतः सरकार ने यह प्रयास छोड़ दिया ।

इस प्रकार अकाल तथा अन्य प्राकृतिक आपदायें व काँस के उद्‌भव, से कटाव इस क्षेत्र की कृषि व्यवस्था प्रभावित होती रही।

सिंचाई की सुविधाओं का अभावः

अँग्रेजी शासनकाल में पूरे बुन्देलखण्ड में सिंचाई की

---

129. इम्पे, डब्ल्यू०एच०एल० तथा मेस्टन, जे०एस०, झाँसी सैटिलमेन्ट रिपोर्ट, इलाहाबाद, 1892, पृष्ठ-10.

130. वही.

131. पिम, ए०डब्ल्यू०, फाइनल सेटिलमेंट रिपोर्ट ऑफ द झाँसी इलाहाबाद, 1907, पृष्ठ-3.

132. इम्पे, डब्ल्यू०एच०एल० तथा मेस्टन, जे०एस०, झाँसी सैटिलमेन्ट रिपोर्ट, इलाहाबाद, 1907, पृष्ठ-11.

सुविधाओं का समुचित विकास नहीं किया जा सका । इसकी पुष्टि इस तथ्य से होती है कि सरकार ने 1862 में बुन्देलखण्ड सिंचाई विभाग का उन्मूलन कर दिया ।[133] इससे पहले चन्देलों तथा बुन्देलाओं के काल में बुन्देलखण्ड में सिंचाई के समुचित साधन उपलब्ध थे । 1825 में कैप्टन फैंकलिन ने अपने संस्मरण में लिखा था "बुन्देला राजाओं ने इस क्षेत्र में सिंचाई के साधन के विकास के लिये काफी धन खर्च किया था ।[134] मराठा काल में भी सिंचाई के समुचित साधन इस क्षेत्र में विद्यमान थे, लेकिन अँग्रेजी शासन काल में इस ओर ध्यान नहीं दिया गया । 1864 में जेनकिन्सन ने अपने द्वारा किये जा रहे झाँसी के बन्दोबस्त के समय लिखा था कि कृषकों को सिंचाई की सुविधाओं के विकास के लिये सरकारी सहायता तथा ऋण प्रदान किये जाना चाहिये । कर्नल डिक्सन ने भी राजपूताने में इसी तरह के प्रयास किये थे । जेनकिन्सन ने झाँसी जिले के तालाबों, झीलों आदि की सूची बनाते हुये यह आशा व्यक्त की थी इनका पुनर्निर्माण किया जाना चाहिये, लेकिन आश्चर्य का विषय है कि सरकार ने इस ओर तनिक भी ध्यान नहीं दिया ।

लगातार पड़ रहे अकालों से सरकार की निगाहें खुली । 1868-69 में सरकार को जेनकिन्सन की रिपोर्ट की उपयोगिता

---

133. जेनकिन्सन, ई०जी०, झाँसी सेटिलमेन्ट, इलाहाबाद, 1871, पृष्ठ 71-72.

134. मेमायर्स ऑफ बुन्देलखण्ड, 21 मई, 1825, पृष्ठ-274.

दिखाई पड़ी ।[135] यह उल्लेखनीय है कि वर्षा ऋतु में इस क्षेत्र में जो पानी बर्बाद हो रहा था उसी को इकट्ठा करके सिंचाई के लिये उपयोग किया जाता तो इससे सरकार को लगभग 4 लाख रुपये केवल पानी की बिक्री के रूप में ही प्राप्त होते । कर्नल स्मिथ ने इसी प्रकार का आकलन किया था ।[136]

इन तमाम सुझावों के बावजूद भी बुन्देलखण्ड में सिंचाई का समुचित विकास नहीं किया जा सका । बेतवा नहर के निर्माण का सुझाव जो 1835 में दिया गया था उसकी योजना 1881 से पहले स्वीकृत नहीं हो सकी ।[137] इसी तरह बांदा में भी केन नदी से एक नहर निकालने की योजना पर 1870 में विचार किया गया ।[138] इस योजना की रूपरेखा एक्जीक्यूटिव इंजीनियर रिचर्डसन ने इस उद्देश्य से की थी कि इस क्षेत्र में लगातार पड़ रहे अकालों से गांवों को राहत पहुँचाई जा सके।[139] चूँकि सरकार की नीति अधिक लागत वाली योजनाओं को क्रियान्वित न करने की थी । अतः इस योजना को काट-छांट के

---

135. पाठक,एस0पी0, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-80.
136. ऐटकिन्सन,ई0टी0, बुन्देलखण्ड गजे0, पृष्ठ-243.
137. ड्रेक ब्राॅक मैन, डी0एल0, झाँसी गजे0, इलाहाबाद,1909, पृष्ठ-54.
138. ड्रेक ब्राॅक मैन, डी0एल0, बाँदा गजे0, इलाहाबाद,1909, पृष्ठ-59.
139. वही.

बाद काफी बाद में लागू किया गया और 1896-97 से पहले इसका कार्य प्रारम्भ नहीं हुआ ।[140] इस प्रकार सिंचाई सुविधाओं के अभाव के कारण बुन्देलखण्ड की कृषि व्यवस्था को गहरा आघात पहुँचा ।

<u>सामाजिक, आर्थिक, पिछड़ापन तथा अंग्रेजों के विरुद्ध घृणा की भावना:</u>

1804 से लेकर 1947 तक ब्रिटिश शासनकाल में बुन्देलखण्ड सामाजिक तथा आर्थिक रूप से पिछड़ापन स्थिति का शिकार रहा। यहाँ के लघु उद्योग, धन्धों के विनाश से बेरोजगारी तथा गरीबी निरन्तर बढ़ती गई । कर्वी की सूती मिल तथा कालपी की सूती मिल, एरच की चुनरी, झाँसी का कालीन उद्योग, मऊरानीपुर का प्रसिद्ध खद्दा वस्त्र उद्योग, हमीरपुर, जालौन आदि क्षेत्रों में भी फैला हुआ खद्दा तथा नील उद्योग के विनाश से इस क्षेत्र का आर्थिक पिछड़ापन बना रहा । ऐसा प्रतीत होता है कि यहाँ की स्वतन्त्रता प्रिय जनता से अंग्रेज शासक चिढ़े हुये थे । 1857 के विद्रोह में झाँसी की रानी, मर्दनसिंह, बाँदा के नवाब अलीबहादुर आदि नेताओं के नेतृत्व में बुन्देलखण्ड की जनता ने अंग्रेजों को गहरा आघात पहुँचाया था । यद्यपि 1857 के विद्रोह का दमन हो गया और

---

140. ड्रेक ब्रॉक मेन, डी०एल०, बाँदा गजे०, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-59.

1858 में अंग्रेजों को इस क्षेत्र में शासन स्थापित करने में सफलता मिली लेकिन अंग्रेज इस क्षेत्र की जनता से बदला लेने पर तुले हुये थे वे जानते थे कि यहाँ की विद्रोही जनता को सजा देने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि बुन्देलखण्ड को आर्थिक रूप से पिछड़ा बनाये रखा जाये । यह नीति 1858 से जारी रही । राजस्व नीति की कठोरता ने अंग्रेजों की अपनी योजना के क्रियान्वयन में भरपूर मदद प्रदान की ।

अंग्रेजी नीति का यह परिणाम निकला कि लोगों के दिमाग में दमन तथा अत्याचार की छाया निरन्तर बनी रही। परिणाम स्वरूप यहाँ के लोगों ने अंग्रेजी शासन से घृणा करना शुरू कर दिया । लोग अंग्रेजी शासन को अपने कष्ट का कारण समझते थे । अतः लोग अंग्रेजों को कुत्ता कहकर पुकारने लगे । झाँसी में इलाहाबाद बैंक चौराहे के समीप स्थित झाँसी के तत्कालीन सुपरिन्टेन्डेन्ट मेजर एस०डब्ल्यू० पिनकने के स्मारक को आज भी लोग कुत्तो की टोरिया के नाम से पुकारते हैं । इतना ही नहीं बल्कि अन्य भी स्मारक जो कि अंग्रेज अधिकारियों की यादगार से बनाया गया उसे भी घृणा की दृष्टि से देखा जाता रहा ।

इस प्रकार बुन्देलखण्ड में अंग्रेजी शासन के परिणाम स्वरूप घृणा का वातावरण पैदा हुआ । बुन्देलखण्ड से बाहर के

लोगों को लाकर बसाना शुरु किया गया । झाँसी छावनी में स्थित अनेकों ठेकेदार बाहर से लाकर बसाये गये जो सेनाओं की आवश्यकताओं की पूर्ति किया करते थे । यहाँ के लोग अंग्रेजी योजनाओं में भी सहयोग नहीं करते थे । यह उल्लेखनीय है कि लड़कियों की शिक्षा के लिये सरकार की ओर से जब स्कूल खोला गया तो थोड़े ही दिन बाद लड़कियों की संख्या कम होने से सरकार को स्कूल बन्द करना पड़ा ।[14] यह इस बात का प्रमाण है कि लोग सरकार के किसी भी मामले में सहयोग देने के लिये तैयार नहीं थे ।

ऐसी परिस्थिति में अंग्रेजों के लिये यह आवश्यक हुआ कि इस क्षेत्र में एक वफादार प्रजा का निर्माण किया जाये और इस उद्देश्य से ईसाई धर्म प्रचारकों को बसने के लिये प्रेरित किया गया ताकि वे ईसाइयों के नाम पर वफादार हों । इसी पृष्ठ भूमि में बुन्देलखण्ड के पिछड़े क्षेत्र में ईसाई मिशनरियों ने अपना कार्य शुरु किया जिन्हें सरकार की ओर से संरक्षण और सुविधायें मिली । निःसन्देह इस धार्मिक वातावरण के लिये मुख्य उद्देश्य ब्रिटिश शासन को स्थायित्व देना था ।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि मुगल काल में बुन्देलखण्ड के लोगों का जीवन सामाजिक, आर्थिक दृष्टि से अच्छा था किन्तु

---

14. पाठक, एस0पी0, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-153.

ब्रिटिश शासन काल में आर्थिक शोषण उद्योग-धन्धों का पतन, अधिक राजस्व वसूली की नीति तथा जनकल्याण की भावना के अभाव के कारण इस क्षेत्र में गरीबी तथा भुखमरी स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हुये इन कठिन परिस्थितियों के बावजूद भी बुन्देलखण्ड में सर्व धर्म-समन्वय, परस्पर सद्भाव, भाई-चारा आदि की परम्परायें यथावत् बनी रही । इन सभी चीजों से राष्ट्रीय एकता के तत्व मजबूत हुये ।

<u>स्थापत्य शैली में समन्वय एवम् बुन्देली प्रभावः</u>

बुन्देलखण्ड के अधिकांश स्मारक मुगल तथा बुन्देला स्थापत्य शैली के सम्मिश्रण से निर्मित किये गये हैं । जिस प्रकार धार्मिक जीवन में समन्वय और सद्भाव दिखाई पड़ रहा था उसी प्रकार स्थापत्य कला के क्षेत्र में भी मुगल तथा बुन्देला शैली का समन्वय यहाँ के स्मारकों में दिखाई पड़ता है । यहाँ की स्थापत्य शैली की कुछ प्रमुखतः विशेषतायें इस प्रकार हैं:-

<u>विशेषतायें:</u>

(1) मुगल शैली के अनुरूप तोरन द्वार पर सादे व मेहराव कटावदार तथा बुन्देला स्थापत्य की शंकुआकार महरावों से यहाँ के स्मारकों को सुसज्जित किया गया है ।[142] इसके अलावा गोल

142. रूद्र पाण्डे, झाँसी ग्वालियर, 1990, पृष्ठ-37.

द्वार बनाकर इसे कटावदार महराब के अलंकरण से सजाया जाता था । यह पूर्णतया स्थानीय परम्परा थी । इस प्रकार के द्वार झाँसी के रानी महल, मुरली मनोहर मन्दिर तथा गंगाधरराव की छतरी में निर्मित है ।

§2§ यहाँ के महलों में मुगल शैली के फुव्वारे समूह तथा सजावट हेतु दीपक रखने के आलों के समूह बनाये गये थे ।

§3§ मन्दिरों पर ऊँचे शिखर तथा गुम्बज स्थापित किये जाते थे । नुकीले गुम्बजों के अलावा बुन्देली शैली के विशिष्ठ गुम्बजों से भी मन्दिर अलंकृत किये जाते थे ।

§4§ गुम्बज और शिखर के केन्द्र पर कमल, मणिचक्र तथा कलश स्थापित किये जाते थे । सबसे ऊपर कमल का निर्माण बुन्देला शैली का विशेष लक्षण था ।

बुन्देला शैली के अनुरूप गुम्बज तथा धनुषाकार वितान कमल पंखुरियों से पूर्णतः सजाकर मनमोहक बनाये जाते थे । कमल पंखुरियों की सज्जा झाँसी में अत्यन्त लोकप्रिय थी ।[143] मन्दिरों के गुम्बज ही नहीं बल्कि मकबरों तथा मँजारों के गुम्बज भी इसी तरह बनाये गये थे ।

---

143. रूद्र पाण्डे, झाँसी, ग्वालियर, 1990, पृष्ठ-38.

(5) पाषाण खण्डों, लाखोरी ईंटों का उपयोग कर भवन निर्मित किये गये थे तथा चूने एवम् लाखोरी का पालास्टर दीवारों पर किया जाता था ।

उपरोक्त विशेषताओं से युक्त मुगल तथा ब्रिटिश कालीन बुन्देलखण्ड में इमारतों का निर्माण हुआ जो मुगल बुन्देला शैली के समन्वय का नमूना है । झाँसी के किले में एक बारहदरी निर्मित है । जहाँ एक कुण्ड है जिसके पास में ही स्थित तीन-तीन गज मुख फव्वारों द्वारा जल निकलता था । इसमें कटावदार सुन्दर महराब बनी हुई है । बारहदरी के फव्वारों में जल प्रवाह हेतु ताम्बे तथा मिट्टी के पाईप का प्रयोग किया गया है । यह मुगल शैली का सुन्दर फुव्वारा है । जो झाँसी के मराठा शासकों का दरबार स्थल था ।[144] बारहदरी के आगे ऊँचे मंच पर धनुषाकार वितान से आकृति एक कक्षीय गणेश मन्दिर है । धनुषाकार वितान राजपूत स्थापत्य कला की विशेषता है ।[145]

मन्दिर में कटावदार मेहराब का एक-एक द्वार है । उसके पीछे स्थित बुर्ज पर प्रसिद्ध तोप भवानी शंकर रखी है । झाँसी किले का निर्माण ओरछा नरेश वीरसिंह देव ने कराया था।

---

144. रूद्र पाण्डे, झाँसी, ग्वालियर, 1990, पृष्ठ-41.
145. वही.

जिसके पूर्व दिशा में मुगल शैली का विशाल द्वार बना हुआ है । इसके पश्चिम का द्वार अंग्रेजों द्वारा किये गये परिवर्तन के फलस्वरूप लघु द्वार बदला गया है । इसकी डयोढ़ी की मेहराब विशिष्ट बुन्देली शैली की है ।[146] झाँसी जिले के भोज महल के पश्चिम द्वार के आगे एक छोटा मैदान है । भोज महल क्षेत्र के विशाल द्वारों में मुगल शैली का एक विशाल द्वार है । सम्भवतः इसका निर्माण श्री महराजा वीरसिंह देव के समय में ही हुआ । ठीक इसी प्रकार रानी महल का निर्माण रघुनाथराव द्वितीय ने {1769-1796} में करवाया था । झाँसी राज्य का कम्पनी राज्य में विलय होने के पश्चात् रानी लक्ष्मीबाई को दुर्ग स्थित महल का परित्याग करना पड़ा ।[147] जून, 1857 में झाँसी पर उनका शासन स्थापित होते ही वे पुनः दुर्ग स्थित महल में रहने लगी । इसके ऊपरी मंजिल में कटावदार मेहराब की आकृतियाँ मुगल सुराही तथा मयूर अंकित है । जो स्पष्ट प्रमाणित करते हैं कि इनका अलंकरण मुगल बुन्देला शैली में हुये हैं । इसी प्रकार के गोल मेहराबदार के द्वार रघुनाथ महल तथा अन्य स्मारकों में देखे जा सकते हैं । कहीं कहीं पर यूरोपीय शैली के खपरेलों का प्रयोग किया गया है।[148]

ओरछा में राष्ट्रीय एकता के प्रतीक महाराजा वीरसिंह

---

146. रूद्र पाण्डे, झाँसी, ग्वालियर, 1990, पृष्ठ-43.
147. वही, पृष्ठ-45.
148. वही, पृष्ठ-46.

बुन्देला ने मुगल बुन्देला शैली में अनेकों प्रसिद्ध इमारतों का निर्माण कराया । हम यह जानते हैं कि वीरसिंह देव मुगल सम्राट जहाँगीर के घनिष्ट मित्र थे और इस मित्रता को और मजबूती देने के लिये उन्होंने स्थापित कला शैली में मुगल बुन्देला तत्वों का समन्वय किया है ।

झाँसी की प्रमुख मस्जिदें:

झाँसी का मराठा राज्य राष्ट्रीय एकता का प्रमुख आधार था यहाँ इस्लाम के अनुयाइयों को मान तथा सम्मान प्राप्त था उन्हें अपने विश्वास के अनुरूप इबादत करने तथा परम्पराओं का पालन करने की छूट थी ।[149] बुन्देलखण्ड की अन्य स्मारकों की भाँति झाँसी की अन्य मस्जिद भी मुगल बुन्देला स्थापित शैली में निर्मित है ।[150] नगर में स्थित नबाब साहब की मस्जिद के द्वारोंके मेहराब गोल है । मेहराबों के सिरे कुण्डी नामा बनाये गये हैं । इसकी दालान की छत पर तीन विशाल गुम्बज हैं । गुम्बजों के केन्द्र पर बुन्देला स्थापित शैली के अधोमुख-कमल, चक्र-कलश तथा कमल का निर्माण किया गया है । मस्जिद के चारों कोनों पर एक-एक मीनार है । जो मस्जिद को पूर्णतया प्रदान करती है । यह नबाब-साहब की मस्जिद कहलाती है ।

---

149. रूद्र पाण्डे, झाँसी, ग्वालियर, 1990, पृष्ठ-53.
150. वही.

जिसके विषय में जानकारी का अभाव है ।[151] बाद में यहाँ एक नाबीना सन्त (सूरदास) रहा करते थे । अतः इसे नाबीना की मस्जिद कहते हैं ।

झाँसी की अलीगोल खिड़की के आस-पास पठानों और सईदों की बस्तियाँ थीं । इस खिड़की के बाहर एक प्राचीन मस्जिद है । जहाँ तीन विशाल गुम्बज एवम् एक-एक मीनार है । यह गुम्बज बुन्देला शैली की है । इसी प्रकार झाँसी के राजा रघुनाथराव तृतीय तथा उनकी प्रेमिका गजरा-बेगम के पुत्र अली बहादुर ने अपने निवास चाँद दरवाजा के निकट एक विशाल मस्जिद का निर्माण कराया जिसे मस्जिद नबाबअली बहादुर कहा जाता है । इसका निर्माण बुन्देला स्थापित शैली में हुआ है ।

ईसाई स्मारकः

ईसाई धर्म का आगमन झाँसी में अंग्रेजों के साथ ही हुआ था । नगर स्थित सिटी चर्च तथा सैनिक छावनी का सैन्ट मार्टन चर्च यहाँ के प्राचीनतम गिरजाघर हैं । सिटी चर्च गोथिक स्थापित शैली में निर्मित किया गया है । इसका शिलान्यास 1889 में हुआ ।[152] इसकी टाईल्स यूरोपीय शैली में बनाई गई

151. रुद्र पाण्डे, झाँसी, ग्वालियर, 1990, पृष्ठ-53.
152. वही, पृष्ठ-54.

है । इसी प्रकार 19 मार्च 1898 को सेन्ट मार्टन चर्च का शिलान्यास ब्रिटिश शैली के लिये झाँसी की छावनी में किया गया । यह भी गौथिक स्थापित शैली में बनाया गया है ।

झाँसी में ईसाई स्मारकों के अलावा गोसाईयों के अनेकों मठ और मन्दिर भी स्थित है । तथा यहाँ के मराठा राजाओं की छतरियाँ निर्मित कराई गई हैं ।

राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से बुन्देलखण्ड की स्थापित शैली का अध्ययन यह प्रमाणित करता है कि इस क्षेत्र के लोगों में राष्ट्रीय तत्वों के समन्वय की भावना प्रबल थी और इसीलिये जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में समन्वय स्थापित करने के लिये मुस्लिम तथा बुन्देला शैली के समन्वय का रूप यहाँ कि इमारतों में देखने को मिलता है ।

चित्रकला शैली में समन्वय एवम् स्थानीय प्रभाव:

स्थापत्य कला की भाँति चित्रकला के क्षेत्र में भी बुन्देलखण्ड में मुगल एवम् मराठा प्रभाव दिखाई पड़ता है । बुन्देलखण्ड के समन्वय वाले दृष्टिकोण के कारण यहाँ कि चित्रकला में मुगल एवम् मराठा तथा बुन्देला शैली का समन्वय हुआ है । बुन्देली चित्रकला की निम्नलिखित प्रमुख विशेषतायें हैं-

विशेषतायें:

(1) मानव मुख-मण्डल का अंकन एक-चश्म तथा पौने दो चश्म चेहरा बनाकर किया गया था ।

(2) पुरुष जामा तथा कलिंहिया (ऊपरी वस्त्र) तथा अधोवस्त्र के रूप में कटि-वस्त्र तथा पायजामें धारण किये हुये हैं । दतिया, ओरछा, पगड़ी तथा बिपाऊड़ी शैली के अतिरिक्त शैली में मराठा राजपुरुषों को पेशवायी पगड़ियाँ बाँधे हुये चित्रित किया गया था । पुरुष बड़ी बालियाँ, मोतियों के कंठ तथा कड़ों से आभूषित हैं ।

(3) लंहगा, ओढ़नी तथा छोटी बाँहों की चोली धारण किये हुये स्त्रियों के चित्र बनाये गये हैं । मराठा प्रभाव के कारण कई चित्रों में स्त्रियाँ महाराष्ट्रीय साड़ी पहने हुये हैं । स्त्री चित्रों में कर्णफूल तथा नाक का आभूषण, बाजूबन्द कंकड़, पजनी तथा पायल का प्रयोग किया गया है । चित्रों में महत्वपूर्ण वस्तु को बड़े आकार में तथा अन्य चीजों को लघु आकार में चित्रित किया गया है । बुन्देलखण्ड में प्रायः युद्ध होते रहते थे । विषम परिस्थितियों के कारण चित्र भलीभाँति पूर्ण नहीं हो पाते थे । अतः सांकेतिक शैली का विकास स्वतः हो गया था ।

भित्ति चित्रों के अतिरिक्त पाण्डु लिपियों पर लघु

चित्रों के निर्माण की परम्परायें लोकप्रिय थीं ।

चित्र निर्माण की तकनीकः

बुन्देलखण्ड के चित्रों में पहला छिलाई दूसरा उत्कीर्ण तीसरा लिखाई तकनीक का प्रयोग किया गया था । गोसाइयों की छतरियों में छिलाई विधि से चित्र बनाये गये थे ।[153]

इसके अतिरिक्त उत्कीर्ण तथा लिखाई के चित्र भी झाँसी में बनाये गये थे । चित्रों के प्रमुख विषयों में धार्मिक चित्र हैं । जिनमें रामायण कृष्ण लीला तथा पौराणिक विषयों के चित्र कलाकारों के प्रमुख विषय थे । झाँसी के राजा रामचन्द्रराव की जन्मपत्रि पर नौ ग्रहों का चित्रण था ।[154]

धार्मिक चित्रों के अलावा राजपुरुषों के चित्र भी बुन्देलखण्ड में बनाने की परम्परा थी । झाँसी के रघुनाथ जी के मन्दिर तथा सोनेराव के भारकड़े मन्दिर में अनेक राजा महाराजाओं के भित्त चित्र थे । रघुनाथ जी के मन्दिर में राजा गंगाधरराव तथा लक्ष्मीबाई के भित्त चित्र थे जो अब नष्ट हो गये हैं ।[155]

---

153. रू० पाण्डे, झाँसी, ग्वालियर, 1990, पृष्ठ-72.
154. वही.
155. वही.

बुन्देलखण्ड के चित्रों में युद्ध तथा शिकार भी प्रमुख विषय थे । ओरछा के जहाँगीर महल में युद्ध और शिकार के चित्रों का चित्रण महाराजा वीरसिंह देव ने कराया था जो मुगल तथा बुन्देली प्रभाव से युक्त है । रानी लक्ष्मीबाई एवम् अंग्रेजों के मध्य हुये युद्ध का चित्रण झाँसी के कलाकारों ने मन्दिरों की भित्तियों पर निपुणतापूर्वक किया था । गोसाईयों के मन्दिर में शिकार के दृश्य बने हुये हैं । इसके अतिरिक्त चित्रों में जन जीवन की झाँकी भी दिखाई पड़ती है । चक्की चलाती हुई स्त्री, रीछ सहित मदारी तथा योद्धाओं के सुन्दर चित्र भी पिछोड़ ग्राम में बने हुये हैं । इसके साथ ही बुन्देलखण्ड के चित्रों में प्रकृति पशु-पक्षी, अंगूर की बेलें आदि का चित्रांकन भी अच्छे ढंग से किया गया है । झाँसी के सभी स्मारकों में अत्यन्त सुन्दर बेल-बूटों का चित्रण है ।[156] पिछोड़ ग्राम के गोसाई मन्दिर पर ऊँट, हाथी तथा घोड़े के सुन्दर रेखा चित्र हैं । मयूर, सारस, शुक आदि का चित्रण रानी महल पर किया गया है ।[157]

चित्रकला के उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि बुन्देली चित्रों की परम्परा में मराठी तथा मुगल शैली के अतिरिक्त

---

156. रुद्र पाण्डे, झाँसी ग्वालियर, 1990, पृष्ठ-73.
157. वही.

स्थानीय प्रभाव भरपूर मात्रा में दिखाई पड़ता है । यहाँ की समन्वयवादी संस्कृति ने राष्ट्रीय एकता के आधारों को मजबूती प्रदान करने के लिये चित्रकला के क्षेत्र में भी मुगल बुन्देला तत्वों में समन्वय शैली को स्वीकार किया है । निःसन्देह यही राष्ट्रीय एकता का महत्वपूर्ण सोपान है ।

---0---

अध्याय – तृतीय

विभिन्न धर्मों एवं धर्मावलम्बियों में पारस्परिक सहयोगः

बुन्देलखण्ड की भूमि ने सभी राजाओं-महाराजाओं, संतों, विचारकों आदि को अपनी क्रीड़ायें दिखाने का अवसर प्रदान किया है। प्राचीनकाल से ही बुन्देल भूमि और यहाँ के समाज ने संतों एवं महात्माओं को आश्रय प्रदान किया है । इसलिये यहाँ यह कहावत प्रचलित रही है कि :-

> चित्रकूट में रम रहे, रहिमन अवध नरेश,
> जापर विपदा पड़त है, सो आवत इही देश।

बुन्देलखण्ड का जनजीवन प्रेम, सौहार्द और पवित्रता से परिपूर्ण था । निःसन्देह धन प्राप्ति की लिप्सा तथा सत्ता की स्थापना के लिये समय-समय पर अनेकों जातियों ने इस भू-भाग पर अपनी सत्ता स्थापित करने के प्रयास किये । चन्देल, बुन्देला, मराठे, मुगल, गुसाँई तथा अंग्रेजों ने इसी उद्देश्य से अभीभूत होकर इस क्षेत्र में अपने शासन स्थापित किये और इस शासन का प्रभाव बुन्देलखण्ड के जनमानस पर समय-समय पर पड़ा । निःसन्देह इन शक्तियों के प्रभावों को बुन्देली संस्कृति ने स्वयं में आत्मसात् किया और भारतीय संस्कृति के ही अनुरूप बुन्देलखण्ड का जन-जीवन समन्वयवादी रहा । उपरोक्त सभी का प्रभाव किसी न किसी रूप में बुन्देलखण्डी समाज और संस्कृति पर देखा जा सकता है ।

बौद्ध परम्पराओं से ज्ञात होता है कि 18 वर्ष की आयु में अशोक की नियुक्ति वायसराय के रूप में अवन्ति प्रदेश में हुई थी ।[1]

---

1. एस0डी0, निगम, कल्चरल हिस्ट्री ऑफ बुन्देलखण्ड, 1983, पृष्ठ-25.

अवन्ति प्रदेश का मुख्यालय विदिशा में था । इससे यह स्पष्ट है कि बुन्देलखण्ड क्षेत्र अशोक के मौर्य सम्राट बनने के पश्चात् उसके लिये नया नहीं था ।[2] अशोक ने अपने राज्यारोहण के 12 वें वर्ष में लगभग 258-257 ई0 पूर्व में बुन्देलखण्ड में दो स्थानों पर (1) रूपनाथ (2) बिज गुर्जरी (जबलपुर में) तथा दतिया जिले में दो स्तम्भ लेख लगवाये थे । जिससे लोगों को बौद्ध धर्म की शिक्षाओं की जानकारी दी गई थी ।[3]

रामायण तथा महाभारत काल में वैदिक धर्म तथा संस्कृति से परिपूर्ण बुन्देलखण्ड के लोगों में सम्राट अशोक के समय जब बौद्धधर्म का प्रसार किया जाने लगा तब लोगों ने उसका भी स्वागत किया । अशोक के समय कौशाम्बी मौर्य प्रान्त का मुख्यालय था ।[4] कौशाम्बी स्तम्भ लेख वहाँ के महामात्रों के लिये निर्देश देता है जिसमें बौद्धसंघ को संगठित करने के लिये प्रयास किया गया । अशोक की महारानी चारुवाकी ने कौशाम्बी के बौद्धों के लिये आम के वृक्ष मकान तथा अन्य उपहार भेंट किये थे । यह स्पष्ट होता है कि मौर्यकाल में बुन्देलखण्ड में बौद्धधर्म का व्यापक प्रसार हुआ । कौशाम्बी तथा अन्य स्थानों से प्राप्त अभिलेख इसकी पुष्टि करते हैं और यह भी प्रमाणित करते हैं कि पूरा बुन्देलखण्ड मौर्य साम्राज्य का अंग था ।

मौर्य साम्राज्य के पतन के पश्चात् शुंगवंश का शासन प्रारम्भ हुआ । शुंग शासक वैदिक धर्म के प्रबल समर्थक थे । पुष्यमित्र ने अपने पुत्र

---

2. एस0एस0 निगम, कल्चरल हिस्ट्री ऑफ बुन्देलखण्ड, 1983, पृष्ठ-25.
3. वही, पृष्ठ-26.
4. वही.

अग्निमित्र को विदिशा में गवर्नर के रूप में नियुक्त किया ताकि बुन्देलखण्ड तथा पूर्वी मालवा पर प्रभावपूर्ण नियन्त्रण स्थापित किया जा सके ।

गुप्तशासकों के समय बुन्देलखण्ड क्षेत्र गुप्त साम्राज्य का अंग बना यद्यपि यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है कि चन्द्रगुप्त प्रथम ने बुन्देलखण्ड पर विजय की थी तथा उसने इस क्षेत्र को अपने साम्राज्य का अंग बनाया था किन्तु यह अधिक तर्कसंगत प्रतीत होता है कि बुन्देलखण्ड और पूर्वी मालवा की विजय समुद्र गुप्त ने की थी ।[5] बांदा जिले कि पैलानी तहसील में धनेसार खेरा के खण्डहर में भगवान बुद्ध की पीतल की मूर्तियाँ मिली हैं जो इस क्षेत्र में बौद्धधर्म के प्रसार का संकेत देती हैं ।[6] इस मूर्ति के एक अभिलेख में यह उल्लेख है कि महादेवी ने मूल्यवान उपहार, यहाँ के लोगों को दिया था।[7] स्मिथ का यह विचार है कि यह मूर्ति चार सौ ईसवीं के आस-पास की है । महादेवी हरिगुप्त नामक सम्राट की पत्नी थी लेकिन गुप्त शासकों की वंशावली में हरिगुप्त का उल्लेख नहीं हुआ है । हरिगुप्त नाम से कुछ ताम्बे के सिक्के अवश्य प्रकाश में आये हैं ।[8] ऐसा प्रतीत होता है कि गुप्तकाल में बुन्देलखण्ड में बौद्धधर्म का प्रसार हुआ । निःसन्देह सर्वधर्मसमन्वय तथा सर्वधर्मसमभाव की विचारधारा से प्रेरित बुन्देलखण्ड के लोगों ने इस क्षेत्र में भगवान बुद्ध के उपदेशों का पालन किया ।

---

5. एम०एल० निगम, [वही], पृष्ठ-42.
6. वही, पृष्ठ-41.
7. वही.
8. वही, पृष्ठ-41.

गुप्तकालीन बुन्देलखण्ड के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि रामगुप्त ने पूर्वी मालवा तथा बुन्देलखण्ड के कुछ भाग पर शासन किया । रामगुप्त की ऐतिहासिकता के बारे में विवाद है[9] अल्टेकर का विचार है[10] कि रामगुप्त ने समुद्रगुप्त और चन्द्रगुप्त द्वितीय के शासन अवधि के मध्य शासन किया । यह उल्लेखनीय है कि रामगुप्त नाम से ताम्बे के अनेकों सिक्के पूर्वी मालवा क्षेत्र में प्राप्त हुये हैं । मध्य प्रदेश के भिलसा नामक स्थान से ये सिक्के अधिक मात्रा में प्राप्त हुये हैं ।[11] ऐरण की खुदाई करते समय प्रोफेसर के०डी० बाजपेयी को रामगुप्त नाम से अनेकों सिक्के प्राप्त हुये थे जिनके पीछे गरुड़ का चित्र अंकित है । गरुड़ गुप्त सम्राटों का राज्यचिन्ह था ।[12] प्रोफेसर बाजपेयी का विचार है कि रामगुप्त के इतने अधिक सिक्कों को देखते हुये यह अधिक सम्भव प्रतीत होता है कि रामगुप्त चन्द्रगुप्त द्वितीय का ज्येष्ठ भ्राता था । रामगुप्त जैनधर्म का प्रबल समर्थक था जिसने ऐरण विदिशा तथा बुन्देलखण्ड में जैन तीर्थंकरों की अनेकों मूर्तियाँ बनवाईं और इस क्षेत्र में जैनधर्म का प्रचार किया ।[13] बुन्देलखण्ड के लोगों ने यहाँ की परम्पराओं की भाँति ही जैनधर्म को भी फलने-फूलने का पूर्ण अवसर प्रदान किया तथा अपनी सर्वधर्मसमभाव की प्रवृत्ति का परिचय दिया ।

---

9. एस०एल० निगम, (वही), पृष्ठ-44.
10. वही.
11. वही, पृष्ठ-45.
12. वही, पृष्ठ-45.
13. वही.

चन्द्रगुप्त द्वितीय ने पूरे बुन्देलखण्ड पर अपना नियन्त्रण यथावत् जारी रखा । उसने शकों को परास्त कर गुजरात तथा काठियावाड़ को गुप्त साम्राज्य में शामिल किया । उल्लेखनीय है कि पाटलिपुत्र निवासी वीरसेनसाव[14] जो चन्द्रगुप्त द्वितीय का युद्ध तथा शान्ति मंत्री था वह अपने मालिक के साथ पूर्वी मालवा तथा शकों के विरुद्ध अभियान के दौरान इस क्षेत्र में आया था । चन्द्रगुप्त द्वितीय के एक सामन्त सनकानिक महाराज[15] तथा अम्रकार देव (एक सैनिक अधिकारी था) के अभिलेख भी साँची में प्राप्त हुये हैं । जो चन्द्रगुप्त द्वितीय की पश्चिमी भारत पर विजय की पुष्टि करते थे । चन्द्रगुप्त द्वितीय ने ऐरण को अपना मुख्यालय बना लिया था ताकि पश्चिमी भारत के शकों के विरुद्ध प्रभावपूर्ण अभियान जारी रखा जाये । इससे यह प्रमाणित होता है कि बुन्देलखण्ड चन्द्रगुप्त द्वितीय के अधीन था ।[16]

दतिया के समीप सनकुआ नामक स्थान पर सनकानिक महाराज का मंदिर प्राप्त हुआ है । जो यह प्रमाणित करता है कि सनकानिक महाराज ने इस क्षेत्र में मंदिरों का निर्माण कराया । गुप्त शासक सभी धर्मों का आदर करते थे । और यही कारण था कि पूरे देश की भाँति बुन्देलखण्ड में भी वैदिक धर्म के अतिरिक्त जैन तथा बौद्ध धर्म आदि धर्मावलम्बियों को अपने धर्म के प्रचार तथा प्रसार का अवसर प्राप्त हुआ । हर्ष के समय चीनी यात्री ह्वेनसांग ने अपने विवरण में[17]

---

14. एम०एल० निगम, (वही), पृष्ठ-46.
15. वही.
16. वही.
17. Watters, T, an yuan Wang's Travel in India, 11, 1904-05, P.-250.

यह उल्लेख किया है कि पूर्वी मालवा, ग्वालियर और बुन्देलखण्ड में ब्राम्हण राजाओं का शासन था । इन ब्राम्हण राजाओं के पश्चात् सम्भवतः राष्ट्रकूट एवम् गुर्जर प्रतिहारों ने यहाँ शासन किया । इन शासकों के समय में सर्वधर्मसमभाव की नीति यथावत् जारी रही । ईसा की प्रथम शताब्दी के प्रारम्भ में भारत की उत्तर पश्चिमी सीमा की ओर से अनेकों विदेशी जातियाँ हमारे देश में प्रवेश किया जिन्होंने उत्तर-पश्चिमी तथा पश्चिमी क्षेत्र पर अधिकार कर लिया था । इस बात के स्पष्ट प्रमाण है कि कुषाणों तथा शकों ने कोशाम्भी भीटा तथा पश्चिमी मालवा तक आक्रमण किया[18] इस प्रकार इन विदेशी जातियों का बुन्देलखण्ड की सीमा पर शासन स्थापित हुआ ।

भारहुत, साँची और विदिशा की वस्तुकला तथा कोशाम्भी तथा ऐरण की खुदाई में प्राप्त अवशेषों से इसकी पुष्टि होती है ।[19] बुन्देलखण्ड की सीमा पर बसे हुये इन विदेशियों ने शासन करते हुये बुन्देलखण्ड के लोगों के सामाजिक रहन-सहन के जीवन तथा धार्मिक विश्वासों को अवश्य प्रभावित किया होगा । इनमें से अधिकांश विदेशी भारतीय जीवन पद्धति में घुलमिल गये और यहाँ के रीतिरिवाजों को अपना लिया । विदिशा के स्तम्भ लेख से पता चलता है कि तक्षशिला निवासी हेलियो डोरस महाराजा अन्तलिकित का राजदूत बनकर [यूनानी राजा] विदिशा के भारतीय नरेश भागभद्र के दरबार में आया था । इस राजदूत ने विदिशा के राजा को तथा आस-पास के क्षेत्रों में भागवत धर्म

---

18. Watters, T, an yuan wang's travel in India, 11, 1904-05, P.-250.

19. एस०एन० निगम, [वही], पृष्ठ-46.

की शिक्षा दी तथा वासुदेव कृष्ण के सम्मान में गरुड़-ध्वज का निर्माण भी कराया। विदेशी तत्वों के सामाजिक तथा धार्मिक जीवन में प्रवेश करने पर अनेक परिवर्तन आये।[20]

बुन्देलखण्ड में धार्मिक जीवन:

बुन्देलखण्ड में धार्मिक दशा के सम्बन्ध में प्रारम्भिक जानकारी धर्मग्रन्थों, अभिलेखों तथा पुरातत्व से प्राप्त साक्ष्यों से होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि ईसा पूर्व तृतीय शताब्दी तक आते-आते इस क्षेत्र के लोगों पर वैदिक धर्म का प्रभाव कम होने लगा था।[21] भागवत सम्प्रदाय के उदय से तथा हिन्दू त्रिदेव का प्रभाव प्रारम्भ धर्म के मानने वालों में तेजी से हो रहा था। क्षत्रियों ने वैदिक दर्शन तथा कर्म-काण्ड के विरुद्ध जैन धर्म तथा बौद्धधर्म के प्रादुर्भाव से धार्मिक नेतृत्व अपने हाथ में ले लिया था। अनपढ़ लोगों में अन्धविश्वास बढ़ रहा था विशेषतः समाज का निम्न वर्ग इससे प्रभावित था। बुद्धिजीवी वर्ग और जन सामान्य के धार्मिक विश्वासों में पर्याप्त अन्तर था क्योंकि जन-सामान्य की रुचि धार्मिक दिखावे, तीर्थ-यात्रा तथा धार्मिक उत्सवों में अधिक थी।

बुन्देलखण्ड में बौद्धधर्म का प्रभाव:

मौर्य काल में बौद्धधर्म बुन्देलखण्ड में पर्याप्त मात्रा में विकसित हुआ और यहाँ बौद्धधर्म की हीनयान[22] शाखा का अधिक प्रभाव रहा। कौशाम्बी जो मौर्यकाल में प्रान्तीय मुख्यालय था वहीं बौद्धधर्म के थेरवादिन

---

20. एम०एल० निगम, (वही), पृष्ठ-62.
21. वही, पृष्ठ-85.
22. वही.

सम्प्रदाय का महत्वपूर्ण केन्द्र था । धीरे-धीरे कौशाम्भी के संघ में भिक्षुओं में धर्म के सिद्धान्त तथा अनुशासन के विषय में मतभेद उभरा । इस मतभेद को समाप्त करने के लिये सम्राट अशोक ने कौशाम्भी के महाराजा को यह निर्देश दिया कि जो भिक्षु तथा भिक्षुणी संघ के हितों के विरुद्ध धर्म कर रहे हों उन्हें सफेद कपड़े पहनाकर संघ से बाहर कर दिया जाये ।[23]

बौद्धधर्म को संगठित करने के लिये अशोक ने यह प्रयास किया। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि अशोक अपनी द्वितीय महरानी के साथ कौशाम्भी आया था जहाँ उसकी महरानी ने कौशाम्भी के संघ के लिये भेंट तथा उपहार दिये थे ।[24] अशोक को अपनी जनता के गिरते हुये नैतिक-स्तर की अधिक चिन्ता थी इसलिये देश के विभिन्न भागों में धर्म यात्रायें की थीं । इसी धर्म-यात्रा के दौरान उसने पूरे बुन्देलखण्ड का भ्रमण किया और बुन्देलखण्ड के लोगों के गिरते नैतिक-स्तर को ऊँचा उठाने के लिये यहाँ कि जनता को निर्देश दिये थे । इसी उद्देश्य से उसने रूपनाथ तथा गुर्जरा में दो स्तम्भ-लेख लगवाये[25] ताकि बुन्देलखण्ड की जनता धर्म के अनुसार चल सके । अशोक विचारों तथा तरीकों की पवित्रता में अधिक विश्वास रखता था । वह यह मानता था कि जनता द्वारा जो कर्मकाण्ड अपनायें जाते हैं उससे आवश्यक यह है कि उनके विचार तथा कार्य करने के तरीके पवित्र हों । भगवान बुद्ध के पवित्र आदर्शों में विश्वास रखने के कारण उसने अपनी जनता को अच्छे गुणों से युक्त रास्ते पर चलने की सलाह दी थी । इसीलिये उसने स्वर्ग का विचार आगे बढ़ाते हुये यह कहा कि पवित्र मार्ग पर चलकर उच्च

---

23. एम०एल० निगम, (वही), पृष्ठ-85,
24. वही.
25. वही, पृष्ठ-86.

तथा निम्न कुल वाले व्यक्ति सामान्य रूप से धम्म का अनुसरण करते हुये स्वर्ग प्राप्त कर सकते हैं । धार्मिक उत्सव "समाज" जिसमें खाना-पीना तथा मनोरंजनपूर्ण कार्य होता था तथा जिसमें जनता के नैतिक-स्तर को ऊँचा उठाने का कोई प्रयास नहीं किया जाता था । ऐसे उत्सवों में उनका विश्वास नहीं था[26] किन्तु अशोक ने सांसारिक जीवन तथा मनोविनोद से पृथक रहने के लिये जो निर्देश जारी किये थे उनका सर्वसाधारण पर कोई अधिक प्रभाव नहीं पड़ा क्योंकि साधारण जनता अपनी सामाजिक प्रथाओं और विश्वासों की गहरी जड़ों में अधिक आस्था रखती थी । यही कारण है कि शुंगकाल में बौद्धधर्म का जो स्वरूप उभरा वह अशोक के धम्म के विपरीत था । भारहुत , बोद्धगया तथा साँची के बौद्ध स्मारकों से बौद्धधर्म जिस परिमार्जित तथा लोकप्रिय रूप में दिखाई पड़ता है वह बौद्धधर्म के प्रारम्भिक परम्पराओं तथा आदर्शों के विपरीत था । अतः राजा तथा धनी व्यापारी ऐसे बौद्ध स्तम्भों का निर्माण कराने लगे जो सजावटपूर्ण तथा काफी भव्य थे । इनमें पूजा करने वाले लोग दूर-दूर स्थानों से आकर स्तम्भ, छतरी, बुद्ध तथा बोधिसत्व की मूर्तियाँ बनाकर योगदान देते थे ।[27] इस प्रकार बौद्ध धर्म को जनता में लोकप्रिय बनाया गया । साधारण अनुयायी बौद्ध तीर्थ स्थलों की यात्राओं में अधिक रुचि लेने लगे । उपहार तथा भेंट देने में उनकी रूचि बढ़ी । इस प्रकार जनसाधारण बौद्धधर्म के मूल सिद्धान्तों तथा अशोक के द्वारा प्रारम्भ नैतिक स्तर में उन्नति आदि तरीकों को छोड़कर तीर्थ स्थानों, मठों के मठाधीशों के प्रति अधिक आसक्त हुआ

---

26. एम०एल० निगम, (वही), पृष्ठ-86.
27. वहीं.

और बौद्ध धर्म ब्राम्हण धर्म की भाँति कर्मकाण्ड युक्त होने लगा ।[28]

ईसा की प्रथम शताब्दी के प्रारम्भ में भारतीय सामाजिक संरचना में परिवर्तन आने लगा । मध्य एशिया कि अनेकों घुमक्कड़ जातियाँ उत्तर पश्चिमी मार्ग से भारत में, प्रविष्ट हुई । बैक्ट्रिया के यूनानी गवर्नरों ने भारतीय सीमा में प्रवेश कर पंजाब तथा सिन्ध की निचली तलहटी में अपने राज्य स्थापित कर लिये और उन्होंने मध्य देश पर आक्रमण किया । इस सन्दर्भ में डेमेट्रियस तथा मेनेन्डर के आक्रमण उल्लेखनीय हैं ।[29] विदिशा के उत्तर-कालीन शुंगशासकों तथा पश्चिमी पंजाब के यूनानी शासकों के बीच घनिष्ट सम्बन्धों की पुष्टि बेसनगर अभिलेख से होती है । जिसमें यह वर्णन है कि विदिशा के शासक भागभद्र के दरबार में हेलियो डोरस नामक यूनानी राजदूत आया था । जिसने भागवत धर्म स्वीकार करते हुये विदिशा में भगवान कृष्ण के सम्मान में गरुण ध्वज निर्मित कराया ।[30] शुंगों के पश्चात्, शक, पारथीयन तथा कुषाण जातियाँ भारत में प्रविष्ट हुई जिन्होंने मालवा तथा मध्य भारत तक अपनी राजनैतिक शक्तियों की स्थापना की । इस प्रकार ईसा की प्रारम्भिक शताब्दी में सामाजिक तथा राजनैतिक दृष्टि से एक बड़ी उथल-पुथल प्रारम्भ हुई । ब्राम्हण धर्म तथा भारतीय कला के क्षेत्र में इन जातियों के आगमन से परिवर्तन तथा मिश्रण प्रारम्भ हुआ तथा बुन्देलखण्ड का समाज भी इसका अपवाद न

---

28. एस०एल० निगम, (वही), पृष्ठ-87.
29. वही, पृष्ठ-88.
30. वही, पृष्ठ-86.

रहा ।[31] बाद में चलकर बौद्धधर्म के अनुयायियों ने वैदिक युग के धार्मिक प्रतीकों जैसे वृक्ष, चक्र, स्तूप, कमल आदि को अपने धार्मिक चिन्हों में भी समावेश कर लिया था तथा बौद्धधर्म से सम्बन्धित मूर्तियों में उनका चित्रण किया । इन प्रतीकों का समावेश शुंगकाल के बौद्ध स्तूपों में किया गया ताकि वैदिक धर्म की भाँति बौद्धधर्म भी जनता में प्रसिद्ध बनाया जा सके । इस प्रकार बौद्ध तथा हिन्दू धर्म दोनों के परस्पर मिलन का सौहार्दपूर्ण वातावरण हमें बुन्देलखण्ड में दिखाई पड़ता है ।

हिन्दू धर्मः

वैदिक युगीन धर्म उत्तर वैदिक काल तक आते-आते अनेकों बाह्य आडम्बरों से ग्रस्त हो चुका था । छठी शताब्दी ईसा० पूर्व में बौद्ध तथा जैनधर्म ने वैदिक धर्म की बुराइयों पर प्रहार किया । बौद्ध धर्म के प्रभाव से मौर्य काल में वैदिक धर्म को धक्का लगा । शुंगकाल ब्राह्मण धर्म के पुनर्जीवन का काल माना जाता है किन्तु इस काल में वैदिक पूजा पद्धति तथा यज्ञ विधान तेजी से परिवर्तित हो रहे थे । इसके स्थान पर भक्ति सम्प्रदाय का उदय हो रहा था ।[32] इसके बावजूद भी वैदिक यज्ञ नये ब्राह्मण धर्म के साथ-साथ ही बुन्देलखण्ड में प्रचलित रहा ।

इलाहाबाद म्युनिसपल संग्रहालय के एक अभिलेख[33] जो द्वितीय शताब्दी के ईसा० के प्रारम्भ का है । उससे सात स्तम्भों (यूप) के

31. एम०एल० निगम, (वही), पृष्ठ-88.
32. वही, पृष्ठ-94.
33. वही, पृष्ठ-94.

निर्माण का संकेत है । जिसे सप्त सोम संस्था के नाम से पुकारा जाता है ।[34] इन सातों यज्ञों के करने का श्रेय शिवदत्त नामक एक व्यक्ति को है जो किसी राजा का विश्वसनीय मंत्री था । इन यज्ञों को कराने वाले पुरोहित को एक गाँव दक्षिणा के रूप में दिया गया था । यह वर्णन इस बात का प्रतीक है कि शिव की पूजा बुन्देलखण्ड में अधिक प्रसिद्ध हो रही थी । इससे यह भी प्रमाण मिलता है कि वैदिक धर्म तथा पौराणिक धर्म दोनों साथ-साथ इस क्षेत्र में पनप रहे थे और दोनों में सौहार्दपूर्ण वातावरण था । इससे यह भी स्पष्ट होता है कि जो लोग वैदिक धर्म में रुचि रख रहे थे उनकी पौराणिक धर्म के प्रति भी आस्था विद्यमान थी । यह दोनों पूजा की पद्धतियाँ परस्पर अच्छे वातावरण में वाकाटक नरेश प्रावरसेन प्रथम के काल तक फलती रही क्योंकि इस राजा ने सात यज्ञ किये थे ।[35]

क्रमशः वैष्णु, शैव {शिव} तथा शक्ति सम्प्रदायों के विकास से अनेकों देवी देवताओं की पूजा बुन्देलखण्ड में विकसित हुई । फलतः लोगों की आवश्यकताओं के अनुरूप मथुरा, कौशाम्भी, भीटा, उदयगिरि तथा ऐरण मूर्ति-निर्माण केन्द्रों पर उपरोक्त सम्प्रदायों के देवी देवताओं की मूर्तियों का तेजी से निर्माण होने लगा ।[36] यहीं से भगवान विष्णु के वैभव का विचार विकसित हुआ और शिव की मूर्तियों का निर्माण हुआ तथा उन्हें पूजा के स्थलों पर स्थापित किया गया । मातृदेवी तथा शक्ति की उपासना सर्वत्र प्रचलित थी । बुन्देलखण्ड में भी इसी का

---

34. एम०एल० निगम, {वही}, पृ०-95.
35. वही.
36. वही.

प्रचलन तथा विकास हुआ । धीरे-धीरे देवताओं का मानवीयकरण हो गया । इस प्रकार भक्ति सम्प्रदाय के साथ-साथ नये ब्राहम्ण धर्म के प्रति लोगों की आस्था बढ़ी । भारतीय राजाओं, कुलीनों, किसानों तथा व्यापारियों आदि ने नये ब्राहम्ण धर्म को स्वीकार किया यहाँ तक कि जो विदेशी तथा राजनैतिक इस देश में बस चुके थे उन्होंने भी ऐसे हिन्दू देवताओं और देवियों को अपना लिया। प्रथम यूनानी हेलियो डोरस जो एक राजदूत होकर विदिशा आया था उसने भी गरुण ध्वज का निर्माण कराकर वैष्णव धर्म को स्वीकार कर लिया ।[37] इतना ही नहीं अनेकों शक महाक्षत्रियों ने भी वैष्णव धर्म को स्वीकार किया । उदाहरण के लिये पूर्वी मालवा के शक क्षत्रय के पुत्र श्रीधर वर्मन ने भी वैष्णव धर्म स्वीकार करते हुये हिन्दू नामो को अपना लिया ।[38]

गुप्तकाल में नये ब्राहम्ण धर्म का तेजी से विकास हुआ । गुप्त शासकों ने परम भागवत की पदवी धारण करते हुये वैष्णव धर्म को उदारतापूर्वक संरक्षण प्रदान किया[39] यही कारण है कि गुप्त युग में विष्णु के सम्मान में भव्य मंदिरों का निर्माण हुआ । यह मंदिर, उदयगिरी, ऐरण, गढ़वा तथा देवगिरि निर्मित कराये गये जहाँ दूर-दूर से अनुयायी भगवान विष्णु की पूजा तथा प्रार्थना करने आते थे। निःसन्देह बुन्देलखण्ड गुप्त काल में वैष्णव धर्म की विकास की दृष्टि से अधिक महत्त्वपूर्ण रहा ।

---

37. एस०एन० मिश्रा, [वही], पृष्ठ-96.
38. वही, पृष्ठ-97.
39. वही.

गुप्तकाल सांस्कृतिक दृष्टि से भी अधिक महत्वपूर्ण रहा क्योंकि इसी युग में पूर्व-धर्मों की प्रथाओं तथा नियमों में परिमार्जन हुआ तथा पूजा की पद्धतियों में समन्वय स्थापित हुआ । इसी समन्वय ने बादवाले हिन्दू धर्म की नींव डाली । मंदिरों को भगवान के निवास का स्थान तथा सामूहिक पूजा का स्थान माना जाने लगा । राजे, कुलीन तथा अन्य धनाढ्य [धनी] लोगों ने इन मंदिरों को उदारतापूर्वक दान तथा अनुदान दिये ताकि इनकी मरम्मत तथा देखरेख होती रहे । बुन्देलखण्ड क्षेत्र से ऐसे अनेकों मंदिरों को खोजा गया है जिसमें राजाओं, महाराजाओं ने दान दिये थे । लोगों में यह धारणा बन गई थी कि मंदिरों को भूमि का दान देकर व्यक्ति स्वर्ग में 60 हजार वर्षों तक प्रसन्नतापूर्वक निवास करता है तथा जो मन्दिर की भूमि का अधिग्रहण कर लेता है । उसे उतने ही वर्ष तक नर्क का निवास करना पड़ता है ।[40] इस धार्मिक भावना ने मंदिरों तथा ब्राह्मणों के लिये भूमि दान करना एक अत्यन्त पवित्र कार्य बना दिया। प्रायः लोग मंदिरों में सामूहिक पूजा करते थे । दूर-दूर स्थान से तीर्थ यात्री आकर नगद, कपड़े तथा खाने-पीने की चीजें एवम् फल-फूल, छत्र आदि मंदिरों में भेंट करते थे । गाँव में खुले स्थानों पर मूर्तियों की पूजा की जाती थी । प्रायः तालाबों के किनारे वृक्षों के नीचे देवी-देवताओं की मूर्तियाँ होती थी[41] ताकि लोग स्नान करने के बाद उनके दर्शन कर सके । सन्यासियों, ब्राम्हणों को भोजन तथा वस्तु दान में देना एक महान् धार्मिक कृत्य माना जाता था ।

---

40. एम०एल० निगम, [वही], पृष्ठ-97.

41. वही, पृष्ठ-98.

बुन्देलखण्ड में वैष्णव धर्म का विकास :

द्वितीय शताब्दी ई0 से लेकर ब्राहम्ण धर्म का भागवत सम्प्रदाय बुन्देलखण्ड में अधिक प्रभावशाली तथा विकसित दशा में रहा । यह सम्प्रदाय इतना प्रसिद्ध हुआ कि दूसरे राष्ट्रों के बुद्धिजीवी वर्ग के लोग भी जो उस समय भारत में आये थे भी इससे काफी प्रभावित हुये । इसका सबसे प्रमुख उदाहरण विदिशा के राजा भागभद्र के दरबार में यूनानी राजदूत हेलियो डोरस का माना जायेगा । जिसने स्वयम् वैष्णव धर्म को अपना लिया तथा भगवान विष्णु की प्रशंसा की ।[42] भीटा से प्राप्त मिट्टी की सीलों पर वासुदेव नाम खुदा हुआ है ।[43] बाद में चलकर मथुरा वासुदेव कृष्ण सम्प्रदाय का प्रमुख केन्द्र बन गया । जहाँ इस सम्प्रदाय से सम्बन्धित देवी-देवताओं की मूर्तियों का निर्माण हुआ । निःसन्देह गुप्तकाल में विष्णु बुन्देलखण्ड में सबसे प्रमुख देवता रहा जिसके नर और नारायण का रूप देवगढ़ के मंदिर में दिखाई देता है । बुन्देलखण्ड के लोगों में रामायण तथा महाभारत का पठन-पाठन भी धार्मिक दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण रहा । चित्रकूट तो भगवान राम के निवास का स्थल ही रहा है । देवगढ़ के मंदिर में रामायण तथा महाभारत के दृश्यों का छायांकन भी विष्णु की प्रसिद्धि को प्रमाणित करता है । उदयगिरी, ऐरण, नचना, देवगढ़ आदि के मंदिर बुन्देलखण्ड में विष्णु की उपासना के महत्व को स्पष्ट करते हैं ।

---

42. एस0डी0 त्रिपाठी, (पूर्वोक्त), पृष्ठ-99.
43. वही.

बुन्देलखण्ड में शैवमत:

हिन्दू धर्म के त्रिदेव में शिव की पूजा एवम् प्रार्थना भी बुन्देलखण्ड में समान रूप से प्रसिद्ध रही । भीटा, कौशाम्बी तथा कालिंजर शैव मत के महत्वपूर्ण केन्द्र थे । यहाँ के अभिलेखों से ज्ञात होता है कि द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व से शैव मत बुन्देलखण्ड में अत्याधिक रूप से विकसित हुआ ।[44] भीटा में पंचमुखं लिंग का निर्माण द्वितीय शताब्दी से पूर्व हुआ[45] जो शिव की पूजा से ही सम्बन्धित है । इसी प्रकार लगभग द्वितीय शताब्दी ई0 का चतुर्मुख लिंग कौशाम्बी से प्राप्त हुआ जो आजकल इलाहाबाद म्यूजियम में है ।[46] इससे भी बुन्देलखण्ड में शिव की पूजा विशाल स्तर पर होने का प्रमाण मिलता है । कौशाम्बी के माघवंशीय राजाओं ने शैव, मत को उदारतापूर्वक संरक्षण प्रदान किया तथा अनेकों मंदिरों का निर्माण कराया ।[47] मार्शल ने भीटा की खुदाई में कुछ ऐसी सामग्री प्राप्त की है जिससे गुप्तकाल में शैवधर्म के विकास का पर्याप्त संकेत मिलता है । यहाँ कि मिट्टी की सीलों में शैव सम्प्रदाय में शिव के विभिन्न नाम प्राप्त हुये हैं जैसे कालेश्वर कालिंजर, भट्टारक और माहेश्वर । यहाँ की सीलों पर शैवधर्म के प्रतीकों को जैसे लिंग, नन्दी पाश आदि का भी उल्लेख है ।[48] गुप्तकाल की मिट्टी की एक सील पर एक लिंग का चित्र है जिसे कालिंजर में स्थापित होने का संकेत है । यह भली-भाँति ज्ञात है कि कालिंजर बुन्देलखण्ड में आज

44. एम0एल0 निगम, (वही), पृष्ठ-101.
45. वही.
46. वही, पृष्ठ-102.
47. वही.
48. वही.

भी सर्व सम्प्रदाय का एक महत्वपूर्ण तीर्थ माना जाता है । इस प्रकार बुन्देलखण्ड में शैव मत अधिक प्रचलित रहा जहाँ शिव के प्रारम्भिक अनेकों मंदिर प्राप्त हुये हैं । कुंष तथा भाव शासकों ने शैव मत को संरक्षण प्रदान किया । उदयगिरी गुफा अभिलेख में शिव की एक ऐसी मूर्ति का उल्लेख है जहाँ एक गुफा में चन्द्रगुप्त द्वितीय के मंत्री वीरसेन ने इस मूर्ति की स्थापना की थी । इस प्रकार यह मत बुन्देलखण्ड में अत्याधिक प्रचलित रहा ।

शक्ति अथवा मातृदेवी की पूजाः

ईसा० पूर्व शताब्दी में शक्ति अथवा मातृदेवी की पूजा भी जनमानस में अत्याधिक प्रचलित थी । भारहुत के स्तूप में श्री लक्ष्मी की पूजा का उल्लेख है यहाँ के चित्रों में एक स्त्री का चित्रांकन कमल के फूल पर खड़े हुये अथवा पूर्ण विकसित कमल पर बैठे हुये किया गया है ।[49] इस कमल के दोनों ओर हाथी का चित्र है जो अपनी सूंड़ में बर्तन द्वारा उक्त देवी के सिर पर पानी डाल रहा है । यह देवी उत्पादन तथा समृद्धि के प्रतीक के रूप में चित्रित है । श्री लक्ष्मी अथवा गज लक्ष्मी की उपासना हिन्दू, बुद्ध तथा जैन में समान रूप से प्रचलित थी । भीटा से प्राप्त मिट्टी के सीलों पर भी इस प्रकार के चित्र हैं । कौशाम्भी से भी ऐसे चित्र प्राप्त हुये हैं । शाक्त सम्प्रदाय के उदय में गुप्तकाल में अच्छा वातावरण मिला । बुन्देलखण्ड के प्रारम्भिक वस्तुशिल्प में महिसासुर मर्धनी का कई जगह चित्रांकन है जो एक प्रभावशाली देवी के रूप में वर्णित है । जिसने महिस नामक असुर को अपनी शक्ति के बल पर

49. एम०एल० निगम, (वही), पृष्ठ-103.

परास्त कर दिया था । इसके अतिरिक्त गंगा, यमुना को भी देवियों के रूप में पूजा गुप्तकाल में प्रसिद्ध रही ।

उपरोक्त देवियों के अलावा सूर्य की पूजा बुन्देलखण्ड में प्राचीनकाल से ही प्रचलित रही । भारहुत के चित्रों में सूर्य पूजा का उल्लेख मिलता है ।[50] कुमार गुप्त के समय के मन्दसौर अभिलेख से ज्ञात होता है कि वहाँ के सिल्क के कपड़े बुनने वाले बुनकरों ने एक मंदिर का निर्माण कराया जिस पर भगवान सूर्य की मूर्ति स्थापित की गई । छठी शताब्दी में बुन्देलखण्ड में मूर्ति पूजा का स्पष्ट उल्लेख मिलता है ।[51] गढ़वा से प्राप्त एक सील में सूर्य की मूर्ति है जो एक ऐसे रथ पर सवार है जिसे सात घोड़े खींच रहे हैं । सूर्य के एक तरफ उषा तथा प्रत्युषा का चित्र है जो अंधकार को समाप्त कर रही है । इस प्रकार बुन्देलखण्ड में सूर्य पूजा का भी प्रचलन रहा ।

जैन मत:

बौद्ध तथा हिन्दू धर्म बुन्देलखण्ड में मौर्य काल से ही प्रगति पथ पर अग्रसर था । किन्तु जैन धर्म प्रारम्भिक काल में इस क्षेत्र में उल्लेखनीय नहीं था । गुप्त युग के पूर्व कोई ऐसी अभिलेखीय या वास्तु शिल्पीय प्रमाण नहीं मिलता जिससे यह ज्ञात हो सके कि प्रारम्भिक वर्षों में जैन धर्म बुन्देलखण्ड में प्रचलित था । ऐसा प्रतीत होता है कि सम्भवतः जैन मतावलम्बियों ने अपनी धार्मिक तथा वास्तु शिल्पीय कार्यों को मथुरा

---

50. एम०एल० निगम, {वही}, पृष्ठ-104.
51. वही.

में ही जारी रखा । क्योंकि मथुरा जैन धर्म का प्रसिद्ध केन्द्र था।[52]

उदयगिरी से सर्वप्रथम एक अभिलेखीय साक्ष्य मिलता है । जिससे इस क्षेत्र में जैन धर्म के बारे में जानकारी मिलती है इसमें यह उल्लेख है कि कुमार गुप्त के शासन काल में पार्श्वनाथ की एक प्रतिमा का निर्माण किसी व्यक्ति ने कराया था ।[53] यह विशाल प्रतिमा एक सर्प से घिरी हुई है तथा इस प्रतिमा में एक महिला परिचारिका का भी अंकन किया गया है ।[54] विदिशा से प्राप्त तीन जैन तीर्थंकरों की मूर्तियों में एक लेख उद्धृत है जिसमें ब्राह्मी लिपि में महाराजाधिराज श्री रामगुप्त उल्लिखित है ।[55] इन सभी प्रमाणों से बुन्देलखण्ड में जैन तीर्थंकरों के प्रारम्भिक अवस्थाओं का उल्लेख मिलता है । अतः हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि ई०सा० की चौथी शताब्दी में मध्य तथा पूर्वी बुन्देलखण्ड में जैन धर्म का प्रभाव क्षेत्र स्थापित हो चुका था । गुप्तकाल में भी इस क्षेत्र में अनेकों जैन मंदिर स्थापित किये जा चुके थे। पन्ना जिले में नचना के समीप सिरसा पहाड़ी प एक उल्लेखनीय जैन प्रतिमा प्राप्त हुई है जो इस क्षेत्र में जैन धर्म के प्रभाव का संकेत देती है ।[56] यहाँ से प्राप्त अनेकों जैन मूर्तियाँ मध्य प्रदेश के सतना जिले में रामबन स्थित तुलसी संग्रहालय में सुरक्षित है ।

52. एम०एल० निगम, (वही), पृष्ठ-105.
53. वही.
54. वही.
55. बाजपेयी, के०डी०, इण्डियन न्यूमेजिमेटिक स्टडीज, नई दिल्ली, 1976, पृष्ठ-122.
56. एम०एल० निगम, कल्चरल हिस्ट्री आफ बुन्देलखण्ड, पृष्ठ-116.

इसके अतिरिक्त इस क्षेत्र की गुप्तकाल की एक खड़ी हुई जैन तीर्थंकर की मूर्ति बेसनगर से प्राप्त हुई जो ग्वालियर संग्रहालय में संग्रहीत है।[57]

चन्देल काल बुन्देलखण्ड के इतिहास में स्वर्णयुग माना जाता है । चन्देल शासकों के समय अनेकों हिन्दू मंदिरों के साथ-साथ जैन मंदिरों का भी समान रूप से निर्माण हुआ जो चन्देल शासकों की धार्मिक उदारता तथा सांस्कृतिक समन्वय की नीति का परिचायक है। उल्लेखनीय यह है कि बुन्देलखण्ड के झाँसी, देवगढ़, सोनागिरी, पपौरा आदि स्थानों पर महत्वपूर्ण जैन मंदिर एवम् मूर्तियों का निर्माण किया गया है जो इस क्षेत्र में जैन धर्म के व्यापक प्रभाव का प्रतीक है । बुन्देलखण्ड के ललितपुर संभाग में जैन मतावलम्बियों की संख्या सबसे अधिक है और उनके तीर्थ स्थल भी यहाँ अनेकों की संख्या में स्थित हैं । एक परम्परा के अनुसार यह जानकारी मिलती है कि 13 वीं या 14 वीं शताब्दी में देवपत तथा खेवपत नामक दो जैन व्यापारी मेरठ से ललितपुर आये और यहाँ उन्होंने ऋण देने का व्यवसाय प्रारम्भ किया । इस व्यापार में उन्हें इतना अधिक लाभ हुआ जिससे उन्होंने इस क्षेत्र में अनेकों जैन मंदिर का निर्माण कराया ।

उक्त परम्परा की ऐतिहासिकता की प्रमाणिता कितनी है यह तो नहीं कहा जा सकता किन्तु इतना निश्चित है कि बुन्देलखण्ड के ललितपुर संभाग में ऋण लेन-देन का व्यवसाय काफी पुराना है और जैन सम्प्रदाय के लोग इससे जुड़े हुये है । अंग्रेजी शासन काल में इस क्षेत्र का इतना अधिक आर्थिक शोषण हुआ जिसके कारण इस क्षेत्र के लोग ऋण लेने के

---

57. एम०एल० निगम, (वही), पृष्ठ-116.

लिये बाध्य हुये । इनमें सबसे अधिक प्रभावित बुन्देला ठाकुर थे ।[58] 1907 में ललितपुर में बन्दोबस्त अधिकारी मिम[59] ने लिखा था कि ललितपुर में पिछले 40 वर्षों में 70 हजार एकड़ भूमि ऋणदाताओं के हाथ में चली गई । इस परिस्थिति को रोकने के लिये ब्रिटिश सरकार ने 1903 में भूमि हस्तान्तरण कानून पास किया[60] जिसके अनुसार यह नियम बना दिया गया कि भविष्य में यदि कोई कृषक अपनी भूमि बेचना चाहता है, वह भूमि केवल कृषि कार्य करने वाले लोगों को ही बेची जा सकेगी । ऐसा इसलिये किया गया ताकि भूमि का हस्तांतरण ऋण देने वाली जातियों जैसे जैनियों और मारवाड़ियों के हाथ में न होने पाये ।

वास्तव में बुन्देलखण्ड के ललितपुर क्षेत्र में जैनियों ने ऋण देने के व्यवसाय में इतना धन कमाया जिसके आधार पर उस क्षेत्र में अच्छे-अच्छे जैन मंदिरों तथा तीर्थ-स्थलों का निर्माण कराया गया । जैनियों और अन्य धर्मावलम्बियों के बीच में बुन्देलखण्ड में सहयोग और सामान्जस्य निरन्तर बना रहा और हिन्दू लोग जैन तीर्थ -स्थलों तथा देवताओं को अपने ही देवी देवताओं की तरह मान्यता देते हुये उनके प्रति आस्था रखते हैं । विभिन्न धर्मों में व्याप्त सहअस्तित्व और समन्वय का यह दृष्टिकोण निरन्तर बना रहा ।

इस्लाम समर्थकों के प्रति व्याप्त सद्भाव:

यद्यपि इस्लाम का उदय सातवीं शताब्दी में हो चुका था किन्तु बुन्देलखण्ड में महमूद गजनवी के आक्रमणों के समय इस्लाम के प्रचार

---

58. पाठक, एस०पी०, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, न्यू दिल्ली, 1987, पृष्ठ-166.
59. वही, पृष्ठ-167.
60. वही, पृष्ठ-167.

तथा प्रसार का उल्लेख मिलता है । बुन्देलखण्ड में महमूद के आक्रमण के समय चन्देलों का शासन था और विद्याधर चन्देल ने सर्वप्रथम महमूद गजनवी के विरुद्ध एक मोर्चा तैयार किया था । चन्देल उस समय की उत्तर भारत की महान् राजनैतिक शक्ति थे जिनके प्रभाव को तोड़ने के लिये महमूद तत्पर था किन्तु महमूद को यहाँ वांछित सफलता प्राप्त नहीं हुई ।[61] महमूद के पश्चात् मोहम्मद गोरी के आक्रमण हुये और कुतुबुद्दीन तथा इल्तुतमिश ने कालिन्जर पर आक्रमण किया सल्तनत काल में हिन्दू तथा इस्लाम के बीच परस्पर मेल-जोल समन्वय तथा एक-दूसरे की विचारधाराओं का आदान-प्रदान उतनी उदारतापूर्वक नहीं हुआ जितना मुगलकाल में हुआ इसका कारण यह था कि दोनों धर्मावलम्बियों में एक-दूसरे के प्रति अविश्वास की खाई विद्यमान थी किन्तु सल्तनत काल की समाप्ति के पश्चात् मुगल शासकों का युग शुरु हुआ जिससे पूर्व समय में व्याप्त धार्मिक कटुता धीरे-धीरे समाप्त होने लगी तथा लम्बे समय से साथ-साथ रहने के कारण हिन्दू तथा मुस्लिम संस्कृतियों में समन्वय तथा सहयोग दिखाई पड़ने लगा ।

बाबर मुगल साम्राज्य का संस्थापक था जिसका विरोध करने के लिये मेवाड़ के राजा संग्रामसिंह ने एक संघ का निर्माण किया था जिसमें राजपूत शासकों के अलावा सुल्तान सिकन्दर लोदी का पुत्र सुल्तान महमूद लोदी भी एक सहयोगी था । राणा संग्रामसिंह की सेना में अनेकों अफगान सैनिक थे ।[62] अफगानों और राजपूतों की बढ़ती हुई मित्रता से

---

61. पाठक, वी०एन०, उत्तर भारत का राजनैतिक इतिहास, लखनऊ, 1973, पृष्ठ-412-413.

62. राधेश्याम, मुगल सम्राट बाबर प्रथम संस्करण, पटना, 1974, पृष्ठ-291.

बाबर चिन्तित था । कुछ ही दिनों पश्चात् जब बाबर बयाना के दुर्ग को लेने का प्रयास कर रहा था उस समय हसन खाँ मेवाती जोकि एक शक्तिशाली सरदार था वह राणासांगा से आ मिला । राणा ने बाबर के विरुद्ध हसन खाँ का स्वागत किया तथा राजपूत अफगान संघ का निर्माण किया ।[63] इस प्रकार राणासांगा के बाबर के विरुद्ध युद्ध मुसलमानों के खिलाफ हिन्दुओं का युद्ध नहीं था बल्कि सम्पूर्ण देश के शत्रु बाबर के विरुद्ध एक संयुक्त मोर्चा था ।[64] बाबर को यह भलीभाँति ज्ञात था कि खानवा के मैदान में वह जो युद्ध करने जा रहा है वह धार्मिक न होकर राजनैतिक था जिसमें भारत के हिन्दू-मुस्लिम राणा दोनों मिलकर उसको इस देश से बाहर भगाने पर तुले हुये थे ।[65]

बाबर ने हिन्दुस्तान में धार्मिक वातावरण कुछ और ही पाया उसके हिन्दुस्तान आने से पूर्व सूफी और वैष्णव संतों ने हिन्दू-मुस्लिम एकता पर बल देते हुये धार्मिक एवं जातीय संकीर्णता को दूर करने की चेष्टा की थी । हिन्दू और मुस्लिम संत समाज के निम्न तथा मध्यम वर्गों को प्रभावित करने में तो सफल हुये किन्तु हिन्दू-मुस्लिम समाज के कट्टर वर्ग जो एक-दूसरे को उपेक्षा की दृष्टि से देखा करते थे वे इन संतों से विशेष प्रभावित नहीं हुये ।[66] इस वर्ग के अतिरिक्त भी समाज में एक ऐसा वर्ग था जो कि अपनी-अपनी धार्मिक एवं सामाजिक परम्पराओं को इस्लाम तथा हिन्दू धर्म की रक्षा और दोनों जातियों को पृथक रहने पर बल दे रहा था । इस प्रकार हिन्दू-मुस्लिम समाज में

---

63. राधेश्याम, मुगल सम्राट, बाबर, प्रथम संस्करण, पटना, 1974, पृष्ठ- 294-295.
64. वही.
65. पन्निकर, के०एम०, सर्वे ऑफ इण्डियन हिस्ट्री, पृष्ठ-154.
66. रामफल सिंह, हिन्दू-मुस्लिम सांस्कृतिक एकता का इतिहास, भाग-2, पृष्ठ-28.

विभिन्न प्रकार की धार्मिक विचारधारायें । 16वीं शताब्दी के प्रारम्भ में उत्तरी-भारत में विद्यमान थीं जो वर्ग सामाजिक एकता एवम् समन्वय तथा धार्मिक सहिष्णुता के पक्ष में था उसका नेतृत्व इस समय महान् चिश्ती शेख साहुल्लाह और अब्दुल फियागरामी कर रहे थे । उन्होंने अद्वैतवाद और वहादतु-उल-वजूद में सैद्धान्तिक एकता स्थापित कर दोनों को मान्यता प्रदान की । उन्हीं की विचारधाराओं को सत्ताधारी संतों ने भी अपनाया । दोनों ही सिलसिले के मानने वाले यौगिक क्रियायें करते थे । योग और वेदान्त का अध्ययन करते थे और हिन्दुओं से स्वतन्त्रतापूर्वक मिलते-जुलते थे । 16वीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही शत्तारी सम्प्रदाय ने शेख बहलोल तथा उसके भाई शेख मुहम्मद गौस के नेतृत्व में जोर पकड़ा ।[67]

जिस समय बाबर ने हिन्दुस्तान में प्रवेश किया उस समय नानक और शेख गंगोही एक ही प्रदेश में अपने धार्मिक विचारों का प्रचार कर रहे थे और उनके अनुयायियों में किसी भी प्रकार का वैमनस्य नहीं था । इसी तरह उत्तर-भारत के अन्य भागों में भी हिन्दु-मुस्लिम समाज के कट्टर एवम् उदार धार्मिक विचार रखने वालों में उन दिनों धार्मिक वैमनस्य दिखाई नहीं पड़ता था ।[68] बाबर के उदार धार्मिक दृष्टिकोण की पुष्टि उसकी "वसीयतनामा" से होती है । जो उसने अपने पुत्र हुमायूँ के लिये तैयार करवाया था । यह "वसीयतनामा" इस प्रकार से है:-

"ओ! पुत्र! हिन्दुस्तान में विभिन्न जातियों के लोग निवास करते हैं । उस महान् ईश्वर की प्रशंसा की जानी चाहिये जिसने कि बादशा

---

67. रामधन सिंह, हिन्दु-मुस्लिम सांस्कृतिक एकता का इतिहास, भाग-2 पृष्ठ-28.

68. वही, पृष्ठ-29.

तुम्हारे ऊपर न्यौछावर की है । कामन्धता से तुम्हें अपने हृदय पटल को स्वच्छन्द रखना चाहिये और प्रत्येक जाति की परम्पराओं के अनुसार उनके प्रति न्याय करना चाहिये । इससे भी पूर्व तुम्हें गौ-वध करने से बचना चाहिये इस प्रकार तुम हिन्दुस्तानियों के हृदय को जीत सकोगे । और शाही अनुकम्पा से जनता को निष्ठावान बना सकोगे । जो लोग शाही शासन के अन्तर्गत हैं उनके मंदिरों या पवित्र स्थानों को न तोड़ना । इस प्रकार शाह जनता से और जनता बादशाह से प्रसन्न रहेगी । इस्लाम धर्म का प्रचार तलवार के दबाव से नहीं वरन् कृपा की तलवार द्वारा ही अच्छी तरह से हो सकता है । शिया और सुन्नियों के पारस्परिक मतभेदों की ओर से आँख मूँद लो नहीं तो इस्लाम में यह संघर्ष दृष्टिगोचर होने लगता है । चार तत्वों के माध्यम से अपने विविध विचारों की प्रजा को नियंत्रित करो, इस प्रकार सल्तनत बहुत से दोषों से मुक्त हो जायेगी । तुम्हें सदैव महान् और तैमूर साहिब किरानी के "कारनामा" को अपनी आँखों के सामने रखना चाहिये ताकि उससे प्रशासनिक मामलों में दक्षता प्राप्त हो ।[69]

यह "वसीयत-नामा" एक मूल पत्र न होकर उसकी प्रतिलिपि है जिसका विषय बहुत ही महत्वपूर्ण है तथा जिसकी ऐतिहासिकता पर किसी को सन्देह नहीं होना चाहिये ।[70]

बुन्देलखण्ड में 1526 से 1947 के मध्य इस्लाम धर्म के प्रति लोगों में पर्याप्त सद्भाव व्याप्त था । प्रारम्भिक कटुता जो दोनों

---

69. रामफल सिंह, हिन्दू-मुस्लिम सांस्कृतिक एकता का इतिहास, भाग-2, पृष्ठ-30.

70. राधेश्याम, मुगल सम्राट बाबर, पृष्ठ- 428-429.

सम्प्रदायों के बीच विद्यमान थी वह समय के अन्तराल के साथ-साथ समाप्त होती चली गई । ओरछा के राजा वीरसिंह देव मुगल सम्राट जहाँगीर से मित्रता इस दिशा में सौहार्दपूर्ण वातावरण बनाने में पर्याप्त सहायक सिद्ध हुई । यद्यपि परवर्ती युग में मुगल बुन्देला सम्बन्धों के बीच कटुता अवश्य उत्पन्न हुई लेकिन जनमानस पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा ।

<u>ईसाई धर्मावलम्बियों के प्रति उदारभाव:</u>

बुन्देलखण्ड में अंग्रेजी शासन की स्थापना के पश्चात् यहाँ का सामाजिक एवम् आर्थिक शोषण हुआ । कुटीर उद्योग धन्धों के विनाश, राजस्व कर में वृद्धि आदि कारणों से बुन्देलखण्ड में गरीबी, बेरोजगारी तथा पिछड़ापन आया । इसका लाभ लेने के लिये ईसाई मिशनरियों ने यहाँ अनेक संस्थाओं की स्थापना कर लोगों की सहायता की तथा ईसाई धर्म का प्रचार प्रारम्भ किया । ब्रिटिश सरकार यह भलीभाँति जान चुकी थी कि बुन्देलखण्ड की जनता पर किसी भी प्रकार विश्वास नहीं किया जा सकता था । अतः आवश्यकता यह थी कि बुन्देलखण्ड में एक ऐसे वर्ग का निर्माण किया जाये जो ब्रिटिश सरकार की नीतियों का समर्थक हो और उनकी वफादारी सरकार के प्रति हो । इस बात को बाँदा के कलेक्टर मैन[71] ने भलीभाँति महसूस किया था । उसने 1857 में विद्रोह के समय इस क्षेत्र में ऐसे लोगों का नितान्त अभाव पाया जिनकी वफादारी सरकार के प्रति होती । अतः 1857 के बाद

---

71. ड्रेक ब्राकमैन, डी०एल०, बाँदा गजे० इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-91.

एक वफादार प्रजा के निर्माण के लिये अंग्रेजी सरकार ने ईसाई धर्म प्रचारकों को पर्याप्त संख्या में बुन्देलखण्ड भेजा । बाँदा के कलेक्टर मैन ने सन् 1870 में बाँदा में बुन्देलखण्ड मिशन[72] की स्थापना की जिसमें मैन के अलावा इलाहाबाद के पादरी फेमन ने महत्वपूर्ण योगदान दिया ।[73]

बुन्देलखण्ड मिशन प्रारम्भ में कानपुर मिशन का एक भाग था । 1872 में बाँदा जिले में जे०आर०ए० हिल ने इस मिशन का कार्य देखना प्रारम्भ किया[74] प्रारम्भ में एक स्कूल की इमारत इस मिशन को सौंप दी गई जिसे चर्च के रूप में प्रयोग किया जाने लगा । धीरे-धीरे उस मिशन की शाखायें महोबा, अतर्रा, कर्वी आदि स्थानों में खोल दी गई ।[75] इसी मिशन ने बाँदा में एक जनाना मिशन की भी स्थापना की जिसने लड़कियों के लिये दो स्कूल तथा स्त्रियों की चिकित्सा के लिये एक अस्पताल भी खोल दिया ।[76]

जालौन जिले में मिशन की स्थापना:

जालौन में ईसाई मत का प्रचार तथा प्रसार इतना अधिक नहीं था जितना कि बाँदा तथा झाँसी जिले में था लेकिन यह संख्या जालौन में निरन्तर बढ़ती रही । ड्रेक ब्राकमैन[77] ने 1909 में यह

---

72. ड्रेक ब्राकमैन, डी०एल०, बाँदा गजे०, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-91.
73- वही.
74. वही.
75. वही.
76. वही.
77. वही.

विवरण दिया कि जालौन में ईसाई धर्म के अनुयायियों की संख्या 94 है जिसमें 35 योरूपीय तथा 59 स्थानीय लोग हैं । इस जिले में किसी भी मिशन का स्थायी केन्द्र 1909 तक स्थापित नहीं हो सका था लेकिन अमेरिका के मेथाडिस्ट मिशन के अनुयायी कौंच, उरई और माधवगढ़ में धर्मप्रचार का कार्य कर रहे थे ।[78]

ललितपुर तथा हमीरपुर जिलों की भी लगभग यही स्थिति रही । ब्रिटिश शासन काल के प्रारम्भिक वर्षों में बुन्देलखण्ड के जिलों में ईसाई मिशनरियों का कोई विशेष केन्द्र नहीं था लेकिन अंग्रेजी शासन में विस्तार के साथ-साथ मिशनरियों का प्रभुत्व बढ़ने लगा ।

बुन्देलखण्ड सम्भाग में प्रोटेस्टेण्ट मिशन का प्रारम्भः

बुन्देलखण्ड के पिछड़े हुये इलाके में ईसाई मत के प्रचार तथा प्रसार का कार्य सर्वप्रथम प्रोटेस्टेण्ट मिशनरियों ने ही किया था[79] 1896 में बुन्देलखण्ड में एक भंयकर अकाल पड़ा[80] जिससे यहाँ के जनजीवन को भारी क्षति हुई । इससे पहले भी यहाँ समय-समय पर अकाल पड़ते रहे । फलतः कृषि पर आधारित जनता भुखमरी के कगार पर आ चुकी थी । जनवरी 1896 में तो अकाल के कारण लोग बिल्कुल तंग आ चुके थे । व्यापक मँहगाई के कारण लोग काफी संख्या में मरने लगे थे । यद्यपि सरकार ने दिखावे के लिये अकाल पीड़ितों की सहायता के लिये कुछ प्रयास किये, लेकिन ये प्रयास लोगों को सन्तुष्टि प्रदान न कर सके ।[81]

---

78. ड्रेक ब्रॉकमेन, डी०एल०, बांदा गजे० इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-59-60.
79. ए क्रिटिकल इनक्वायरी इन्टू द बुन्देलखण्ड मसीही मिशन वर्क इन द बुन्देलखण्ड एरिया, रत्नाकर, एम०ए०(रिसर्च पेपर) 10-1-85, पृष्ठ-1.
80. पाठक, एस०पी०, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ 71-72.

ऐसी परिस्थिति में 1896 में प्रोटेस्टेण्ट मिशन की ओर से मिस ई० वैड तथा मिस फिशर जो मिशनरी कार्य के लिये भारत आई हुई थीं ने लखनऊ में कुछ समय तक विश्राम किया तथा बुन्देलखण्ड की स्थिति का पता करने के बाद छतरपुर के नौगाँव इलाके में धर्म प्रचार का बीड़ा उठाया ।[82] अकाल में कुटुम्ब-विहीन तथा ऐसे लावारिस बच्चों की देख-रेख व पालन-पोषण का कार्य उन दोनों मिशनरियों ने किया।[83] इस उद्देश्य से नौगाँव में एक अनाथालय, अस्पताल तथा एक स्कूल की स्थापना कर दी गई ।[84] धीरे-धीरे ये संस्थायें काफी विकसित होने लगीं। 1902 में प्रथम बार प्रोटेस्टेण्ट मिशनरियों की मासिक बैठक का प्रारम्भ नौगाँव के अनाथालय से ही हुआ ।[85] 11 मार्च 1902 को नौगाँव की मासिक बैठक में 47 प्रोटेस्टेण्ट लोग उपस्थित थे । यहीं से बुन्देलखण्ड चर्च का प्रारम्भ हुआ ।[86] धीरे-धीरे काफी संख्या में मिशनरी बुन्देलखण्ड के पिछड़े हुये जिलों में जाकर धर्म प्रचार करने लगे। मिशनरियों ने बुन्देलखण्ड चर्च अथवा बुन्देलखण्ड मसीही मित्र समाज नामक संस्थाओं की भी स्थापना कर ली ।[87] 1902 में प्रोटेस्टेण्ट चर्च के नियमों के लिये होशंगाबाद से एक पुस्तक प्रकाशित की गई और तत्पश्चात् 1939 में इसमें परिवर्तन किया गया । धीरे-धीरे बुन्देलखण्ड मसीही समाज को विन्ध्य प्रदेश की सरकार से मान्यता प्रदान कर दी गई ।[88]

---

82. ए क्रिटिकल इनक्वायरी इन टू द बुन्देलखण्ड मसीही मित्र समाज, पृष्ठ-2.
83. वही.
84. वही.
85. वही.
86. वही.
87. वही.
88. वही, पृष्ठ 2-3.

बुन्देलखण्ड की सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक पृष्ठ-भूमि:

बुन्देलखण्ड मूलतः हिन्दुओं के प्रभुत्व वाला क्षेत्र रहा है। अतः वर्ण व्यवस्था तथा जाति का गठन इस क्षेत्र में हिन्दू संस्कारों के अनुसार ही हुआ । विशेषतः ब्राहम्ण, क्षत्रिय, वैश्य जो समाज के प्रभावशाली लोग थे । वे अन्य निचली जातियों पर अपना प्रभुत्व बनाये रखने में सफल रहे ।[89] व्यापारी आर्थिक क्षेत्र में अपना प्रभुत्व बनाये रहे । बुन्देलखण्ड की अर्थ व्यवस्था मुख्यतः वैश्यों के हाथ में रही जिन्होंने जातीय संगठन को मजबूत किया तथा अपने प्रभाव और शक्ति में बराबर वृद्धि की । ब्राहम्ण तथा क्षत्रियों ने भी समाज के प्रभावशाली लोगों के रूप में अपने को स्थापित कर लिया था । धार्मिक नेता होने के कारण तथा अपने ज्ञान के कारण वे ब्राहम्ण समाज में पूज्य माने जाते रहे, क्योंकि इस क्षेत्र के शासक होने के नाते क्षत्रिय लोग तो पहले से ही प्रभावशाली थे । इनमें सबसे खराब स्थिति उन समाज की थी जिन्हें शूद्र अथवा हरिजन के नाम से पुकारते हैं।[90] संख्या की दृष्टि से यह वर्ग काफी था । इस वर्ग की हीन-दशा का कारण यह था कि सदियों से वे कमजोर तथा पिछड़े बने रहे । ऐसी परिस्थिति में मिशनरियों ने बुन्देलखण्ड के इस कमजोर वर्ग को अपनी ओर आकृष्ट करने का प्रयास किया । इन मिशनरियों को यह भली-भाँति ज्ञात था कि हिन्दू वर्ग व्यवस्था में यह शूद्र वर्ग उपेक्षित रहा जिन्हें घृणा की दृष्टि से देखा जाता रहे । फलतः ईसाई धर्म का

---

89. ए क्रिटिकल इनक्वायरी इन टू द बुन्देलखण्ड मसीही मित्र समाज, पृष्ठ- 2-3.
90. वही.

विस्तार करने के लिये इस समाज की निम्न जनता को ही मिशनरी धर्म प्रचारकों ने समय-समय पर सहायता तथा अन्य सुविधाओं के द्वारा ईसाई मत की ओर आकृष्ट किया ।

जहाँ तक ईसाईयों द्वारा किये जा रहे धर्म प्रचार के प्रति उच्च वर्ग के हिन्दुओं का दृष्टिकोण था उन्हें बुन्देलखण्ड के उच्च वर्ग के हिन्दू सन्देह की दृष्टि से देख रहे थे । क्योंकि उन्हें यह भय था कि मिशनरियों के इन कार्यों से हिन्दू समाज का संगठन ध्वस्त हो जायेगा किन्तु ये मिशनरी अपना निरन्तर कार्य करते रहे । फलतः समाज का उपेक्षित वर्ग उनकी ओर आकृष्ट हो गया ।

राजनैतिक दृष्टि से बुन्देलखण्ड भारत के मध्य में स्थित होने के नाते सदैव ही महत्व का बना रहा और यहाँ राजनैतिक उथल-पुथल होती रही है । 15वीं तथा 16 वीं शताब्दी में बुन्देला ठाकुरों के आधिपत्य में धीरे-धीरे बुन्देलखण्ड , मुगल, बुन्देला तथा मराठाओं के संघर्ष का क्षेत्र हो गया था । महाराजा वीरसिंह देव जिन्होंने बुन्देलों की स्वतन्त्रता का उद्घोष किया था तथा जिसे जुझार सिंह , चम्पत राय तथा छत्रसाल ने आगे बढ़ाया था,उसी परम्परा के अनुसार मराठों से मिलकर महाराजा छत्रसाल बुन्देला ने मुगल सूबेदार मुहम्मद खान बंगश को पराजित किया था । इस घटना ने इस क्षेत्र में बुन्देलों के स्वतन्त्र शासन का प्रारम्भ हुआ था । यहीं से बुन्देलों और मराठाओं की दोस्ती का भी प्रारम्भ हुआ ।[91] किन्तु आगे आने वाले वर्षों में

91. पाठक, एस0पी0, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ 8-9.

इन दोनों जातियों के बीच स्वार्थो की टकराहट हुई और आपसी विवाद होने लगे। इसी बीच गुसाई नेता हिम्मत बहादुर, जो इस क्षेत्र में अपनी सर्वोच्चता स्थापित करना चाहता था, ने भी अवध के नवाब वजीर शुजाउद्दौला की सेना को लेकर बुन्देलखण्ड पर आक्रमण कर दिया।[92] अंग्रेज तो प्रारम्भ से ही बुन्देलखण्ड की केन्द्रीय स्थिति तथा भौगोलिक महत्व को समझते थे। अतः शुरु से ही उनकी यह लालसा थी कि बुन्देलखण्ड को अपने अधीन किया जाये। अतः बिगड़े हुये राजनैतिक परिवेश में अंग्रेजों को सफलता मिली और 1804 से यहाँ अंग्रेजी शासन स्थापित हुआ।

इन लगातार युद्धों के कारण इस क्षेत्र की अर्थ व्यवस्था को भारी नुकसान तो पहुँचा ही साथ ही साथ यहाँ व्यापक गरीबी और मँहगाई आई। इस क्षेत्र की गरीबी का एक कारण यह भी था कि ब्रिटिश सरकार ने जानबूझ कर लगान की दरें अधिक रखीं।[93] इसके पीछे इनका दृष्टिकोण यह था कि बुन्देलखण्ड के लोगों ने 1857 में विद्रोह के समय अंग्रेजी शासन का डटकर विरोध किया था। ये लोग भविष्य में भी ऐसा विरोध न करने पाये जिससे अंग्रेजी साम्राज्य को खतरा हो सके। अतः सरकार ने लगान की दरें कठोरता से निर्धारित की। यहाँ के उद्योग तथा धन्धों को कर लगाकर समाप्त कर दिया गया।[94] इसके अतिरिक्त इस क्षेत्र के बुन्देला तथा अन्य

92. पाठक, एस0पी0, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-11.
93. वही, पृष्ठ 113-114.
94. वही, पृष्ठ-66.

जमींदार भी अपने किसानों से कठोरतापूर्वक कर वसूल करते रहे । जैनी तथा मारवाड़ियों ने तो उधार देने का व्यापार कर रखा था जिसके माध्यम् से अधिक ब्याज लेकर यहाँ कि जनता का शोषण किया जाता रहा । शोषण की इस प्रवृत्ति के कारण यहाँ की गरीबी तथा बेरोजगारी में व्यापक वृद्धि हुई ।[95] अतः इन परिस्थितियों में ईसाई मिशनरियों को अपने धर्म प्रचार का सुनहरा अवसर प्राप्त हुआ ।

निश्चय ही अंग्रेजी शासन के प्रारम्भिक वर्षों में ईसाई धर्म प्रचारक, जो बुन्देलखण्ड में मिशनरी गतिविधियों में लिप्त थे उनमें स्थानीय लोगों के प्रति अविश्वास तथा दूरी बनी रही । 1857 के विद्रोह के समय भी ईसाई मिशनरियों के प्रति लोगों के मन में घृणा का भाव रहा है किन्तु जैसे ही शांति व्यवस्था स्थापित हुई वैसे ही समय के अन्तराल के साथ स्थानीय लोगों तथा मिशनरियों के बीच व्याप्त भेद-भाव समाप्त होने लगा । मानवीय सहायता कार्यों द्वारा अनाथालय , स्कूल तथा अस्पतालों की स्थापना कर इन मिशनरियों ने लोगों के मन में विश्वास पैदा कर लिया । धीरे-धीरे यह विश्वास और मजबूत होने लगा । बुन्देलखण्ड में इन्हीं परिस्थितियों में ईसाई धर्मावलम्बियों की संख्या बढ़ने लगी । प्रारम्भ में विदेशी मिशनरियों को अनुदान योरूपीय तथा अमरीकी देशों से

---

95. पाठक, एस0पी0, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-86.

मिलता था किन्तु बाद में बुन्देलखण्ड मिशन स्थानीय स्त्रोतों से ही अपना आप निकालने लगा । स्थानीय लोगों के धर्म परिवर्तन से बुन्देलखण्ड के लोगों में घृणा का भाव समाप्त हुआ और 1858 से 1947 के बीच इसाई लोगों के प्रति बुन्देलखण्ड के निवासियों ने उदारता, सहिष्णुता तथा सम्भाव का प्रदर्शन किया ।

---o---

अध्याय चतुर्थ

बुन्देलखण्ड के राजाओं का राष्ट्रीय एकता के प्रति अनुराग

बुन्देलखण्ड में सर्वधर्मसम्भव, स्वतन्त्रता की प्रवृत्ति एवम् राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ बनाने की विचारधारा यहाँ के जनमानस के दिमाग में प्रारम्भिक काल से पल्लवित होती रही । इस क्षेत्र की पहाड़ी स्थिति, जंगली तथा पथरीला वातावरण लोगों को स्वतन्त्र विचरण का वातावरण देने में सहायक रहा । प्रारम्भ से ही यहाँ वैदिक धर्म की वर्णाश्रम व्यवस्था प्रभावी रही । यहाँ के समाज में ब्राह्मण, क्षत्रीय, वैश्य और शूद्र जातियाँ समाहित थीं । व्यवहार रूप में समाज में तीन उच्च वर्गों में ब्राह्मण, क्षत्रीय और वैश्य ही महत्वपूर्ण रहे । किन्तु क्रमशः मध्यम वर्ग में लोधी, अहीर, दाँगी , कायस्थ , कुर्मी आदि ऐसी जातियाँ रही हैं जो आर्थिक रूप से समृद्ध थीं किन्तु सामाजिक प्रतिष्ठा की दृष्टि से उच्च वर्ग की अपेक्षा इनका स्थान निम्न था । सबसे निचले वर्ग में ऐसी बहुसंख्यक जातियाँ थीं । जिसमें चमार, बसोर, मेहतर, कोल, भील आदि थे । जिनको अस्पृश्य माना जाता था । ये जातियाँ सामान्यतः गाँव के किनारे निचले हिस्से में बसती रही है ।[1] समाज में मुसलमान एवम् ईसाई जाति के परिवार भी रहते थे किन्तु वे गाँव और बस्ती से पृथक एक ओर रहा करते थे क्योंकि बहुसंख्यक हिन्दू उन्हें अस्पृश्य समझकर धर्मविरोधी

---

1. ताराचन्द्र, भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन का इतिहास, भाग-1, पृष्ठ-64.

समझते थे और घृणा की दृष्टि से देखा करते थे । महाराष्ट्रीयन लोग भी बुन्देलखण्डी समाज से अलग प्रदेशी ही बने रहे ।[2]

एक लम्बे समय से परस्पर एक-दूसरे के साथ रहने के कारण धीरे-धीरे हिन्दू-मुस्लिम तथा ईसाई धर्मावलम्बियों के बीच सहयोग और सद्भावपूर्ण वातावरण बनना स्वाभाविक हुआ । यद्यपि मुस्लिम आक्रमणकारियों ने जो आक्रमण किये उसके परिणामस्वरूप बुन्देलखण्ड के जनमानस में इस्लाम के प्रति प्रारम्भ में अच्छा भाव नहीं था क्योंकि लोग इन आक्रमणकारियों को विदेशी समझते थे किन्तु मुगल साम्राज्य की स्थापना के पश्चात् मुगलों की ऐसी पुकार प्रारम्भ हुई थी धर्म के मामले में उतने कट्टर तथा धर्मान्ध नहीं थे जितने कि उनके पूर्वगामी मुस्लिम आक्रमणकारी थे । मुगल शासकों की धार्मिक नीति उदारता समकालीन राजनीतिक परिस्थिति और समन्वय पर आधारित होने के कारण राष्ट्रीय एकता के तत्वों को बल मिलने लगा । बुन्देलखण्ड के राजाओं ने भी अपने व्यक्तिगत धर्म को मानते हुये अन्य धर्मावलम्बियों एवं समूहों को समानता और सद्भावपूर्ण वातावरण प्रदान किया ।

ओरछा के राजाओं का धार्मिक दृष्टिकोणः

ओरछा राज्य के आदि पुरुष रुद्रप्रताप (1501 से 1531) सिकन्दर लोदी, इब्राहिम लोदी एवम् मुगल वंश के संस्थापक बाबर के

---

2. ताराचन्द्र, भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन का इतिहास, भाग-1, पृष्ठ-103.

समकालीन थे । उन्होंने इब्राहिम लोदी के समय सवा करोड़ का विशाल बुन्देला राज्य स्थापित कर लिया था । यह राज्य कालिंजर से कालपी तक फैला हुआ था । यह उल्लेखनीय है कि इब्राहिम लोदी को पराजित करने के पश्चात् बाबर ने 1528 ई0 में चन्देरी के राजा मेदनीराय को पराजित कर मालवा और चन्देरी पर अधिकार कर लिया था ।[3] बाबर ने ज्यों ही चन्देरी और कालपी को अपने अधिकार में ले लिया तो रूद्रप्रताप ने मुगलों के आक्रमण से आशंकित होकर कुड़ार के स्थान पर ओरछा को अपना सैनिक अड्डा बना लिया और 1531 में ओरछा दुर्ग का शिलान्यास कर नगर की स्थापना की थी ।[4] वे सनातनधर्म के पक्के समर्थक थे । गऊ तथा गंगा की पवित्रता में विश्वास करते थे । उनके बारे में यह कहा जाता है कि वे एक दिन ओरछा से कुड़ार जा रहे थे । उसी समय मार्ग में उन्होंने एक गाय की चीखने की आवाज सुनी उन्होंने देखा कि एक शेर गाय को पकड़े हुये है , गाय की रक्षा करना अपना धर्म कर्त्तव्य समझते हुये उन्होंने तुरन्त तलवार निकालकर शेर पर आक्रमण किया तथा उसे मार डाला । इस प्रकार उन्होंने गाय को बचाकर धार्मिक कर्त्तव्य का पालन किया ।[5] उनके समकालीन मुगल शासक बाबर के समय ओरछा राज्य पर आक्रमण अथवा मुगलों द्वारा यहाँ के धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप आदि किसी भी घटना की जानकारी प्राप्त नहीं होती । धार्मिक क्षेत्रों में बाबर ने उदारता

3. त्रिपाठी, के0पी0, बुन्देलखण्ड का वृहद् इतिहास, पृष्ठ-36.
4. वही.
5. वही.

दिखाई । वह समझता था कि गैर मुस्लिम जनता पर राज्य करने के लिये आवश्यक है कि वह उस जनता से मैत्री करके उसका सहयोग प्राप्त करें ।[6] यही कारण था कि ओरछा राज्य जो हिन्दू-संस्कृति का पोषक था वहाँ बाबर ने हस्तक्षेप नहीं किया ।

रुद्रप्रताप के पुत्रों में भारतीचन्द्र ओरछा की गद्दी पर अपने उत्तराधिकारी के रूप में आसीन हुये । वे हुमायूँ और शेरशाह सूरी के समकालीन थे । 1530 से 1540 के मध्य जब हुमायूँ और शेरशाह सत्ता के संघर्ष में आपस में उलझे रहे उसका लाभ लेकर भारतीचन्द्र ने सिन्ध से लेकर टमस तथा जमुना से लेकर नर्मदा के मध्य दो करोड़ रुपया वार्षिक आय का ओरछा का राज्य बना लिया था । उन्हीं के समय 1545 में बुन्देलों की राजधानी कुड़ार से पूर्णतः ओरछा में ले आई गई थी ।[7] भारतीचन्द्र के समय ओरछा बुन्देलखण्ड और बुन्देला राजवंश की ख्याति दूर-दूर तक फैल गयी थी । यही कारण था कि 1545 ई० में शेरशाह सूरी ने बुन्देलखण्ड के कालिंजर पर आक्रमण किया।[8] भारतीचन्द्र ने इसका मुकाबला करने के लिये अपने भाई मधुकर शाह और कीर्तिसिंह को पाँच हजार घुड़सवारों के साथ जो कालिंजर में थे । शेरशाह की मृत्यु के पश्चात् उसके पुत्र इस्लामशाह सूरी ने पूर्वी बुन्देलखण्ड को अपने अधिकार में लेकर जतारा पर अधिकार कर लिया था । किन्तु भारतीचन्द्र ने जतारा का क्षेत्र पुनः प्राप्त कर लिया था ।

---

6. पी० शरन, भारतीय इतिहास का प्रवाह, पृष्ठ-250.
7. त्रिपाठी, के०पी०, बुन्देलखण्ड का वृहद इतिहास, पृष्ठ-37.
8. वही, पृष्ठ-37.

महाराजा भारतीचन्द्र सनातन हिन्दू धर्म के कट्टर समर्थक थे ओरछा दुर्ग में विशाल परकोटा, राजमंदिर, रानीमहल आदि इमारतें उन्होंने ही बनवाई थीं ।[9]

भारतीचन्द्र के भाई मधुकरशाह ने 1545 से लेकर 1592 तक ओरछा पर शासन किया । वे भी अपने पूर्वजों की भाँति सनातन हिन्दू धर्म के कट्टर समर्थक थे और कृष्ण के उपासक थे । उनकी महारानी गणेश कुँअर राम की उपासक थीं।[10] यह उल्लेखनीय है कि मधुकरशाह मथुरा से राधव-माधव एवं युगल किशोर की मूर्तियाँ ओरछा लाये थे तथा रानी गणेश कुँअर अयोध्या से भगवान रामराजा की मूर्तियाँ ओरछा लाईं थीं जो अभी भी रामराजा ओरछा में प्रतिष्ठित हैं ।[11] भगवान युगलकिशोर की मूर्तियाँ पन्ना के राजा हिन्दू पन्ना {1758 से 1776} पन्ना स्थानान्तर ले गये थे जो वहाँ जुगलकिशोर मंदिर में प्रतिष्ठित हैं । महाराजा मधुकरशाह माथे पर एक विशेष तिलक {भगवान के चरण के आकार जैसा} लगाकर अकबर के आगरा दरबार में जाया करते थे । सम्राट अकबर ने एक बार आदेश दिया था कि कोई राजा या दरबारी दरबार में तिलक लगाकर नहीं आयेगा किन्तु मधुकरशाह अथवा मधुकरशाही तिलक लगाकर ही दरबार में जाया करते थे । मधुकरशाह के सम्बन्ध अकबर से बाद में बिगड़ गये थे । फलतः बुन्देला और मुगलों में काफी वर्षों तक संघर्ष होता रहा । मधुकरशाह ने ही ओरछा में रामराजा मंदिर का निर्माण

9. त्रिपाठी, के0पी0, बुन्देलखण्ड का वृहद इतिहास, पृष्ठ-37.
10. वही, पृष्ठ-38.
11. वही, पृष्ठ-38.

कराया तथा ओरछा में चतुर्भुज मंदिर की आधारशिला रखी । वे हिन्दू संस्कृति के समर्थक होने के साथ-साथ सर्वधर्मसम्भव की नीति में विश्वास रखते थे ।

मधुकरशाह की मृत्यु के पश्चात् उनके पुत्र रामशाह (1592 से 1605) मुगल सम्राट अकबर से भेंट करने आगरा गये तथा उन्होंने अपने पिता के समय के कार्यों के लिये मुगल सम्राट से क्षमा याचना की । उनके व्यवहार से प्रसन्न होकर अकबर ने रामशाह को ओरछा का राजा स्वीकार कर लिया था ।[12]

रामशाह के गद्दी पर बैठने के समय बुन्देलखण्ड ओरछा राज के 22 टुकड़े हो गये थे । यह विखण्डन रामशाह की प्रभावहीनता के कारण हुआ था । इससे बड़ोनी के जागीरदार, वीरसिंह काफी असन्तुष्ट थे । वे अपनी जागीर से भी संतुष्ट नहीं थे । वीरसिंह अत्यन्त महत्वकांक्षी थे । अतः 1592 ई0 में उन्होंने प्रतापराय और इन्द्रजीत को साथ लेकर समीपवर्ती क्षेत्रों जैसे पवाया, भाण्डेर, करेड़ा, बरेछा और ऐरच पर आक्रमण कर वहाँ अधिकार कर लिया ।[13] मुगल क्षेत्रों पर अधिपत्य जमाने तथा लूट की वारदातों के कारण सम्राट अकबर वीरसिंह देव से असन्तुष्ट हुआ । उन्हें परास्त करने के लिये अकबर ने आसकरन कछवाह और दौलतखाँ को भेजा तथा रामशाह को निर्देशित किया कि वे वीरसिंह के दमन में उनकी मदद करें ।[14] इस संयुक्त अभियान का दल चाँदपुर से ज्यों ही बड़ोनी घेरने में व्यस्त हुआ तो

12. तबकाते अकबरी, भाग-5, पृष्ठ-461.
13. त्रिपाठी, के0पी0, बुन्देलखण्ड का वृहद इतिहास, पृष्ठ-[illegible]
14. वही, पृष्ठ-40.

वीरसिंह बड़ौनी के जंगल में जा पहुँचा ।

उधर बुन्देलखण्ड में वीरसिंह अपने भाई रामशाह के विरुद्ध विद्रोह करते हुये मुगल क्षेत्रों में लूट तथा आतंक की कार्यवाही करते हुये अकबर के लिये सिरदर्द बने हुये थे । ऐसे ही समय अकबर के पुत्र सलीम ने 1601 ई0 में अकबर के विरुद्ध विद्रोह कर दिया था ।[15]

सलीम की आयु अधिक हो गई थी बुढ़ापा आने तक भी उसे राजपद प्राप्त न हो सका था । अतः सम्राट पद के लालची सलीम अपने उद्देश्य की प्राप्ति में अबुलफजल को सबसे बड़ा बाधक मानता था । उसी समय राजपूताने और बंगाल में विद्रोह भड़के। अकबर ने सलीम को विद्रोह का दमन करने के लिये आज्ञा दी । सलीम ने सम्राट अकबर की आज्ञा की अवहेलना करते हुये विद्रोह कर दिया। 1601 में इलाहाबाद पहुँच कर उसने अपने को सम्राट घोषित कर दिया तथा बिहार के राजकोष पर अधिकार कर लिया ।

अकबर द्वारा अबुलफजल को मंत्रणा के लिये आगरा बुलाना:

सलीम के विद्रोह से अकबर अधिक परेशान था । वृद्ध सम्राट ने इस स्थिति का सामना करने के लिये अपने विश्वासपात्र मंत्री अबुल फजल को जो उस समय दक्षिण के युद्धों में व्यस्त था उसे परामर्श के लिये आगरा बुलाया । जब इसकी जानकारी सलीम को हुई तो सलीम ने यह सोचा कि अबुल-फजल मेरे पिता अकबर को मेरे विरुद्ध परामर्श देगा जिससे अधिक अनर्थ हो सकता है ।[16] सलीम ने यह सोचा कि अकबर

15. त्रिपाठी, के0पी0, बुन्देलखण्ड का वृहद इतिहास, पृष्ठ-41.
16. वही, पृष्ठ-41.

हो कि अबुल-फजल आगरा पहुँचने ही न पाये और रास्ते में उनका बध करा दिया जाये। इस कार्य हेतु उसने अपने मित्र वीरसिंह बुन्देला को बड़ौनी से इलाहाबाद वापिस बुलाया । वीरसिंह अपने साथियों से परामर्श कर इलाहाबाद जा पहुँचे ।[17] इलाहाबाद से सलीम ने वीरसिंह को अबुलफजल का बध कर डालने को कहा । यह कार्य हो जाने पर सलीम ने वीरसिंह को ओरछा का राजा बनाने का आश्वासन दिया । सलीम की परामर्श मानकर वीरसिंह अपने पांच सौ घुड़सवारों के साथ अपनी जागीर के पास आगरा की ओर जाने वाले मार्ग पर जा छिपा । जैसे ही अबुलफजल का काफिला नर्वर और आंतड़ी के मध्य गुजर रहा था उसी समय बुन्देला घुड़सवारों ने उसे घेर लिया तथा उसका बध कर दिया । शुक्रवार 12 अगस्त 1602 को प्रातः वीरसिंह ने अबुलफजल का सिर काट लिया और चम्पतराय बुन्देला के द्वारा उसे इलाहाबाद सलीम के पास भेज दिया ।[18]

अकबर ने जब शेख अबुलफजल के बध का समाचार सुना तो उसे 1603 ई0 में त्रिपुर राजा को वीरसिंह को पकड़ने भेजा किन्तु वह ऐरछ भाग गया । वीरसिंह देव ने मुगल सेना को तंग करने के लिये आस-पास के क्षेत्रों के कुँओं को विषाक्त कर दिया था ।[19] 1604 में पुनः अकबर ने कछुआ, रायसिंह, मानसिंह भदौरिया, गोहद के जाट अब्दुल एवम् हसनखाँ से ऐरछ में वीरसिंह को घिरवाया । बेतवा के किनारे मुगल एवम् बुन्देला सेनाओं में युद्ध हुआ जिसमें रामशाह के पुत्र संग्रामशाह मारे गये ।[20]

---

17. त्रिपाठी, के0पी0, बुन्देलखण्ड का वृहद इतिहास, पृष्ठ-41.
18. वही.
19. ओरछा दरबार रिकार्ड, रजिस्टर-83.
20. वही.

जहाँगीर का राज्यारोहण:

13 अक्टूबर सन् 1605 को सम्राट अकबर की मृत्यु हो गई और सलीम जहाँगीर नाम से सम्राट बना। उसने सम्राट बनते ही वीरसिंह को आगरा बुलाया और उसे अपना पक्का मित्र मानते हुये रामशाह के स्थान पर वीरसिंह को ओरछा का राजा घोषित किया।[21] इस प्रकार मुगल सम्राट ने अपने दिये हुये वचन का पालन किया। वीरसिंह देव के ओरछा आने पर रामशाह ने उसे गद्दी देने से मना कर दिया। वे वीरसिंह से गद्दी के लिये संघर्ष करना चाहते थे। अन्त में जहाँगीर ने 1606 ई0 में अब्दुल्ला और हसनखाँ को वीरसिंह को ओरछा की गद्दी पर बैठाने के लिये भेजा। रामशाह को शाही हुक्म के विरुद्ध विद्रोह करने के अपराध में गिरफ्तार कर लिया गया।[22] 1609 में रामशाह ने अपनी पुत्री का विवाह सम्राट जहाँगीर के साथ किया कैद से मुक्त हुये और ललितपुर क्षेत्र में 3 लाख रुपये वार्षिक आय की बाट की जागीर प्राप्त की।[23]

वीरसिंह देव (1605-से 1627):

वीरसिंह देव का शासन काल मुगल बुन्देला सम्बन्धों की दृष्टि से बुन्देलखण्ड के इतिहास का स्वर्णयुग माना गया। वह अत्यन्त प्रतिभाशाली, साहसी योद्धा, कुशल नीतिज्ञ, महान् दानी, न्यायप्रिय सम्राट थे। उन्होंने 22 वर्ष राज्य किया और अपने बाहुबल, बुद्धि तथा अभिरुचि से बुन्देलखण्ड की कीर्ति को भारतीय इतिहास में स्थान

---

21. त्रिपाठी, के0पी0, बुन्देलखण्ड का वृहद इतिहास, पृष्ठ-[illegible].
22. जहाँगीर नामा, पृष्ठ-112 एवं, काशी नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग-3, अंक-4, पृष्ठ-431 तथा ओरछा स्टेट गजेटियर, पृष्ठ-21.
23. वही.

दिलाया था । मुगल सम्राट जहाँगीर उन पर पूर्ण भरोसा करता था और उनका सबसे अधिक सम्मान करता था ।[24] वह बुन्देलखण्ड एकीकरण के प्रथम प्रतीक थे । सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड और कुछ पश्चिमी बघेलखण्ड उनके सीधे शासन में था जिसमें 81 परगने 125000 ग्राम 2 करोड़ रुपया वार्षिक आय के थे ।[25] जहाँगीरी दरबार के सभी राजा और सरदार उनसे भय खाते थे । कोई भी सरदार जहाँगीर से उनके विरुद्ध शिकायत करने का साहस न कर सका । आसफरण, कछवाहा, अब्दुल रहीम खानखाना, दौलतखाँ, अब्दुल्ला खाँ, हसन खाँ, खिज़्र खनी, महाबत खाँ, खानजहाँ, जयसिंह, राजसिंह आदि सभी वीर उनके समक्ष बौने हो गये थे । वास्तविकता यह थी कि उस समय उन्होंने जिधर तलवार घुमाई कि फतह किया, जो चाहा सो लिया । वह सच्चे बुन्देल केशरी थे ।[26]

सन् 1608 ई० में उन्होंने भाई भगवान राव को महाबतखाँ के साथ मेवाड़ पर चढ़ाई करने भेजा था । 1609 ई० में वह स्वयं खानजहाँ के साथ दक्षिण देश गया था । उक्त विजय के उपलक्ष में उनका मनसब सात हजारी कर दिया गया । सम्राट जहाँगीर ने उन्हें खुर्रम के साथ 1613 ई० में उदयपुर पर चढ़ाई करने भेजा था । वीरसिंह देव के साहस और पराक्रम के कारण खुर्रम उनसे द्वेष रखने लगा था ।[27]

---

24. त्रिपाठी, के०पी०, बुन्देलखण्ड का वृहद इतिहास, पृष्ठ-43.
25. वही, पृष्ठ-43.
26. वही, पृष्ठ-43.
27. वही, पृष्ठ-43.

वीरसिंह देव व्यक्तिगत रूप से सनातन धर्म (हिन्दू) के मतावलम्बी थे । उन्होंने 12 मंदिर तथा अन्य देवालयों का निर्माण कराया ।[28] जो बुन्देली स्थापत्य-कला के चमत्कार हैं । ओरछा का चतुर्भुज मंदिर एवं शिवालय ओरछा, लक्ष्मी नारायण मंदिर ओरछा, धामेश्वर मंदिर सिन्ध नदी, देवी मंदिर भाण्डेर, विश्वेश्वर मंदिर काशी, केशव मंदिर मथुरा, आनन्दकन्द रैकढ, गणेश मंदिर वैद्यनाथ, लाडलीजी मंदिर बरसाना, देवी मंदिर रामगढ़, दतिया और पंचकुडी मंदिर उन्होंने ही बनवाये थे ।[29]

जहाँ तक अन्य धर्मावलम्बियों के प्रति उनकी नीति का प्रश्न है । वीरसिंह देव अन्य सम्प्रदायों के प्रति अत्यन्त उदार थे । उन्होंने मुस्लिम धर्मावलम्बियों के साथ ही सहिष्णुता और उदारता की नीति अपनाई । उनके अपने मित्र मुगल सम्राट जहाँगीर की ही भाँति वीरसिंह देव से सम्प्रदाय या धर्म के नाम पर किसी से अत्याचार करने की उनकी तनिक भी इच्छा नहीं थी । उनकी इस उदारता की नीति के कारण ही राष्ट्रीय एकता के तत्वों को मजबूती प्राप्त हुई । उन्होंने बुन्देला स्थापक शैली को जन्म दिया जिसमें हिन्दू तथा मुस्लिम स्थापत्य कला के तत्वों का समन्वय है।[30]

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि वीरसिंह देव ने हिन्दू-मुस्लिम एकता के तत्वों को मजबूती प्रदान करते हुये बुन्देलखण्ड में राष्ट्रीय एकता को ठोस आधार प्रदान किया ।

---

28. त्रिपाठी, के०पी०, बुन्देलखण्ड का वृहद इतिहास, पृष्ठ-45.
29. वही, पृष्ठ-45.
30. वही, पृष्ठ-44.

जुझारसिंह तथा मुगल:

वीरसिंह देव के साथ मुगल बुन्देला सम्बन्धों का जो स्वर्ण युग प्रारम्भ हुआ था वह जुझारसिंह के समय कटुता में परिवर्तित हो गया । जुझारसिंह ने 1627 से 1634 ई0 तक ओरछा की राजगद्दी को सुशोभित किया ।[31] जुझारसिंह जीवन भर युद्धों से जूझते रहे । ये शाहजहाँ के समकालीन थे और शाहजहाँ हमेशा उनका विरोध करता रहा ।[32] 28 अक्टूबर 1628 को जहाँगीर की मृत्यु होने पर खुर्रम शाहजहाँ के नाम से मुगल सम्राट बना था । परम्परा के अनुसार जुझारसिंह उनसे मिलने आगरा गये जहाँ शाहजहाँ ने उन्हें चार हजारी मनसब दिया था । चूँकि जुझारसिंह ने खुर्रम के विद्रोह के समय जहाँगीर का पक्ष लिया था । अतः शाहजहाँ उनके प्रति शंका रखने लगा था । इसके अतिरिक्त शाहजहाँ का दृष्टिकोण वीरसिंह देव जुझारसिंह तथा ओरछा राज के वैभव के प्रति विपरीत ही था ।[33]

कुछ दिनों तक आगरा में ठहरने के पश्चात् जुझारसिंह अपने पुत्र विक्रमाजीतसिंह के साथ एक दिन आधी रात को बिना शाहजहाँ से मिले चुपके से ओरछा चले आये थे । इस घटना से बादशाह ने उन्हें विद्रोही समझा[34] जुझारसिंह और शाहजहाँ के मध्य वैमनस्यता के अनेक कारण थे ।[35] जुझारसिंह को शाहजहाँ की धार्मिक नीति पसन्द

---

31. त्रिपाठी, के0पी0, बुन्देलखण्ड का वृहद इतिहास, पृष्ठ-45.
32. वही, पृष्ठ-46.
33. वही, पृष्ठ-46.
34. अब्दुल हमीद लाहौरी कृत बादशाहनामा, जिल्द-1, पृष्ठ-240.
35. त्रिपाठी, के0पी0, बुन्देलखण्ड का वृहद इतिहास, पृष्ठ-46.

नहीं थी । शाहजहाँ धर्मान्ध था तथा बुन्देलखण्ड में इस्लाम धर्म का प्रसार करना चाहता था जिसका विरोध जुझारसिंह ने किया । शाहजहाँ अपने पिता जहाँगीर और वीरसिंह देव की प्रगाढ़ मैत्री के कारण पूर्व से ईर्ष्यालु था । वह मानता था कि पिता जहाँगीर की मित्रता का लाभ उठाकर वीरसिंह देव ने ओरछा राज्य का भारी विस्तार कर लिया था । उसने करोड़ों की सम्पदा जमा कर ली थी तथा करोड़ों रुपया दान, धर्म और निर्माण कार्यों पर खर्च कर अपनी नीति को स्थाई कर लिया था ।[36] जब जुझारसिंह आगरा से सम्राट से बिना मुलाकात किये भागे तो उसने 1628 ई० में ओरछा पर आक्रमण करने के लिये आगरा से महावतखाँ को नर्वर से रामदास और भगवान राव को भेजा । चन्देरी से भारतशाह को लेकर खानजहाँ जहाँ ऐरछ की ओर से पहाड़सिंह को लेकर अब्दुल्ला भी जुझारसिंह के विरुद्ध अभियान में शामिल हुआ । शाही सेना के दबाव के कारण जुझारसिंह ने क्षमा माँग कर मुगल सेना को दक्षिण के अभियान में साथ दिया ।[37]

1632 ई० में जुझारसिंह ने चौरागढ़ दुर्ग पर अधिकार कर लिया तथा वहाँ के राजा प्रेमनारायण को मार डाला । इस घटना से शाहजहाँ जुझारसिंह से नाराज हुआ 1634 ई० में शाहजहाँ ने चौरागढ़ का क्षेत्र वहाँ के राजा हृदयशाह गौड़ को वापिस करने को कहा तथा वहाँ से लूटी हुई सम्पत्ति में से 10 लाख रुपया शाही कोष में जमा करने के लिये आदेश दिया ।[38] इन शर्तों को जुझारसिंह ने अस्वीकार कर

---

36. त्रिपाठी, के०पी०, बुन्देलखण्ड का वृहद् इतिहास, पृष्ठ-4[illegible]
37. वही, पृष्ठ-47.
38. वही, पृष्ठ-48.

किया । अतः वर्षा ऋतु समाप्त होने के पश्चात् अक्टूबर 1634 में मुगल सेना ने जुझारसिंह पर आक्रमण किया । छापामार प्रणाली से युद्ध लड़ते हुये बुन्देला सेनाओं ने मुगलों को काफी परेशान किया । युद्ध के साथ ही जुझारसिंह जब धौरागढ़ की ओर जा रहे थे उसी समय जंगल से धौरागढ़ के सैनिकों ने उन्हें घेर कर मार डाला ।

शाहजहाँ ने सुन्दर कविराय को एक पत्र के साथ जुझार सिंह के पास भेजा था, यदि जुझारसिंह ने इन शर्तों को मान लिया होता तो सम्भवतः यह स्थिति न पैदा हुई होती और जुझारसिंह को क्षमा कर दिया जाता[39] उल्लेखनीय है कि सुन्दर कविराय के साथ जुझारसिंह ने सम्मानपूर्ण व्यवहार नहीं किया । इस प्रकार जुझारसिंह पर शाहजहाँ का आक्रमण किसी धर्म पर आधारित न होकर मुगल साम्राज्य के हितों के अनुकूल था ।

जुझारसिंह के पतन के बाद चम्पतराय बुन्देला ने अपने अनुयाइयों की सहायता से ओरछा पर आक्रमण किया[40] मुगल फौजदार बकीखाँ ने उसकी गतिविधियों को रोकने की कोशिश की किन्तु वह बुन्देला की गुरिल्ला नीति (छापामार नीति) के सामने कुछ न कर सका । जनवरी 1639 में शाहजहाँ ने लाहौर जाने के लिये आगरा से प्रस्थान किया । इस समय चम्पतराय की गतिविधियाँ बुन्देलखण्ड में बहुत बढ़ गई थी । उसने मुगलों की सैनिक चौकियों पर छापा मार

---

39. रामफल सिंह, हिन्दू-मुस्लिम एकता का इतिहास, भाग-2, पृष्ठ-117.

40. वही, पृष्ठ-118.

कर दक्षिण जाने के मार्ग को असुरक्षित बना दिया था ।[41] इसलिये शाहजहाँ ने अब्दुल्ला खाँ को चम्पतराय का दमन करने के लिये भेजा। वह एक वर्ष तक उसे दबाने की कोशिश करता रहा परन्तु उसे कोई विशेष सफलता नहीं मिली । इसलिये शाहजहाँ ने उसे वापिस बुला लिया और इसके स्थान पर बहादुरखाँ रुहेला को भेजा यह भी असफल रहा । फिर दोबारा अब्दुल्ला खाँ को भेजा वह भी स्थिति में सुधार बहुत कम कर सका ।

इसके बाद सम्राट ने पहाड़सिंह को जो वीरसिंह देव का पुत्र था अपनी मातृभूमि में विद्रोह को दबाने के लिये भेजा । वह मई 1642 ई0 में बुन्देलखण्ड आया और एक महीने के अन्दर चम्पतराय ने आत्म-समर्पण कर दिया और उसकी सेना में भी भर्ती हो गया और सम्राट ने स्वीकृति प्रदान कर दी । कुछ समय के लिये ऐसा प्रतीत हुआ कि चम्पतराय ने पहाड़सिंह की पूरी शक्ति के साथ सेवा की परन्तु पहाड़सिंह चम्पतराय की प्रसिद्धि से ईर्ष्या रखने लगा इसलिये चम्पतराय ने उसे छोड़ दिया और दारा की सेना में भर्ती हो गया ।

पहाड़सिंह के साथ अपने खराब सम्बन्धों के होते हुये भी चम्पतराय ने उससे दिखावे के लिये सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध बनाये रखने की कोशिश की । परन्तु पहाड़ सिंह उससे ईर्ष्या रखता था और एक अवसर पर उसने उसे जहर देने की भी कोशिश की । दूसरे अवसर पर पहाड़ सिंह ने चोरी का माल उसके कैम्प में रखवा दिया और बदनाम करने

---

41. रामकल सिंह, हिन्दू-मुस्लिम एकता का इतिहास, भाग-2, पृष्ठ-118.

की कोशिश की । चम्पतराय ने दारा से इस बात की शिकायत की। बिना जाँच पड़ताल किये दारा ने पहाड़ सिंह पर विश्वास किया और चम्पत राय से उसकी जागीर छीन ली । इससे वह राज कुमार से अलग हो गया और मुगलों के प्रति फिर उग्र हो गया । इसका बदला चम्पतराय ने दारा से उस समय लिया जब उसने औरंगजेब को एक अज्ञात मार्ग चम्बल नदी पार करने के लिये बताया तथा सामूगढ़ की लड़ाई में वह औरंगजेब की ओर से लड़ा । परन्तु औरंगजेब के साथ चम्पतराय का समझौता क्षणिक ही रहा ।

शाहजहाँ के साथ बुन्देलों के संघर्ष से यह पूर्ण रूप से स्पष्ट है कि इस संघर्ष में धर्म का प्रभाव कम था । यह संघर्ष पूर्ण रूप से राजनीतिक था । हिन्दू भी शाहजहाँ के साथ मिले रहे । और इस प्रकार हिन्दू-मुस्लिम एकता बनी रही ।[42]

बुन्देलखण्ड के राजाओं और मुगलों के बीच में जो युद्ध हुये उनका आधार धर्म नहीं था बल्कि महत्वपूर्ण राजनीतिक महत्वाकाँक्षायें थीं ।औरंगजेब के शासन के अन्त में मुगल साम्राज्य का विघटन प्रारम्भ हो गया था और इस विघटन की प्रक्रिया में बुन्देलखण्ड में छत्रसाल के विद्रोह शुरु हो गये थे । छत्रसाल एक महान विजेता होने के साथ-साथ हिन्दू धर्म और संस्कृति के महान् समर्थक थे । उन्होंने दक्षिण भारत में शिवाजी से भेंट की थी[43] शिवाजी ने उन्हें बुन्देलखण्ड में हिन्दू धर्म

42. सक्सेना, बी०पी०, हिस्ट्री ऑफ शाहजहाँ ऑफ देहली, पृष्ठ 79-93.
43. रामफल सिंह, हिन्दू-मुस्लिम सांस्कृतिक एकता का इतिहास, भाग-2, पृष्ठ-165.

और हिन्दू संस्कृति की रक्षा के लिये कार्य करने के लिये कहा था ।

छत्रसाल के गुरु प्राणनाथ जिन्होंने प्रणामी सम्प्रदाय की स्थापना की थी । गुरु प्राणनाथ उनके लिये इसी प्रकार थे जिस प्रकार शिवाजी के प्रेरणा के स्त्रोत गुरु रामदास थे । छत्रसाल व्यक्तिगत तौर पर हिन्दू धर्म के समर्थक थे लेकिन उन्होंने अन्य धर्मावलम्बियों के प्रति पूर्ण उदारता एवं सहिष्णुता की नीति अपनाई और इस प्रकार राष्ट्रीय एकता के तत्वों को मजबूत किया ।

<u>बुन्देलखण्ड में इसाई धर्म प्रचारकों को दिया गया सहयोगः</u>

बुन्देलखण्ड मूलतः हिन्दुओं के प्रभुत्ववाला क्षेत्र रहा है । अतः वर्ण व्यवस्था तथा जाति-प्रथा का उदय इस क्षेत्र में हिन्दू संस्कारों के कारण हुआ । ब्राहम्ण, क्षत्रिय तथा वैश्य समाज के प्रभावशाली लोग थे जो अन्य निचली जातियों पर अपना प्रभुत्व बनाये रखने में सफल रहे।[44] व्यापारी आर्थिक क्षेत्र में अपना प्रभुत्व बनाये हुये थे । और बुन्देलखण्ड अर्थव्यवस्था वैश्यों के हाथ में थी । जिन्होंने जातीय संगठन को मजबूत किया तथा अपने प्रभाव और शक्ति में बराबर वृद्धि की । ब्राहम्ण तथा क्षत्रियों ने समाज के प्रभावशाली लोगों के रूप में अपने को स्थापित कर लिया था । धार्मिक नेता होने के कारण ब्राहम्ण समाज में पूज्यनीय थे, जबकि इस देश के शासक होने के नाते क्षत्रिय पहले से ही प्रभावशाली थे । वर्णव्यवस्था में सबसे खराब स्थिति शूद्रों अथवा हरिजनों की थी क्योंकि

44. ए क्रिटीकल इन्क्वारी इन टू द बुन्देलखण्ड मसीही मिश्न समाज वर्क इन द बुन्देलखण्ड ऐरिया, पृष्ठ-2.

संख्या की दृष्टि से यह वर्ग काफी था ।[45] यही वर्ग ईसाई धर्म के प्रचार तथा प्रसार का आधार बना ।

राजनैतिक दृष्टि से भारत के मध्य में स्थित होने के कारण बुन्देलखण्ड राजनैतिक उथल-पुथल का केन्द्र भी रहा । 15 वीं तथा 16 वीं शताब्दियों में बुन्देला ठाकुरों के आधिपत्य में धीरे-धीरे बुन्देलखण्ड मुगल, बुन्देला तथा मराठाओं के संघर्ष का क्षेत्र हो गया । महाराजा वीरसिंह देव ने बुन्देलों की स्वतन्त्रता का उद्घोष किया जिसे जुझारसिंह, चम्पतराय तथा छत्रसाल बुन्देला ने विकसित करते हुये बुन्देलों के स्वतन्त्र शासक की स्थापना की । छत्रसाल के समय में बुन्देलों और मराठियों की दोस्ती प्रारम्भ हुई ।[46] किन्तु स्वार्थों की टकराहट और आपसी विवादों के परिणामस्वरूप बुन्देलखण्ड की विभिन्न शक्तियों ने एक-दूसरे को नीचा दिखाना प्रारम्भ किया । आपसी फूट ने इस क्षेत्र में अंग्रेजी प्रभुसत्ता के प्रारम्भ कराने में सहायता की । फलतः 1804 में यहाँ अंग्रेजी शासन की स्थापना हुई ।

अंग्रेजी शासन काल में बुन्देलखण्ड का व्यापक आर्थिक शोषण हुआ । कठोर राजस्व नीति तथा कुटीर उद्योग धन्धों को हतोत्साहित करने की नीति के कारण उपनिवेशवादी अर्थव्यवस्था के घातक परिणाम हुये ।[47] जिसके पीछे दृष्टिकोण यह था कि बुन्देलखण्ड को सामाजिक तथा

---

45. ए क्रिटीकल इन्क्वायरी इन टू द बुन्देलखण्ड मसीही मिशन स्थापन वर्क इन द बुन्देलखण्ड ऐरिया, पृष्ठ 2-3.
46. पाठक, एस0पी0, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ 8-9.
47. वही, पृष्ठ-66.

आर्थिक रूप से पिछड़ा बनाया रखा जाये । कठोर राजस्व की दरों के कारण जैनियों तथा मारवाड़ियों के ऋण देनेवाले व्यापार में काफी वृद्धि हुई । अतः जनता शोषण की इस प्रकृति के परिणामस्वरूप गरीब तथा बेरोजगार हुई ।[48]

बुन्देलखण्ड मिशन का प्रारम्भः

1648 में इंग्लैण्ड क्वेकर आन्दोलन प्रारम्भ हुआ[49] अमेरिका में यह आन्दोलन 1660 में प्रारम्भ हुआ । अमेरिका के ओहियो नगर में ईसाई मिशनरियों की वार्षिक बैठकें प्रारम्भ हुई जिसमें यह निर्णय किया गया कि बुन्देलखण्ड की अंग्रेजी छावनियों में मिशनरियों को भेजकर ईसाई धर्म का प्रचार किया जाये । 19 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में बुन्देलखण्ड अंग्रेजी छावनी नौगाँव में अनाथालय तथा स्कूल की स्थापना कर धर्म प्रचार का कार्य 1893 में इसी मिशन ने प्रारम्भ किया । मिशनरियों द्वारा बुन्देलखण्ड के अकाल पीड़ितों की सहायता की गई तथा गरीबों की सेवा का कार्य इन मिशनरियों ने अपने हाथों में लिया। ईसाई मत के प्रचार और प्रसार के इस कार्य में तथा मानवता की सेवा के प्रयास में बुन्देलखण्ड की रियासतों के अनेक राजाओं ने इन मिशनरियों की सहायता की तथा उन्हें स्कूल, अस्पताल आदि बनाने के लिये भूमि दान में दी । अलीपुर[50] के महाराजा ने इन मिशनरियों को अस्पताल बनाने के लिये जमीन दान में दी । धीरे-धीरे बुन्देलखण्ड में अनेकों मिशन तथा अस्पताल स्थापित किये गये । यह मिशनरी धर्म प्रचार के कार्य के लिये

---

48. पाठक, एस0पी0, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-86.
49. ए क्रिटीकल इन्क्वायरी इन टू द बुन्देलखण्ड मसीही मित्र समाज वर्क इन द बुन्देलखण्ड डेयरी, पृष्ठ-9.
50. छतरपुर से 40 किलोमीटर उत्तर .

बुन्देलखण्ड के लोगों को ही नियुक्त करते थे । बुन्देलखण्ड मिशन की स्थापना अमेरिकन मिशन द्वारा की गई थी ।[51] अमेरिकन फ्रेन्ड्स मिशन ने बाद में चलकर बुन्देलखण्ड मिशन का कार्य यहाँ के प्रोटेस्टेन्ट ईसाईयों को सौंप दिया और अमेरिकन फ्रेन्ड्स मिशन बाह्य रूप से इस मिशन की सहायता करने लगा ।[52]

इस मिशन की अनेकों सहयोगी संस्थायें भी बुन्देलखण्ड में स्थापित की गईं जैसे:- इवेन्जेलिकल फैलोशिप ऑफ इण्डिया, अमेरिकन फ्रेन्ड्स मिशन, ओरियन्टल मिशनरी सोसायटी आपरेशन मोबलाइजेशन, डिसीप्लेन सेन्टर, क्रिश्चियन एजुकेशन, डिपार्टमेन्ट आदि [53] अमेरिकन फ्रेन्ड्स मिशन का मुख्यालय ओहियो में था ।[54] इस मिशन के धर्म प्रचारक बुन्देलखण्ड के पिछड़े हुये क्षेत्रों जैसे- नौगाँव , छतरपुर, हरपालपुर, कुल पहाड़ आदि को केन्द्र बनाकर गतिविधियों का संचालन करने लगे।[55] जिस प्रकार अलीपुर के राजा ने इन मिशनरियों को दान में भूमि प्रदान की थी । ठीक उसी प्रकार छतरपुर के रियासत में भी इन मिशनरियों को अस्पताल खोलने के लिये भूमि दान दी । इन राजाओं के सहयोग से मिशनरियों ने बिजावर, घौरा, मलेहरा, राजनगर, नौगाँव, छतरपुर जैसे ग्रामीण क्षेत्रों में सहायता सभायें प्रारम्भ कर धर्म प्रचार प्रारम्भ किया।

---

51. ए क्रिटीकल डाक्यूमेन्टरी इन ट द बुन्देलखण्ड मसीही मिशन ऑफ वर्क इन द बुन्देलखण्ड ऐरिया, पृष्ठ-10.
52. वही.
53. वही.
54. वही, पृष्ठ 11-12.
55. वही.

प्रोटेस्टेण्ट मिशनरियों द्वारा बुन्देलखण्ड में शिक्षा का प्रसारः

बुन्देलखण्ड के पिछड़े हुये क्षेत्र में जहाँ अकालों प्राकृतिक आपदाओं आदि से गरीबी, भुखमरी और बेरोजगारी फैल रही थी, वहाँ प्रोटेस्टेण्ट मिशनरियों ने धर्म प्रचार की दृष्टि से न केवल अनाथालय ही बल्कि अस्पताल भी खोले । उन्होंने स्कूलों की स्थापना कर यहाँ के बच्चों को शिक्षित कर धर्म प्रचार के कार्य को तेज किया ।

यहाँ की व्याप्त गरीबी का चित्रण करते हुये अमेरिकन मिशनरी डेलिया फिशर ने लिखा था कि "ऐ मित्रों बुन्देलखण्ड के पिछड़े हुये क्षेत्र में आओ यहाँ की भूख से मरने वालों की संख्या बहुत अधिक है, यहाँ के लोग दयनीय स्थिति में हैं ।" इसलिये आवश्यकता इस बात की है हम उनके लिये ईश्वर से प्रार्थना करें । यहाँ की गरीबी का चित्रण कलम के द्वारा नहीं किया जा सकता । ऐसे क्षेत्र में ईसा मसीह के दूत बहुत कम संख्या में पहुँच सके हैं । अतः यहाँ बहुत अधिक कार्य करने की आवश्यकता है ।[56] डेलिया फिशर ने सर्वप्रथम लखनऊ से नौगाँव पहुँच कर बुन्देलखण्ड के लोगों की सेवा करने का बीड़ा उठाया।[57] फिशर इंग्लेण्ड के क्वेकर आन्दोलन से प्रभावित थी । इस आन्दोलन के अनुयायी स्वयं को फ्रेन्डस (मित्र) शब्द से सम्बोधित करते थे । क्योंकि ईसामसीह ने कहा था कि आप हमारे मित्र हैं यदि मेरे द्वारा किये गये आन्दोलन को मानते हैं चूँकि ईसामसीह की अंतिम इच्छा यह थी कि

---

56. ए सेन्चुरी ऑफ प्लान्टिंग, ए हिस्ट्री ऑफ द अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन इन इंडिया वाई0 ई0 अम्मा निक्सन प्रिफेस ।

57. वही।

उनके आदर्शों को प्रत्येक जीवधारी तक पहुँचा दिया जाये । अतः इसी उद्देश्य को लेकर डेलिया फिशर ई0 वैयेंड और अन्ना निक्सन जैसी अनेकों मित्र महिला मिशनरियों ने बुन्देलखण्ड के विशाल क्षेत्रों में इस प्रेरणा को लेकर पदार्पण किया ।[58] बुन्देलखण्ड में अमेरिकन फ्रेन्ड्स मिशन के कार्य के प्रारम्भ का उद्देश्य शिक्षा तथा चिकित्सा की सुविधायें प्रदान करते हुये लोगों को नये धर्म की ओर आकृष्ट करना था ।[59]

डेलिया फिशर तथा ई0 वर्ड का बुन्देलखण्ड आगमनः

अंग्रेजी शासन काल में 1804 से लेकर बुन्देलखण्ड में आर्थिक शोषण के कारण गरीबी, बेकारी तथा अशिक्षा अपनी चरम सीमा पर पहुँच चुकी थी । व्याप्त अकालों के कारण लोग भुखमरी की कगार पर आ गये थे । ऐसे समय में अमेरिकन मिशनरियों ने इस पिछड़े क्षेत्र में प्रवेश कर ईसाई धर्म के प्रचार का कार्य प्रारम्भ किया । 1892 में अमेरिकन फ्रेन्ड्स मिशन को डेलिया फिशर ने 25 वर्ष की अवस्था में एक नर्स ई0 वर्ड के साथ लखनऊ पदार्पण किया । और थोड़े ही दिनों में उन दोनों महिलाओं ने बुन्देलखण्ड के नौगाँव क्षेत्र में आकर धर्म प्रचार का कार्य अपने हाथ में ले लिया ।[60] उस समय वर्ड की उम्र 33 वर्ष की थी जो एक ट्रेण्ड नर्स थी । उन दिनों महिलाओं ने ही नौगाँव में अमेरिकन फ्रेन्ड्स मिशन के कार्य का प्रारम्भ किया था । ऐसा कहा जाता है कि बचपन से ही डेलिया के मन में भारत आकर सेवा करने की भावना

---

58. ए सेन्चुरी ऑफ प्लान्टिंग, ए हिस्ट्री ऑफ द अमेरिकन फ्रेन्ड्स मिशन इन इंडिया बाई0 ई0 अन्ना निक्सन प्रिफेस.

59. वही, पृष्ठ-14.

60. वही, भूमिका, पृष्ठ 9-10.

विद्यमान थी ।[61] 19 वर्ष की अवस्था में उन्होंने धार्मिक कार्यों के लिये इवेन्जेलिकल चर्च में प्रवेश किया जिसमें सदस्य उनके माँ-बाप भी रह चुके थे । बाद में उनका सम्पर्क अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन के सहयोगियों से हुआ । अतः फ्रेन्डस् मिशनरी सोसाइटी बोर्ड के सम्पर्क से उन्होंने बुन्देलखण्ड के पिछड़े हुये क्षेत्र में जाकर ईसा मसीह का संदेश लोगों तक पहुँचाने का कार्य किया ।

1892 में उपरोक्त फ्रेन्डस मिशन के महिलाओं का दल जो भारत आया था उसमें इन दोनों महिलाओं ने मुख्य भूमिका निभाई थी । इसी बोर्ड के अन्तर्गत 1887 में कुछ धर्म प्रचारक महिलायें चीन भी भेजी गयी थीं ।[62] इन महिलाओं के साथ एक तीसरी महिला मेय बारबर भी आई थी ।[63] अतः 30 अगस्त् 1892 को ये तीनों महिलायें धार्मिक कार्यों हेतु भारत आयीं । इन तीनों विदेशी महिलाओं के समक्ष अनेकों समस्यायें भी थीं । उदाहरण के लिये धन की कमी के कारण वे एक विस्तृत मिशन की स्थापना प्रारम्भ में नहीं करना चाहती थीं । इससे परिचित भी नहीं थी। इसके साथ ही भारतीय भाषा प्रथाओं तथा संस्कृति से वे पूर्णतः परिचित भी नहीं थीं । अतः मिशन बोर्ड ने यह निर्णय लिया कि इन महिला मिशनरियों को भारत में कार्यरत अन्य मिशनरियों की देख-रेख के अन्तर्गत कार्य करने के लिये भेजा जाये ।

मेय बारबर उन दिनों अकालों में कार्यरत ईसाई मिशनरी फुलर से परिचित थीं । और उन दोनों के बीच पत्राचार भी होता था।

---

61. ए सेन्चुरी ऑफ प्लान्टिंग, ए हिस्ट्री ऑफ द अमेरिकन फ्रेन्डस् मिशन इन इंडिया, भाई0सी0 अन्ना निक्सन प्रोफेस, भूमिका, पृष्ठ 9-10.

62. वही, पृष्ठ 10-11.

63. वही.

अतः तमाम चर्चाओं के बाद इन महिलाओं ने भारत की ओर प्रवेश किया । जिस समय समुद्री जहाज पर अपनी यात्रा के लिये उन्होंने प्रस्थान किया उस समय मैरीथामस नामक महिला मिशनरी ने लिखा था हमारी भारत यात्रा सामूहिक यात्राओं की महत्वपूर्ण घटनाओं में से एक है । अच्छा होता कि भारत पहुँचने के लिये हमें इतनी अधिक समुद्री दूरी तय न करनी पड़ती ।[64] इस प्रकार 28 दिसम्बर 1892 को इन अमरीकी महिला मिशनरियों का दल बम्बई पहुँचा[65] जहाँ पर ब्रिटिश सेना के अधिकारियों ने उनका स्वागत किया । थोड़े ही दिनों बाद डेलिया तथा वर्ड दोनों मथुरा पहुँचीं । डेलिया को मथुरा के ट्रेनिंग स्कूल का कार्यभार सौंप दिया गया । यह स्कूल ईसाई कार्यकर्ताओं को ट्रेनिंग प्रदान करता था । इसी प्रकार वर्ड ने एक अस्पताल में नर्स के रूप में सेवा-कार्य प्रारम्भ कर दिया ।[66] वहाँ से उन दोनों महिलाओं को बरेली भेज दिया गया । तत्पश्चात् बिजनौर में इनकी नियुक्ति की गई जहाँ पर कुछ अंग्रेजी परिवार रहते थे । वहाँ पर उन महिलाओं ने हिन्दी का ज्ञान भी प्राप्त किया ।[67]

भारत आने के चार महिने बाद यहाँ की गर्मी का प्रभाव उन महिला मिशनरियों को दिखाई देने लगा । गर्मी के मौसम की गर्म हवाओं में ये अभ्यस्त नहीं थीं, इस प्रकार मई तथा जून के महीने में डेलिया ने नैनीताल तथा मर्थ वर्ड ने मँसूरी में व्यतीत किये ।[68] इसा

---

64. ए सेन्चुरी ऑफ प्लान्टिंग, ए हिस्ट्री आफ द अमेरिकन मेथडिस्ट मिशन इन इंडिया, वाइ०एस०, अम्मी निपसन प्रेफिस, पृष्ठ 10-11.
65. वही, पृष्ठ 10-12.
66. वही,
67. वही.
68. वही.

समय इन मिशनरियों को इस आशय के पत्र प्राप्त होते रहते थे कि भारत में फ्रेण्ड्स मिशन की स्थापना की जाये ।

मिशनरी कार्यों के प्रारम्भ के लिये ये महिलायें भारत में उचित् स्थान की तलाश में थीं । सबसे पहले गुना की ओर इनका ध्यान गया, किन्तु ठीक प्रकार से मकान न होने के कारण वहाँ से इनका इरादा बदल गया ।[69] उसी समय लखनऊ में एक चर्चा के दौरान नौगाँव सैनिक छावनी का उल्लेख आया जो ब्रिटिश सेना का मुख्यालय था । वहाँ पोलिटिकल एजेन्ट तथा पुलिस अधीक्षक का भी कार्यालय था । इस कस्बे के आस-पास देशी रियासतें थीं । वहाँ के समीप गाँव में लगभग एक लाख लोग निवास करते थे । लखनऊ में थोबोन नामक पादरी ने डेलिया से साथ बात-चीत में कहा था कि बुन्देलखण्ड का 9852 वर्ग मील का क्षेत्र मिशनरी कार्यों के लिये अछूता पड़ा है जिसे आपको अपने हाथ में लेना चाहिये । नौगाँव के चारों ओर स्थित यह क्षेत्र इस कार्य के लिये सर्वथा उपयुक्त है । साथ ही यहाँ स्थित अंग्रेजी सेना आप लोगों की सुरक्षा का उचित् बन्दोबस्त भी करेगी । इन दोनों महिलाओं ने इस प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार कर लिया और नौगाँव में एक किराये का बँगला लेकर मिशनरी कार्य को प्रारम्भ किया ।

डेलिया का नौगाँव आगमनः

9 दिसम्बर 1895 को अमेरिकन फ्रेण्ड्स मिशन की ओर से डेलिया को सुपरिन्टेन्डेन्ट, ऐस्थर को कोषाध्यक्ष तथा मर्था को आडीटर

---

69. ए सेन्चुरी ऑफ प्लान्टिंग, ए हिस्ट्री ऑफ द अमेरिकन फ्रेण्ड्स मिशन इन इण्डिया बाई0ई0 अन्ना निक्सन प्रीफेस, पृष्ठ-16.

नियुक्त किया गया और इस प्रकार इन महिलाओं ने फ्रेण्ड्स मिशन की स्थापना की ।[70] उस समय गर्मी के मौसम का प्रारम्भ हो चुका था तथा बुन्देलखण्ड में चारों ओर अकाल पड़ा हुआ था । चारों ओर गर्म हवायें तेजी से चल रहीं थीं। इस विपरीत स्थिति के बावजूद भी ये महिलायें अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिये जुटी हुई थीं । प्रारम्भ में ईसाई धर्म के सन्देशों की ओर लोग अधिक आकृष्ट नहीं हुये । जब ये गाँव में जातीं थीं तो अकाल पीड़ित लोग उनसे रोटी और कपड़े की माँग करते थे । यह अकाल का तीसरा वर्ष था । लोग पेड़ों की पत्तियाँ खाकर किसी तरह गुजर कर रहे थे ।[71] अकाल के वातावरण में भूखे, नंगों की मदद में उन मिशनरियों का सारा पैसा खर्च हो गया था , अतः उन्होंने अमेरिका स्थित अपने बोर्ड को और अधिक आर्थिक सहायता देने का आग्रह किया ।

ये महिलायें ऐसे बच्चों को लाकर नौगाँव मिशन में रखतीं थीं जिनके माँ-बाप नहीं थे । एक घुड़साल को साफ करके इन बच्चों को रहने के लिये जगह बनाई गई थी । इनकी देख-रेख का कार्य ऐस्थर नामक नर्स किया करती थी । इसके अतिरिक्त छावनी में रहने वाले अंग्रेजी सेनाओं को भी प्रार्थना कराने का कार्य डेलिया ही किया करती थी। 1896 के अकाल में बुन्देलखण्ड की 2 लाख 25 हजार वर्ग भूमि प्रभावित हुई थी।[72] इससे प्रभावित लोगों की जनसंख्या लगभग 6 करोड़

---

70. ए सेन्चुरी ऑफ प्लान्टिंग ए हिस्ट्री ऑफ द अमेरिकन फ्रेण्ड्स मिशन इन इण्डिया, वाई0सी0 अम्नीर निक्सन,प्रीफेस, पृष्ठ-16.
71. वही, पृष्ठ-17.
72. वही, पृष्ठ 17-18.

50 लाख थी । 1891 से लेकर 1901 के बीच बुन्देलखण्ड की 9 प्रतिशत जनसंख्या समाप्त हो चुकी थी ।

ऐसी कठिन परिस्थिति में काफी अन्तराल के बाद 1600 डालर डेलिया को अमरीकी मिशनरियों से प्राप्त हुआ । बाद में चलकर 40,210-56 डालर का चन्दा अन्य लोगों ने भी दिया जिससे अकाल पीड़ितों के लिये कपड़ा, कम्बल तथा अन्य सहायता दी गई।[73]

अनाथालय का प्रारम्भ :

1895-96 के अकालों की विभीषिका के परिणाम स्वरूप तमाम असहाय बच्चों को उनके माँ तथा बाप नौगाँव के मिशन में ऐस्थर तथा डेलिया की देख-रेख में छोड़ जाते थे ।[74] यद्यपि उनके माता-पिताओं ने उन बच्चों को छोड़ते हुये यह कहा था कि अकाल की समाप्ति के बाद वे उन्हें वापस लेने आयेंगे, लेकिन गरीबी के प्रकोप में वे वापस नहीं लौटे । ऐसी परिस्थिति में डेलिया ने नौगाँव में एक अनाथालय खोला जिसमें उन गरीब बच्चों की देख-रेख की जाती थी ।[75] इतना सब कुछ करने के बावजूद भी डेलिया आस-पास के गाँवों में लोगों को आसानी से ईसाई-धर्म में दीक्षित न कर सकी । लेकिन धीरे-धीरे अनाथालय में रखे गये बच्चों का पालन-पोषण तथा शिक्षा-दीक्षा इस प्रकार की दी गई कि वे ईसाई बना लिये गये । इस अनाथालय में 500 बच्चों को प्रारम्भ में शरण दी गई ।[76]

---

73. ए सेन्चुरी ऑफ प्लान्टिंग, ए हिस्ट्री ऑफ द अमेरिकन फ्रेंड्स मिशन इन इण्डिया बाई0डी0 अन्ना निक्सन प्रीफेस, पृष्ठ 17-18.
74. वही, पृष्ठ-18.
75. वही.
76. द प्लान्टिंग ए चर्च , पृष्ठ-18.

अमेरिकन फ्रेण्डस् मिशन की इन ईसाई महिलाओं ने एक भारतीय महिला पंडिता रमाबाई को अनाथालय की देख-रेख तथा विधवाओं आदि की मदद करने के लिये कार्य-भार सौंपा । पंडिता रमाबाई पूना के निकट केडगाँव की रहने वाली थीं ।[77] वह पूना से नौगाँव कई बार अनाथ बच्चों , विधवाओं तथा निम्न जाति के तिरस्कृत बच्चों को लेने के लिये जा चुकी थीं । नौगाँव के फ्रेण्डस् मिशन में 81 लड़के तथा 3 लड़कियाँ , मिशन परिवार के सदस्य के रूप में स्थायी रूप से रख ली गयी ।[78] इस मिशन के अन्तर्गत एक अन्धी महिला जो लखनऊ की रहने वाली थी और जिसका नाम चारलौट बाई था ।[79] को नौकरी देकर इस मिशन में रख लिया गया । निःसन्देह चारलौट बाई, अपंग थी, किन्तु फिर भी अपनी योग्यता और क्षमता से उसने अधिकांश लोगों को प्रभावित कर रखा था । इस प्रकार वह धीरे-धीरे इस नये अनाथालय में प्रेरणा का स्रोत बन गई जिससे यहाँ पल रहे बच्चे उससे अधिक प्रभावित हुये ।

इस अनाथालय के बच्चे उसकी सेवाओं को कभी भूल नहीं पायेंगे । डेलिया फिशर के कार्यों से नौगाँव का मिशन दिन-प्रति-दिन सशक्त होता चला गया । अपने भारत छोड़ने से पूर्व उसने अमेरिकन मिशन बोर्ड को एक पत्र लिखकर यह प्रार्थना की थी कि इस क्षेत्र में एक मिशन का स्थायी रूप से मुख्यालय बनाने के लिये 5 हजार डालर की सहायता प्रदान की जाये ।[80] यह उल्लेखनीय है कि नौगाँव

---

77. द प्लान्टिंग ए चर्च , पृष्ठ-18.
78. वही.
79. वही.
80. वही, पृष्ठ-19.

में मिशन के कार्य का प्रारम्भ एक किराये के मकान में हुआ था । किन्तु हैलिया की यह सिफारिश असफल सिद्ध हुई । नवम्बर 1891 के प्रारम्भ में हैलिया नौगाँव से अमेरिका वापस पहुँची । तत्पश्चात् उसने अमेरिकन मिशन बोर्ड के सामने नौगाँव में मिशन के निर्माण के लिये आर्थिक सहायता प्राप्त करने हेतु दलीलें पेश की ।[81] अन्ततः उसकी बात को स्वीकार कर लिया गया और बोर्ड ने इस कार्य हेतु मदद देने का निश्चय किया । थोड़े ही दिन पश्चात् सितम्बर 1898 में मर्था बारबर अमेरिका वापस पहुँची । उसके स्थान पर अन्ना एक्स्टन को हैलिया के साथ 1899 में भारत भेजा गया । इसके साथ ही नौगाँव मिशन के अन्तर्गत चलाये जा रहे अनाथालय में पारलीटे बाई के निरन्तर प्रयासों से प्रगति हो रही थी । ठीक उसी प्रकार नौगाँव के पोलिटिकल ऐजेन्ट ने वहाँ मिशन की इमारत निर्माण के पत्रों पर हस्ताक्षर करने के पूर्व ही स्थानान्तरण का शिकार होना पड़ा । नये पोलिटिकल एजेन्ट ने इस योजना को यह कहकर स्थगित कर दिया कि अनाथालय ब्रिटिश ऐजेन्सी के अधिक समीप है । अतः उसने 10 एकड़ जमीन अन्यत्र इस कार्य हेतु देने का निश्चय किया जिसे बाद में हैलिया ने स्वीकार कर लिया ।[82]

28 जून 1900 ई0 को 13 एकड़ जमीन नौगाँव में मिशन के कार्य हेतु 18 डालर प्रति वर्ष के किराये पर दे दी गई । इस प्रकार जून 1901 में अनाथालय भवन का निर्माण पूरा हुआ ।[83] उसी के समीप

---

81. ए सेन्चुरी आफ प्लान्टिंग, ए वर्ष, पृष्ठ 20-21.
82. वही.
83. वही.

चारलोट बाई को रहने के लिये एक कमरा दे दिया गया ।

अनाथालय के भवन के निर्माण के साथ ही अमेरिकन फ्रेण्ड्स् मिशन द्वारा प्राप्त सहायता-धनराशि समाप्त हो गई । किन्तु 1902 में एक बंगले के निर्माण के लिये आधारशिला रखी जा चुकी थी जिसे बाद में आर्थिक मदद भी प्राप्त हुई जनवरी 1903 तक यद्यपि यह इमारत पूर्ण नहीं हो सकी थी . किन्तु फिर भी मिशनरियों ने उसमें प्रवेश कर लिया था और अप्रैल के महीने तक इस इमारत का कार्य भी पूर्ण हो गया ।[84] इस प्रकार डेलिया के प्रयासों से नौगाँव में अमेरिकन फ्रेण्ड्स् मिशन के अन्तर्गत एक अनाथालय तथा एक निवास हेतु इमारत का निर्माण कार्य पूरा हो गया था । अब आवश्यकता इस बात की थी कि नौगाँव के मिशन में बच्चों की शिक्षा के लिये एक स्कूल की स्थापना की जाये ।

नौगाँव में मिशन स्कूल का प्रारम्भः

बुन्देलखण्ड के इस पिछड़े हुये क्षेत्र में अमेरिकन फ्रेण्ड्स् मिशन की महिला मिशनरियों ने नौगाँव की अनाथालय में पल रहे बच्चों तथा आस-पास के बच्चों को शिक्षित करने के लिये एक स्कूल के प्रारम्भ करने की आवश्यकता महसूस की । शिक्षा के क्षेत्र में लगभग यह क्षेत्र शून्य था । अतः डेलीजा फ्रेंक लेण्ड जो इंग्लिश फ्रेण्ड्स् मिशन की एक अवकाश प्राप्त महिला थी, वह नौगाँव पहुँचकर यहाँ के अनाथालय के बच्चों के लिये स्कूल की व्यवस्था कर सकने में सफल हुई । साथ ही साथ उन्होंने नौगाँव

84. ए सेन्चुरी ऑफ प्लान्टिंग ए चर्च, पृष्ठ 20-21.

के बाजार में लड़कियों के लिये एक स्कूल खोले जाने पर भी विचार करना प्रारम्भ किया।[85] इससे पहले बुन्देलखण्ड में लड़कियों के लिये कोई उचित स्कूल नहीं था। रूबीना के आगमन से नौगाँव के मिशन में स्टाफ की कमी की पूर्ति हो सकी। विशेषतः यह देखते हुये कि डेलिया, मर्था और रेल्यर को अब अपने देश वापस लौटना था।[86] थोड़े ही दिन बाद नौगाँव के बाजार में एक स्कूल का प्रारम्भ हुआ जिसकी देख-रेख अन्ना स्केटर नामक मिशनरी कर रही थी। इस स्कूल में लगभग 100 किताबों की एक लाइब्रेरी की व्यवस्था की गई। यद्यपि वहाँ शिक्षित लोगों का अनुपात केवल 2 प्रतिशत ही था। चूँकि इन दिनों नौगाँव के स्कूल में क्रिश्चियन अध्यापक उपलब्ध नहीं थे। अतः अनाथालय के बच्चों की शिक्षा के लिये एक हिन्दू महिला अध्यापक की नियुक्ति कर दी गयी। निःसन्देह वह प्रतिभावान थी तथा इस कार्य में सहयोग कर रही थी किन्तु वह महिला हिन्दू धर्म और प्रथाओं के अनुसार मूर्ति-पूजा इत्यादि भी करती रहती थी जिसे डेलिया ने पसन्द नहीं किया। परिणामस्वरूप उक्त हिन्दू महिला अध्यापिका को स्कूल से निकाल दिया गया। इसके साथ ही स्कूल की देख-रेख करने वाली महिला मिशनरी अन्ना स्केटर भी थोड़े समय बाद अपने देश विश्राम हेतु वापस लौट गईं।[87] इन मिशनरियों ने यह निश्चय किया कि मिशन स्कूल में केवल ईसाई अध्यापक ही रखे जायें। फलतः अन्ना स्केटर के स्थान पर ईवा रेलिन को न्यू इंग्लैण्ड से नियुक्त करके भेजा

---

85. ओहियो ईअरली मीटिंग मिनट्स, 1897, पृष्ठ-35.
86. वही.
87. ए सेन्चुरी ऑफ प्लान्टिंग ए चर्च, पृष्ठ-23.

गया । ईसा ने फिन्डर गार्डन स्कूल से ट्रेनिंग [प्रशिक्षण] प्राप्त की थी। फलतः उसके देख-रेख में नौगाँव के मिशन स्कूल में विद्यार्थियों की संख्या निरन्तर बढ़ती गई और स्कूल भी विकसित होने लगा ।[88]

1904 में नौगाँव के मिशन ने वहाँ एक उद्योगिक स्कूल की स्थापना की जिसका उद्देश्य मिशन के अनाथालयों में रहने वाले बच्चों को औद्योगिक प्रशिक्षण देना था ।[89] यह औद्योगिक स्कूल एक महत्वपूर्ण कदम था । धीरे-धीरे नौगाँव की महिला मिशनरियों ने पास में ही स्थित कंजरपुर गाँव में एक स्कूल की स्थापना की । इसी तरह के मिशन स्कूल हरपालपुर, आदि स्थानों में भी प्रारम्भ किये गये ।

उल्लेखनीय है कि अलीपुर के रियासत तथा छतरपुर के महाराजा ने इन मिशनरियों की महत्वपूर्ण सहायता की । अलीपुर की रियासत के राजा ने हरपालपुर में मिशनरियों को एक अस्पताल तथा एक स्कूल खोलने के लिये भूमि दान में दी । जिसके फलस्वरूप मिशनरियों ने अस्पताल और स्कूल की स्थापना की ।[90] अलीपुर के राजा ने वहाँ नियुक्त ईसाई अध्यापकों का वेतन आदि सुविधाओं का भी प्रबन्ध किया। ठीक इसी प्रकार 31 मार्च 1919 को महाराजा छतरपुर ने मिशनरियों के अस्पताल और स्कूल की स्थापना के लिये जमीन दान में दी थी ।[91] अमरीका से प्राप्त धनराशि तथा बुन्देलखण्ड से मिली सहायता के आधार पर छतरपुर में शीघ्र ही इन ईसाई मिशनरियों ने एक मिशन

---

88. ए सेन्चुरी ऑफ प्लान्टिंग ए धर्म, पृष्ठ-23.
89. वही.
90. वही, पृष्ठ-37.
91. वही, पृष्ठ-169.

इमारत का निर्माण कर दिया ।[92]

इस प्रकार बुन्देलखण्ड में यहाँ के राजाओं ने मिशनरियों को सहायता प्रदान करते हुये सुरक्षा तथा अनुकूल वातावरण प्रदान कराया । इन स्कूलों में धीरे-धीरे हिन्दू-मुस्लिम, ईसाई तथा अन्य वर्गों के लोगों को अध्ययन की सुविधा प्राप्त थी और निःसन्देह ऐसे अनुकूल वातावरण में बुन्देलखण्ड में ईसाई मत को विकसित होने के लिये समुचित वातावरण प्राप्त हुआ ।

सर्वधर्म समभावः

बुन्देलखण्ड के बुन्देला तथा मराठा राजाओं ने अपने शासन काल में सभी धर्मों और सम्प्रदायों के प्रति सद्भावना एवं उदारता की नीति अपनाई । उनका निजी धर्म निःसन्देह हिन्दू धर्म ही था किन्तु उनकी प्रजा मुस्लिम, ईसाई , जैन, बौद्ध आदि सभी सम्प्रदायों को मानने वाली थी । निःसन्देह बुन्देलखण्ड में हिन्दू मतावलम्बियों की संख्या सर्वाधिक रही किन्तु इसके बावजूद भी अन्य धर्मों के प्रति विद्वेष पूर्ण वातावरण नहीं रहा । सेना में सभी धर्मों को मानने वाले लोग थे। महारानी लक्ष्मीबाई की सेना में, गुलामगौस खाँ , जैसा तोपची , काले खाँ जैसा दरोगा, बख्शीश अली जैसे वीरों ने 1857 के विद्रोह में विदेशी शासक के विरुद्ध राष्ट्रीयता और देश प्रेम की भावना से ओत-प्रोत होकर रानी लक्ष्मीबाई का साथ दिया । देश की आजादी में

92. ए सेन्चुरी ऑफ प्लान्टिंग ए चर्च, पृष्ठ-67.

अंग्रेजी शासन काल में बुन्देलखण्ड में जो राष्ट्रीय आन्दोलन हुआ उसमें भी हिन्दू-मुस्लिम तथा ईसाई और अन्य मतावलम्बियों ने एक साथ संघर्ष करते हुये अंग्रेजी शासन को उखाड़ फेंकने में किसी भी प्रकार संकोच नहीं किया । निःसन्देह सर्वधर्मसमभाव की नीति बुन्देलखण्ड के इतिहास की प्रमुख विशेषता रही ।

---0---

अध्याय पंचम

छत्रसाल मराठा मैत्री एवम् मस्तानी प्रकरण

बुन्देलखण्ड में राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से छत्रसाल मराठा मैत्री तथा उनका मस्तानी से सम्बन्ध एक महत्वपूर्ण घटना है। मस्तानी के जन्म, वंश आदि के बारे में कोई विश्वसनीय विवरण प्राप्त नहीं है किन्तु बुन्देलखण्डी लोक-कथाओं के अनुसार जिसमें मुहम्मद खान बंगश का छत्रसाल बुन्देला से युद्ध (1727 से 1729) हुआ उस समय महाराजा छत्रसाल जैतपुर[1] के किले में मुहम्मद खान बंगश की सेना द्वारा घेर लिये गये थे। उस समय छत्रसाल ने पेशवा बाजीराव प्रथम[2] से मदद की माँग की और अपने वाहक कवि भूषण से निम्नलिखित पंक्तियाँ लिखकर पेशवा को भेजी थी:-

> जो गति ग्राह गजेन्द्र की, सो गति भई है आज।
> बाजी जात बुन्देल की, राखो बाजी लाज ॥

पेशवा बाजीराव ने मुगलों के विरुद्ध इस अभियान में गढ़मण्डला से प्रस्थान कर छत्रसाल को सामयिक सहायता पहुँचाई।

---

1. जैतपुर, महोबा से 19 मील पश्चिम में।
2. जर्नल आफ एशियाटिक सोसायटी आफ बंगाल सन् 1878 में विलियम इर्विन का लेख, "बंगश नवाब्स आफ फर्रुखाबाद," पृष्ठ 268-[illegible], लेटर मुगल्स (इर्विन) भाग-2, पृष्ठ 106-108, पेशवा बाजीराव फर्स्ट एंड मराठा एक्सपेंशन (दिघे), पृष्ठ 106-108, 201, लाइफ एण्ड टाइम्स आफ छत्रसाल बुन्देला (डा० भगवान दास गुप्ता) पृष्ठ 81-89, सरदेसाई, भाग-2, पृष्ठ 106-108, बाजीराव इन दी लैंड आफ दी बुन्देलाज (दत्तो वामन-पोतदार), हिस्टोरिकल एण्ड इकनामिक स्टडीज, फर्गुसन कालेज पूना, फरवरी 1941, पृ0-103.

मराठा और बुन्देला सेनाओं के इस अभियान में मुहम्मद खान बंगश पराजित हुआ तथा वह किसी प्रकार बुन्देलखण्ड से जान बचाकर वापिस हुआ । इस सहायता से कृतज्ञ होकर छत्रसाल ने बाजीराव को अपना तीसरा पुत्र मान लिया और उन्होंने अपने साम्राज्य का एक तिहाई हिस्सा पेशवा को भेंट किया ।

मस्तानी को भी इसी समय पेशवा को भेंट में दी ।[3] एक अन्य वर्णन[4] से यह उल्लेख मिलता है कि मुहम्मद खाँन बंगश का युद्ध छत्रसाल से नहीं बल्कि उनके द्वितीय पुत्र जगतराज के साथ हुआ था और पेशवा बाजीराव इसी युद्ध में जगतराज की सहायता करने के लिये बुन्देलखण्ड आये हुये थे । इस वर्णन में यह भी प्रसंग आता है कि पेशवा ने बंगश को पराजित कर जगतराज को पुनः उसके राज्य पर आसीन कर दिया और तभी वह बुन्देलखण्ड से लौटते समय मस्तानी नामक मुसलमान बालिका को अपने साथ ले गये थे ।[5]

किन्तु उपरोक्त मत प्रमाणित नहीं प्रतीत होता । समकालीन फारसी तथा पेशवा दफ्तर के मराठी कागजों[6] से यह प्रमाणित हो चुका है कि पेशवा बाजीराव प्रथम ने इलाहाबाद के मुगल सूबेदार मुहम्मद खाँन बंगश के विरुद्ध जगतराज को नहीं बल्कि छत्रसाल को ही मार्च 1917 में सहायता दी थी । इतना अवश्य है कि

---

3. वही.
4. केप्टन पाग्सन, ए हिस्ट्री ऑफ द बुन्देलाज, पृष्ठ-108.
5. वही.
6. पेशवा दफ्तर, भाग-9, पृष्ठ-56.

इस सन्दर्भ में पेशवा बाजीराव को मस्तानी बुन्देलखण्ड से ही प्राप्त होने का वर्णन आया है जो कि एक मुसलमान कन्या थी ।

पेशवा दफ्तर का एक बेनाम एवम् बिना तारीख का एक पत्र प्राप्त हुआ है[7] जो सम्भवतः मस्तानी का संरक्षक रहा होगा । इससे यह अनुमान निकलता है कि मस्तानी पूना आने पर अपने संरक्षकों के साथ पेशवा से अलग रहती होगी । किन्तु बाद में पेशवा बाजीराव का आकर्षण उसके प्रति बढ़ता गया और सम्भवतः उन्होंने मस्तानी को उनके डेरों से बुलाकर अपने मुहल्लों में ही रोक लिया होगा । इसी कारण मस्तानी के संरक्षकों ने यह पत्र अपने नम्र शब्दों में पेशवा के कार्यों पर क्षोभ प्रकट करते हुये लिखा होगा । मस्तानी के संरक्षक ने इस पत्र में यह इंगित कर दिया है कि इससे पेशवा की बदनामी होगी ।[8]

यह भी सम्भव है कि उपरोक्त पत्र का लेखक ऐसा व्यक्ति था जो तरुण कन्याओं को नृत्य-गान की शिक्षा देकर उन्हें धनिकों या श्रीमन्तो को बेच दिया करता था ।[9] ऐसी प्रथा उस समय उत्तरी भारत में प्रचलित थी और यह सम्भव है कि छत्रसाल ने ऐसे ही किसी व्यक्ति से मस्तानी को लेकर पेशवा बाजीराव को भेंट किया हो । कुछ अन्य स्त्रोतों से भी मस्तानी को एक नृत्यांगना के रूप में वर्णित किया गया है ।[10] कुँअर कन्हैया जू[11] के एक पत्र के अनुसार यह

---

7. बी0डी0 गुप्ता, मस्तानी बाजीराव और उनके वंशज बांदा के नवाब, प्रथम संस्करण, 1983, पृष्ठ-2.
8. वही, पृष्ठ-3.
9. जी0आर0 सरदेसाई, मराठी रियासत, भाग-5, पुणे प्रकाशन आवृ, पृष्ठ 403-404.
10. बी0डी0 गुप्ता, मस्तानी बाजीराव (वही), पृष्ठ-3.

जानकारी मिलती है कि मस्तानी छत्रसाल की मुसलमानी उपपत्नी से उत्पन्न कन्या थी किन्तु यह बात स्वीकार योग्य नहीं है क्योंकि यह ज्ञात है कि छत्रसाल ने पेशवा बाजीराव को अपने दत्तक पुत्र के रूप में मान्यता देकर उसे अपने राज्य का एक तिहाई भाग देकर अपने राज्य का उत्तराधिकारी घोषित किया था । ऐसी स्थिति में छत्रसाल निश्चय ही अपनी कन्या को चाहे वह उनकी उपपत्नी से ही क्यों न उत्पन्न होती अपने घोषित पुत्र पेशवा बाजीराव को न देते और न पेशवा ही अपनी ऐसी बहन को ही स्वीकार करते ।[12]

ऐसा प्रतीत होता है कि मस्तानी छत्रसाल के किसी दरबारी मुसलमान नृत्यांगना की उदीयमान पुत्री रही होगी जिसे उन्होंने सामान्य रूप से जैसी कि उस समय राजे, रजवाड़ों में आम प्रथा थी, पेशवा बाजीराव को भेंट कर दी होगी ।[13] गोरेलाल तिवारी के अनुसार भी मस्तानी पन्ना दरबार की एक वेश्या की पुत्री थी ।[14]

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मस्तानी की उत्पत्ति विवाद ग्रस्त है किन्तु फिर भी उसका छत्रसाल द्वारा ही पेशवा बाजीराव को भेंट किया जाना अधिक सम्भव प्रतीत होता है ।[15] पेशवा बाजीराव छत्रसाल को बंगश के विरुद्ध सहायता देकर अपने बुन्देलखण्ड अभियान से जुलाई 1729 में लौटकर पूना आये थे और अपने साथ पेशवा मस्तानी

12. बी0डी0 गुप्ता, मस्तानी बाजीराव(वही), पृष्ठ-4.
13. वही, पृष्ठ-4.
14. वही, पृष्ठ-4.

को बुन्देलखण्ड से लौटते समय ले गये थे ।[16] लोक परम्पराओं से जो जानकारी मिलती है उनसे यही स्पष्ट होता है कि बाजीराव और मस्तानी से पैदा हुये पुत्र शमशेर बहादुर (1734-1761) को पेशवा बाजीराव की मृत्यु के बाद उसको बुन्देलखण्ड की छत्रसाल द्वारा दी गई जागीरों में ही उत्तराधिकार दिया गया था । इसी शमशेर बहादुर के वंशज ही बाद में बाँदा के नवाबों के नाम से प्रसिद्ध हुये।[17]

मस्तानी और बाजीराव सम्बन्धः

यह भलीभाँति विदित है कि मस्तानी नृत्य-कला में अत्यन्त प्रवीण थी जिस समय वह[18] बाजीराव को प्राप्त हुई उस समय मस्तानी की उम्र 14, 15 वर्ष की थी । वह पेशवा के मामलों में गणेश उत्सव तथा धार्मिक अन्य त्योहारों पर अपनी ललित कलाओं का प्रदर्शन करती थी । अपने सौन्दर्य और नृत्य-गान से उसने पेशवा को मंत्रमुग्ध कर लिया था । वह केवल नर्तकी ही नहीं थी बल्कि युद्ध-कला में भी प्रवीण थी । मस्तानी तलवार और भाला चलाने में किसी भी मराठा सैनिक की तरह दक्ष थी और बाजीराव के सैनिक अभियानों में उसके घोड़े के साथ ही बराबर एक ऊँचे घोड़े पर चढ़ती थी ।[19] पेशवा बाजीराव के मार्च 1737 के दिल्ली अभियान में भी वह उनके साथ थी और मुगल सेना के कुछ सैनिकों ने बाजीराव और मस्तानी को

---

16. बी0डी0 गुप्ता, मस्तानी बाजीराव(वही), पृष्ठ-6.
17. सरदेसाई, भाग-2, पृष्ठ-108, तथा बाजीराव फर्स्ट द ग्रेट पेशवा, सी0के0 श्रीनिवासन, पृष्ठ-80.
18. बी0डी0गुप्ता, मस्तानी बाजीराव (वही) पृष्ठ-7.
19. लैटर मुगल्स, विलियम इर्विन, भाग-2, पृष्ठ-297, तथा सरदेसाई, भाग-2, पृष्ठ-170

घोड़े की जीन पर विश्राम करते, खाते-पीते और मौज मनाते हुये देखा था ।[20] मस्तानी के इन्हीं गुणों से पेशवा उसके प्रति आसक्त हो गया था ।

दोनों के सम्बन्धों में धर्म, जाति अथवा सम्प्रदाय किसी प्रकार बाधास्वरूप नहीं थे । मस्तानी ने भी शीघ्र ही हिन्दू खान-पान, भाषा, रहन-सहन आदि सभी अपना लिया था और उसकी मृत्यु तक उसके सभी आचार-व्यवहार ब्राह्मण कुल बन्धुओं की ही तरह रहे । वह हिन्दू ललनाओं की तरह बाजीराव से प्रेम करती थी । हिन्दू-मुस्लिम परिवेश के सम्मेलन का तत्कालीन परिस्थिति में बाजीराव और मस्तानी सम्बन्ध एक आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करता है । इसका श्रेय बुन्देलखण्ड की राष्ट्रीय एकता की परम्पराओं को ही है । वास्तव में पेशवा बाजीराव का कठोर सैनिक जीवन उसके प्रेम से अनुप्राणित हो उठा ।[21]

सन् 1734 में मस्तानी ने एक पुत्र को जन्म दिया । यह पुत्र शमशेर बहादुर था । पेशवा बाजीराव ने पूना में सुप्रसिद्ध शनिवार बाड़े में मस्तानी और उसके पुत्र के लिये 1736 में एक भवन का निर्माण कराया जो आज भी मस्तानी महल के नाम से प्रसिद्ध है । इस महल की ओर से बाहर जाने की ओर जो दूसरा द्वार है उसका नाम मस्तानी दरवाजा रखा गया । बाद में उसे अली बहादुर दरवाजा भी कहा जाने लगा था ।[22] मस्तानी अपने पुत्र शमशेर बहादुर के साथ इसी महल में बाजीराव

20. लेटर मुगल्स, विलियम इर्विन, भाग-2, पृष्ठ-297.
21. वी०डी० गुप्ता, मस्तानी बाजीराव (हिन्दी), पृष्ठ-7.
22. वही.

के साथ रहती रही और उसकी मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र शमशेर बहादुर और पौत्र अली बहादुर का निवास स्थान भी यही रहा।[23]

बाजीराव की मृत्यु के तुरन्त बाद ही मस्तानी की भी मृत्यु हो गयी ।[24] मस्तानी और बाजीराव के इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि महाराष्ट्र में मस्तानी को सती सुहागनी माना जाता रहा है । शमशेर बहादुर के विवाह के अवसर पर उसके नाम पर सुहागनों को भोजन कराये जाने का भी उल्लेख मिलता है ।[25] आज भी पूना से 20 मील दूर पाबल[26] नामक छोटे से ग्राम में उसके मकबरे को देखकर लोगों के मन में राष्ट्रीय एकता रूपी इस अमर प्रेम की स्मृतियाँ ताजी हो उठती हैं ।

शमशेर बहादुर:

मस्तानी और पेशवा बाजीराव की मृत्यु 28 अप्रैल 1740 के समय उसका एक मात्र पुत्र शमशेर बहादुर छः वर्ष का अबोध बालक था । उसका जन्म 1734 में हुआ था । बाजीराव को अपने इस पुत्र से बड़ा लगाव था । वे उसका ब्राहम्ण बालक की तरह लालन-पालन कर उपनयन संस्कार कराने के लिये उत्सुक थे ।[27] किन्तु पेशवा परिवार के लोग जो पूना के कर्मकाण्डी ब्राहम्ण थे वे इसलिये तैयार नहीं हुये ।

---

23. हिस्टोरिकल जीनिओलॉजीज (सरदेसाई), पृष्ठ-98, शनिवार पैलेस (जी०एच०खरे), पृष्ठ 7-10, 19 पारसनीस, पृष्ठ-84, पादटिप्पणी .
24. वही, पृष्ठ-12.
25. पेशवा दफ्तर, भाग-27, 81.
26. पाबल मस्तानी की जागीर थी, यहां उसकी समाधि, मस्जिद और गढ़ी के अवशेष अभी भी विद्यमान हैं ।
27. पारसनीस, पृष्ठ-84, पादटिप्पणी .

अतः उसे मुसलमान माता का पुत्र होने के कारण मुसलमान ही माना गया । और उसकी शिक्षा-दीक्षा मुस्लिम बालक की तरह रही । वयस्क होने पर शमशेर बहादुर का विवाह एक मुस्लिम धर्म परिवर्तित हिन्दू परिवार के लखधीर रूपतराय की कन्या से कर दिया गया । इस कन्या का नाम लालकुँअर था ।[28] शमशेर बहादुर का दूसरा विवाह एक मुसलमान परिवार की कन्या मेहरबाई से हुआ था । मेहरबाई सम्भवतः अली-बहादुर की माता थी ।[29] यही अली बहादुर बाद में चलकर बाँदा का प्रथम नवाब बना ।

युवा होने पर शमशेर बहादुर मराठों की ओर से उत्तरी-भारत के अभियानों में नियुक्त किया गया । 1753 में शमशेर बहादुर उत्तरी-भारत के मराठा अभियानों में शामिल हुआ ।[30] 1755 में उसे झाँसी के सूबेदार नारोशंकर की मदद के लिये भेजा गया ।[31] 1756 में उसने मारवाड़ में मराठा सेना का सहयोग किया और अक्टूबर 1756 में वह मालवा चला आया ।

पन्ना और जैतपुर के उत्तराधिकार विवादों में शमशेर बहादुर का भूमिका:

बुन्देलखण्ड में इस समय महाराजा छत्रसाल बुन्देला के उत्तराधिकारियों में पन्ना और जैतपुर की गद्दियों को लेकर संघर्ष

---

28. बी०डी० गुप्ता, मस्तानी बाजीराव (पूर्वोक्त), पृष्ठ-17.
29. वही, पृष्ठ-18.
30. सरदेसाई, भाग-2, पृष्ठ 364-376.
31. बी०डी० गुप्ता, मस्तानी बाजीराव (पूर्वोक्त), पृष्ठ-20.

चल रहा था । यह संघर्ष मुख्यतः छत्रसाल के पुत्रों हृदयशाह और जगतराज के बीच था । हृदयशाह की गद्दी पन्ना में रही जबकि जगतराज ने जैतपुर को अपनी राजधानी बनाया । 1758 के मध्य शमशेर बहादुर पन्ना आया । छत्रसाल के दत्तक पुत्र पेशवा बाजीराव प्रथम का पुत्र होने के कारण छत्रसाल के वंशज शमशेर बहादुर से भाई चारा मानते थे । अतः शमशेर बहादुर ने बड़े सौहार्द्र पूर्ण ढंग से पन्ना की समस्या का हल किया और जुलाई 1758 में पेशवा के आदेश पर वह पूना लौट गया ।[32] इसके पश्चात् जैतपुर की गद्दी के लिये भी जगतराज के पुत्रों में विवाद छिड़ गया । इस समय शमशेर बहादुर पुनः पन्ना आया और समझौते के माध्यम् से उसे पहाड़सिंह को पन्ना का उत्तराधिकारी बना दिया ।

जिस समय शमशेर बहादुर बुन्देलखण्ड में रियासतों के उत्तराधिकार सम्बन्धी मामलों में निराकरण में व्यस्त था ।उसी बीच उत्तरी भारत में मराठों और अहमदशाह अब्दाली के बीच में पानीपत के तृतीय युद्ध की भूमिका बननी शुरू हुई । दुर्भाग्यवश इस युद्ध में मराठे बुरी तरह पराजित हुये । युद्ध की समाप्ति के पश्चात् अहमदशाह अब्दाली कुछ समय के लिये भारत में ही रूक गया । बिना उसके यहाँ से हटे उत्तरी-भारत में मराठों की प्रभुसत्ता तथा प्रतिष्ठा की पुनः स्थापना नहीं हो सकती थी अथवा पेशवा बालाजी बाजी राव ने सदाशिव भाऊ के नेतृत्व में एक बड़ी सेना दक्षिण से अब्दाली को खदेड़ने के लिये भेजी ।[33] मराठों की नीतियों से असन्तुष्ट राजपूत

---

32. पन्ना गजेटियर, पृष्ठ-11.
33. पी०डी०, गुप्ता, मस्तानी बाजीराव [हिंदी], पृष्ठ-[illegible].

और बुन्देला इस सेना में शामिल नहीं हुये थे ।[34] किन्तु बाजीराव के पुत्र शमशेर बहादुर इस युद्ध में पानीपत के मैदान में भाऊ के साथ अन्तिम क्षण तक डटा रहा । किन्तु शमशेर बहादुर इस युद्ध में बुरी तरह घायल हुआ । वह किसी प्रकार बचकर कुम्भेर जा पहुँचा । राजा सूरजमल जाट ने उसकी बड़ी देख-भाल की किन्तु वह बच न नहीं सका और भरतपुर में उसकी मृत्यु हो गयी । उसकी कब्र आज भी विक्टोरिया अस्पताल के पास भरतपुर में स्थित है ।[35] मृत्यु के समय शमशेर बहादुर की उम्र केवल 27 वर्ष की थी । अपने माता-पिता मस्तानी और पेशवा बाजीराव प्रथम के समय वह केवल छः वर्ष का था। संक्षेप में उसमें सेनानायक और कूटनीतिज्ञ दोनों की ही प्रतिभा अपने पिता पेशवा बाजीराव की भाँति थी ।

अली बहादुरः

पेशवा बाजीराव और मस्तानी के पुत्र शमशेर बहादुर की मृत्यु भरतपुर में 1761 ई० में हुई उस समय शमशेर बहादुर का एक मात्र पुत्र अली बहादुर केवल तीन वर्ष का था । उसके बचपन से ही युवा होने का कोई विवरण उपलब्ध नहीं है किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि वह पूना में मस्तानी महल में ही रहता था और उसका लालन-पालन सुचारु रूप से होता रहा । वह एक सुन्दर स्वस्थ तथा युवा योद्धा के रूप में विकसित हुआ । सितम्बर 1727 में महादजी सिन्धिया की

---

34. पी०डी० गुप्ता, मस्तानी बाजीराव[वही], पृष्ठ-25.
35. सरकार, भाग-2, पृष्ठ-238-257, सरदेसाई, भाग-2, पृष्ठ 441-443.

सहायता के लिये उसे उत्तरी भारत रवाना किया गया था[36] पूना में उस समय नाना फड़नीस का बोल-बाला था और वही मराठा साम्राज्य का कर्त्ता-धर्ता बन बैठा । लालसोट के युद्ध (28 जुलाई 1787) में महादजी की असफलता ने उत्तरी भारत में मराठा विरोधी तत्वों को तेजी से उभरने का संकेत दिया । बुन्देलखण्ड में भी मराठा प्रभुत्व समाप्त होने लगा । ऐसी विषम परिस्थिति में पेशवा ने अली बहादुर को महादजी सिन्धिया की सहायता के लिये उत्तरी भारत जाने के आदेश दिये थे ।

अली बहादुर काफी विलम्ब के पश्चात् 14 दिसम्बर 1787 को पूना से प्रस्थान किया और 11 महीने बाद महादजी सिन्धिया के पास मथुरा पहुँचा[37] लेकिन महादजी सिन्धिया और अली बहादुर के बीच वैचारिक मत-भेद थे । सम्भवतः इसी कारण अलीबहादुर सिन्धिया के पास आने में काफी देर की ।[38] अली बहादुर और सिन्धिया के बीच बढ़ते हुये पारस्परिक विवाद के कारण पेशवा ने यह उचित समझा कि अलीबहादुर को अपने पितामह द्वारा जीते गये बुन्देलखण्ड क्षेत्र की व्यवस्था का दायित्व सौंपा जाये ।[39] अली बहादुर का बुन्देलखण्ड से भावात्मक सम्बन्ध था । मस्तानी का पौत्र होने के कारण बुन्देलखण्ड से उसका लगाव होना स्वाभाविक ही था । अतः बुन्देलखण्ड आने के लिये वह आतुर हो उठा । अगस्त 1791 में उसने बुन्देलखण्ड के लिये प्रस्थान किया ।[40]

---

36. वी०डी० गुप्ता, मस्तानी बाजीराव(वही), पृष्ठ-34.
37. वही, पृष्ठ-37.
38. वही, पृष्ठ-37.
39. वही, पृष्ठ-46.
40. सरदेसाई, भाग-3, पृष्ठ-210.

यह ज्ञात है कि जिससे वह उत्तर भारत के अभियान पर आया था। उसी समय उसकी भेंट हिम्मत बहादुर गोसाईं से हुई थी। यह गोसाईं सेनानायक बुन्देलखण्ड का ही निवासी था तथा यहाँ के राजनैतिक और भौगोलिक स्थिति से भलीभाँति परिचित होने के कारण वह स्थानीय राजाओं के विरुद्ध अभियान में बड़ा उपयोगी सिद्ध हो सकता था।[41] हिम्मत बहादुर ने अपनी जन्मभूमि बुन्देलखण्ड में अपने लिये एक राज्य स्थापित करने के लिये सदैव लालायित था। अतः दोनों में अच्छे सम्बन्ध स्थापित हो गये।

अली बहादुर नवम्बर 1791 को लगभग झाँसी के मराठा राज्य के प्रदेशों में आ पहुँचा। यहाँ उसने दतिया के राजा शत्रुजीत से [1762 से 1801] पाँच लाख, समथर के राजा देवीसिंह से 50 हजार रुपये वसूल किये।[42] इसके पश्चात् अली बहादुर और हिम्मत बहादुर 1792 ई० के लगभग बेतवा और धसान नदियाँ पार कर पूर्वी बुन्देलखण्ड के छत्रसाली प्रदेश जिसे इलाई कहते हैं, आ पहुँचे। बुन्देलखण्ड में स्वत्व को स्थापित करने के लिये अली बहादुर को युद्धों का सहारा लेना पड़ा।[43]

अली बहादुर बाँदा के नवाब के रूप में:

अली बहादुर के आगमन के समय पूर्वी बुन्देलखण्ड छत्रसाल के उत्तराधिकारियों के पारस्परिक संघर्ष में ग्रस्त था।[44] पन्ना और जैतपुर में आन्तरिक कलह से विस्फोटक स्थिति उत्पन्न हो गई थी।

---

41. वी०डी० गुप्ता, मस्तानी बाजीराव[पहा], पृष्ठ-46.
42. वही, पृष्ठ-47.
43. वही, पृष्ठ-48.
44. गोरेलाल तिवारी, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, पृष्ठ 231-235.

दोनों वंशों के समीप के चचेरे भाईयों के आपसी झगड़े के कारण बुन्देला राजे-रजवाड़े आपस में फँस गये थे ।[45] ऐसी परिस्थिति में अली बहादुर ने बाँदा के नोने अर्जुनसिंह के विरुद्ध अभियान किया और इसमें सफल होने के पश्चात् वह बाँदा राज्य का स्वामी बन बैठा । इसके पश्चात् उसने बाँदा को अपनी राजधानी बनाई और बाँदा के नवाब की उपाधि ग्रहण की तथा वहाँ एक नये राजवंश की स्थापना की ।[46] इसके पश्चात् अली बहादुर ने जैतपुर, चरखारी, बिजावर, छतरपुर और पन्ना की विजय की ।[47]

कालिन्जर का घेरा और अली बहादुर की मृत्यु [1802]:

पूर्वी बुन्देलखण्ड की रियासतों को जीतने के पश्चात् अली बहादुर ने कालिन्जर के किलेदार रामकिशन चौबे पर आक्रमण किया।[48] उसने अभी तक अली बहादुर की अधीनता स्वीकार नहीं की थी और कालिन्जर का किला भी छोड़ने के लिये तैयार नहीं था । अली बहादुर दो कारणों से उससे विशेष रूप से नाराज था । पहला रामकिशन ने सागर के सूबेदार बालाजी गोविन्द को दस हजार रूपये दिये थे जबकि उसने अलीबहादुर को राज्य-कर के रूप में एक पैसा भी नहीं दिया था। दूसरा कारण नाराज होने का यह था कि रामकिशन ने कालिन्जर में उन सब भगोड़े बुन्देले राजे-रजवाड़ों और उनके परिवारों को शरण दे

---

45. सरकार, भाग-3, पृष्ठ-227.
46. गोरेलाल तिवारी, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, पृष्ठ-274.
47. वही, पृष्ठ-274.
48. वही, पृष्ठ-277.

रखी थी जो अभी भी अली बहादुर से लड़ाई ठाने हुये थे।[49] अली बहादुर ने इन दोनों बातों की रामकिशन चौबे से सफाई माँगी और उस पर दबाव डालने के लिये कालिन्जर के किले से लगे हुये गाँव की लूट-पाट शुरू करा दी। ऐसी परिस्थिति में रामकिशन चौबे ने दिसम्बर 1798 ई0 में अपने वकील को अली बहादुर के पास भेजा[50] वकील ने अली बहादुर को बताया कि रामकिशन चौबे उसे [illegible] देने को तैयार है किन्तु कालिन्जर किले में शरण लिये हुये बुन्देला रजवाड़ों को बाहर निकालने में असमर्थ है क्योंकि इन रजवाड़ों से उसके पूर्वजों के समय से ही मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध चले आ रहे थे।[51] अली बहादुर वकील के इस तर्क से सन्तुष्ट नहीं था परन्तु चूँकि उसे धन की अत्यधिक आवश्यकता थी इसलिये वह कालिन्जर के गाँव की लूट-पाट बन्द करने के लिये इस शर्त पर तैयार हो गया कि रामकिशन चौबे 5 लाख नजराने के साथ, तीस हजार रुपये की एक रकम अली बहादुर को भेंट करे।[52] ऐसा प्रतीत होता है कि कालिन्जर को इस शर्त को चौबे मानने को तैयार नहीं था। अतः अन्त में अली बहादुर ने उत्तेजित होकर 1800 ई0 में कालिन्जर के किले में घेरा डाल लिया। हिम्मत बहादुर गोसाईं भी इस आक्रमण में अली बहादुर के साथ रहा।

कालिन्जर के किले की मजबूती और रामकिशन चौबे के साहस पूर्वक मोर्चा लेने से अली बहादुर और हिम्मत बहादुर के सभी सम्मिलित प्रयास विफल हो गये और कालिन्जर का यह घेरा दो वर्ष तक चलता रहा।[53]

---

49. गोरेलाल तिवारी, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, पृष्ठ-193.
50. पी0सी0 गुप्ता, मराठी बाजीराव(वही), पृष्ठ-62.
51. वही, पृष्ठ-62.
52. वही, पृष्ठ-63.
53. वही, पृष्ठ-63.

अली बहादुर ने घेरा और लम्बे चलने की सम्भावना के कारण कालिन्जर के बीच एक गाँव सिरोन्डुला में अपने लिये स्थाई निवास स्थान भी निर्मित करवा डाला. किन्तु रामकिशन चौबे ने तनिक भी अस्थिरता नहीं दिखाई और न किले की सुरक्षा में कोई ढील डाली । कहा जाता है कि जब अली बहादुर ने उसे बार-बार आत्मसमर्पण कर कालिन्जर का किला सौंप देने के लिये प्रस्ताव भिजवाया तो उसने अली बहादुर को अपने उत्तर के रूप में आम की एक गुठली भिजवा दी और उसके प्रस्ताव का मजाक उड़ाते हुये कहलवा भेजा कि नवाब पहले इस गुठली को जमीन में गड़वा दे जब गुठली से आम का पेड़ बनेगा, उसमें आम लगेंगे और जब नवाब उन आमों को उसके पास भेजकर किला सौंप देने का प्रस्ताव प्रेषित करेगा तब उन आमों को चखता हुआ, उस प्रस्ताव पर विचार करेगा ।[54] जिस समय कालिन्जर का घेरा चल रहा था उसी समय अचानक अगस्त, 1802 में अली बहादुर बीमार पड़ गया और वहीं कालिन्जर की छावनी में उसकी 28 अगस्त 1802 को मृत्यु हो गई ।[55]

अली बहादुर की मृत्यु के समय उम्र केवल 43 या 44 वर्ष की थी । जिस समय दिसम्बर, 1787 में उसने महादजी सिन्धिया की सहायता के लिये उत्तर भारत की ओर प्रस्थान किया था तब उसकी उम्र केवल 29 वर्ष की थी । महादजी के पास मथुरा में वह नवम्बर 1787 में पहुँचा और लगभग पौने तीन साल तक उसके साथ रहा ।

---

54. बी०डी० गुप्ता, मस्तानी बाजीराव (हिन्दी), पृष्ठ-63,
55. गोरे लाल तिवारी, पृष्ठ-278, तथा सरकार, भाग-4, पृष्ठ-14.

सिन्धिया से उसके मत-भेद रहे । अतः पेशवा ने उसे 1791 में बुन्देलखण्ड भेज दिया ।[56] बुन्देलखण्ड में हिम्मत बहादुर गोसाँई के साथ विजय अभियान प्रारम्भ किये । केन नदी के पार पूर्वी बुन्देलखण्ड को उसने अपनी कार्यवाहियों का क्षेत्र बनाया और छत्रसाल के वंशजों की आपसी फूट और उनकी निर्बलता का लाभ उठाकर कुछ ही समय में हिम्मत बहादुर गोसाँई के सहयोग से उसने इस क्षेत्र को विजय करके स्वयम् को बाँदा के नवाब के पद पर स्थापित किया।[57] बुन्देलखण्ड में उसने दस वर्ष लड़ते-भिड़ते ही बिताये और उसका अन्त भी कालिन्जर के किले के घेरे में ही हुआ ।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि अली बहादुर ने बाजीराव पेशवा के पौत्र के रूप में इस क्षेत्र पर मराठा आधिपत्य स्थापित करने के कार्य को पूरा किया । वह बाजीराव और मस्तानी के रक्त से जुड़ा हुआ था । उसमें राष्ट्रीय एकता की भावना कूट-कूट कर भरी हुई थी । और इसी भावना से वशीभूत होकर उसने बुन्देलखण्ड में अपने लिये एक सुरक्षित क्षेत्र प्राप्त किया । वह समझता था कि महाराष्ट्र की तत्कालीन पुरातन पन्थी एवं पौराणिक मानसिकता के कारण वह पुनः दरबार में स्थान प्राप्त नहीं कर सकेगा । सम्भवतः उसके दिमाग में यह बात निरन्तर विकसित होती रही कि उसके कार्यों का क्षेत्र बुन्देलखण्ड ही हो सकता है न कि महाराष्ट्र । इसी विचार को संजोये हुये धरती के सच्चे पुत्र के रूप में अली बहादुर ने अपने दायित्व का

56. पी0डी0 गुप्ता, मस्तानी बाजीराव (वही), पृष्ठ-6..

57. वही, पृष्ठ-64.

निर्वाह करते हुये बुन्देलखण्ड की मिट्टी में स्वयम् के लिये स्थान बनाया और अपने राज्य के विस्तार तथा सुरक्षा के लिये तथा मराठा [illegible] का निर्वाह करने के लिये जो विजय अभियान उसने बुन्देलखण्ड में प्रारम्भ किये थे उनका अन्तिम चरण भी बुन्देलखण्ड स्थित कालिन्जर के सुदृढ़ दुर्ग में ही घटित हुआ जहाँ घेरा डाले हुये 28 अगस्त 1802 को उसने अपने प्राणों की आहुति दे दी । निःसन्देह अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिये उसका यह बलिदान उसकी वीरता, शौर्य और साहस का अनूठा उदाहरण है , और साथ ही साथ राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से बाँदा में अपनी नवाबी स्थापित कर उसने जन-मानस के लिये एक अच्छा उदाहरण प्रस्तुत किया ।

नवाब शमशेर बहादुर:

अली बहादुर के दो पुत्र थे । पहला शमशेर बहादुर दूसरा जुल्फिकार अली । यह दोनों सौतेले भाई थे । जिस समय अलीबहादुर की मृत्यु कालिन्जर में हुई उस समय उसका ज्येष्ठ पुत्र शमशेर बहादुर पूना में था और जुल्फिकार अली वहीं कालिन्जर में था, किन्तु जुल्फिकार अली उस समय दो वर्ष का शिशु था । अतः उसके मामा गनी बहादुर और हिम्मत बहादुर गोसाईं थे ।[58] गनी बहादुर तथा हिम्मत बहादुर गोसाईं ने मिलकर सत्ता अपने हाथ में रखने के उद्देश्य से जुल्फिकार अली को बाँदा का नवाब घोषित कर दिया और गनी बहादुर को संरक्षक बना दिया गया ।[59] इसी बीच अली बहादुर की मृत्यु का

---

58. गोरे लाल तिवारी, पृष्ठ-278 तथा बाँदा गजेटियर, पृष्ठ-177.

59. वही.

समाचार पूना में शमशेर बहादुर को मिला और वह तुरन्त एक सेना के साथ 1803 के प्रारम्भिक महीनों में बुन्देलखण्ड पहुँचा । चूँकि वह अली बहादुर का वैध ज्येष्ठ पुत्र था इसलिये उत्तराधिकार के रूप में उसके दावों का विरोध करने की हिम्मत किसी में नहीं हुई । अतः वह निर्विवाद् बाँदा का नवाब बन गया । गद्दी प्राप्त करते ही उसने गनी बहादुर की सम्पत्ति जब्त कर ली तथा उसे अजयगढ़ के किले में कैद कर लिया जहाँ कुछ समय पश्चात् उसकी मृत्यु हो गई ।[60]

उधर मराठा दरबार की राजनैतिक घटनाओं में तेजी से परिवर्तन हो रहा था । पेशवा माधवराव द्वितीय की मृत्यु 25 अक्टूबर 1795 को हो गई थी । चूँकि उसका अपना कोई वैध पुत्र नहीं था । अतः पेशवा के उत्तराधिकारी के लिये विवाद उठ खड़ा हुआ । रघुवा का पुत्र बाजीराव द्वितीय गद्दी का प्रमुख दावेदार था किन्तु नाना फड़नीस उसका विरोधी था, किन्तु किसी भी प्रकार दिसम्बर 1796 में बाजीराव द्वितीय को पेशवा और नाना फड़नीस को उसका मुख्य मन्त्री मान लिया गया ।[61] उसी समय पूना की राजनीति में दौलतराव सिन्धिया का भी प्रभाव बढ़ गया । बाजीराव और सिन्धिया के सम्बन्ध अच्छे नहीं थे । इसी बीच यशवन्तराव होलकर ने पूना पर आक्रमण कर लिया । परेशान बाजीराव ने अंग्रेजों से सहायता की माँग की । अनुकूल अवसर समझकर अंग्रेजों ने उससे बेसीन की सन्धि की {31 दिसम्बर 1802}[62] इस सन्धि से 26 लाख के आय

60. गोरेलाल तिवारी, पृष्ठ 278-279 तथा पॉग्सन, पृष्ठ-122-123.
61. बी0डी0 गुप्ता, मस्तानी बाजीराव, पृष्ठ-69.
62. एचीसन, सी0यू0, ट्रीटिज, इनगेजमेन्टस् एण्ड सनद, भाग-7, पृष्ठ-50-51.

के जिले पेशवा ने अंग्रेजों को दे दिये जिसमें बुन्देलखण्ड के क्षेत्र शामिल थे । इस प्रकार बुन्देलखण्ड में अंग्रेजों का प्रभुत्व प्रारम्भ हुआ ।

हिम्मत बहादुर की अंग्रेजों से साँठ-गाँठः

नवाब अली बहादुर ने बुन्देलखण्ड की विजय के समय हिम्मत बहादुर गोसाईं के साथ एक समझौता करके उसे एक लाख पैंतीस हजार रुपये की आय के प्रदेश दिये थे ।[63] अली बहादुर की मृत्यु के पश्चात् हिम्मत बहादुर अपनी सुरक्षा तथा अपनी जागीरों की सुरक्षा को लेकर चिन्तित हो उठा था क्योंकि उसके सम्बन्ध नवाब शमशेर बहादुर से खराब हो गये थे । सम्बन्ध खराब होने का कारण यह था कि गोसाईं सेनानायक ने अली बहादुर की मृत्यु के पश्चात् गनी बहादुर से मिलकर शमशेर बहादुर की अनुपस्थिति में उसके छोटे सौतेले भाई जुल्फकार अली को बाँदा का नवाब घोषित कर सत्ता हथियाने का षड्यन्त्र किया था किन्तु शमशेर बहादुर के ठीक समय से बुन्देलखण्ड आगमन से यह षड्यन्त्र सफल नहीं हो सका ।[64] उसने यहाँ आते ही षड्यन्त्रकारी गनी बहादुर को कैद कर दिया तथा उसे मरवा डाला । इस घटना से हिम्मत बहादुर चिन्तित हो उठा और अपनी सुरक्षा के लिये उसने शमशेर बहादुर से बचने के लिये अंग्रेजों की शरण लेने में ही कुशल समझी । हिम्मत बहादुर ने अंग्रेज सेनापति कर्नल मिसल बैक के द्वारा तत्कालीन गवर्नर जनरल वैलेजली से सम्पर्क स्थापित किया । बुन्देलखण्ड में प्रवेश हेतु लालायित अंग्रेजों

---

63. बी0 डी0 गुप्ता, मस्तानी बाजीराव[वही], पृष्ठ-71.
64. वही, पृष्ठ-71.

शासन ने इसे एक सुनहरा अवसर समझकर 4 सितम्बर 1803 को एक संधि द्वारा हिम्मत बहादुर से समझौता कर लिया ।[65] इस संधि की मुख्य शर्तें निम्नलिखित थीं:-

§1§- हिम्मत बहादुर अंग्रेजों को बुन्देलखण्ड में अधिकार स्थापित करने में सहायता करेगा ।

§2§- हिम्मत बहादुर को उसकी प्रतिष्ठा और पद के अनुरूप जागीर दी जायेगी ।

§3§- हिम्मत बहादुर को अंग्रेजों की सहायता के लिये एक सेना रखने के लिये बीस लाख रुपये की जागीर दी जायेगी ।

§4§- यदि हिम्मत बहादुर अंग्रेजी सरकार की सहमति से किन्हीं अन्य लोगों से जो अंग्रेज सरकार की अधीनता स्वीकार करने को तैयार है, कोई समझौता करेगा तो उसे मान्य किया जायेगा ।[66]

उपरोक्त समझौते से दोनों पक्षों के स्वार्थ सिद्ध हुये । हिम्मत बहादुर को अंग्रेजों का संरक्षण और बीस लाख रुपये की जायदाद मिल गयी जबकि अंग्रेजों को बुन्देलखण्ड में मराठों के विरुद्ध एक शक्तिशाली और अनुभवी सहायक मिल गया ।

हिम्मत बहादुर और अंग्रेजी सेना का संयुक्त अभियान:

4 सितम्बर 1803 को हिम्मत बहादुर से जैसे ही संधि हुई

65. एचीसन, भाग-3, पृष्ठ 143-146.
66. वही.

वैसे ही कर्नल पावेल के सेनापतित्व में एक अंग्रेजी सेना राजापुर घाट से जमुना पार कर बुन्देलखण्ड में घुस पड़ी । हिम्मत बहादुर उस समय शमशेर बहादुर के साथ कालिन्जर का घेरा डाले पड़ा था । उसे जैसे ही अंग्रेजी सेना के बुन्देलखण्ड में प्रवेश की सूचना मिली वैसे ही वह शमशेर बहादुर को धोखा देकर भाग निकला और अपनी सारी सेना सहित पावेल से आकर मिल गया ।[67] इस घटना से शमशेर बहादुर की स्थिति खराब हो गई और वह कालिन्जर का घेरा उठाकर बाँदा की सुरक्षा के लिये मुड़ पड़ा । पावेल और हिम्मत बहादुर की सेना ने बाँदा पर अधिकार कर लिया और शमशेर बहादुर को केन नदी के तट से पीछे हटने को विवश होना पड़ा ।[68]

जालौन के नाना गोविन्दराव ने शमशेर बहादुर को सहायता देने का प्रयास किया किन्तु इसके दुखद परिणाम निकले और अंग्रेजी सेना ने उसके कालपी के प्रदेश जीत लिये । ऐसी परिस्थिति में अंग्रेजी सेना को अभूतपूर्व सफलता मिली । बुन्देलखण्ड में स्थिति उनके पूर्ण नियन्त्रण में आ गई और पेशवा को बुन्देलखण्ड के प्रदेशों पर ईस्ट इंडिया कम्पनी के शासन को मान्यता देनी पड़ी ।[69] इस घटना के पश्चात् कैप्टन बेली को बुन्देलखण्ड में अंग्रेज गवर्नर जनरल का एजेन्ट नियुक्त कर लिया गया। नवाब शमशेर बहादुर की स्थिति बहुत नाजुक हो गई थी । इस बदले राजनैतिक प्रवेश में जनवरी 1804 में बेली के बुन्देलखण्ड आते ही शमशेर

---

67. वी०डी० गुप्ता, महारानी लक्ष्मीबाई, (हिन्दी), पृष्ठ-72.
68. पाग्सन, हिस्ट्री ऑफ द बुन्देलखण्ड, पृष्ठ 123-124, तथा बुन्देलखण्ड गजेटियर, पृष्ठ-37.
69. सप्लीमेन्टल ट्रीटी ऑफ बेसीन, एचीसन, भाग-7, पृष्ठ-59.

बहादुर ने उसके पास अपना वकील भेजकर संधि वार्ता प्रारम्भ कर दी। 12 जनवरी 1804 को बैली ने एक पत्र लिखकर शमशेर बहादुर को [illegible] छोड़कर अंग्रेजी छावनी में चले आने के लिये प्रस्ताव किया जिसके बदले में अंग्रेज चार लाख रुपया वार्षिक वजीफा या चार लाख रुपये की वार्षिक आय के प्रदेश उसे देने का प्रस्ताव भेज दिया।[70] इस समझौते ने बाँदा के नवाब की स्थिति नाम मात्र की कर दी। यद्यपि इसके बाद शमशेर बहादुर और उसके उत्तराधिकारी बाँदा के नवाब कहे जाते रहे किन्तु वास्तव में अब वे अंग्रेजों के पेन्शनर मात्र थे। शमशेर बहादुर ने चार लाख वार्षिक पेन्शन स्वीकार कर ली। बाँदा में अपने मुहल्ले में रहने के लिये तथा बाँदा के नवाब की उपाधि धारण किये रहने की अनुमति भी उसे दे दी। 1805 में पुराने बाँदा में बसने के लिये उसे बड़ा इलाका दे दिया गया। इस भाग को नवाबपुर कहा जाने लगा था।[71]

अपनी नवाबी की शान बनाये रखने के लिये शमशेर बहादुर ने योरूपीय शैली पर अपना महल बनवाया और अपने अंगरक्षकों की एक छोटी सी फौज रखी। जिसमें दो सवार सैन्य-दल, एक गोलन्दाज की कम्पनी, आधी कम्पनी बन्दूकची तथा तीन पैदल कम्पनियाँ थीं। इनकी साज-सज्जा अंग्रेज सैनिकों के नमूने पर होती थी। उसके पास कुछ तोपें और देशी घोड़े भी थे जिनका उपयोग नवाब की शान-शौकत के प्रदर्शनों के लिये किया जाता था।[72]

---

70. एचीसन, भाग-5, पृष्ठ 49-50.
71. बाँदा गजेटियर, पृष्ठ-210.
72. पॉग्सन, पृष्ठ-126.

शमशेर बहादुर का शेष जीवन ऐश-आराम में व्यतीत हुआ। 1823 में उसकी मृत्यु हो गई। अपने पिता अली बहादुर के पश्चात् वह लगभग दो वर्ष तक बाँदा का द्वितीय नवाब रहा था। 1804 में अंग्रेजों द्वारा बाँदा पर अधिकार करने के बाद उसके उत्तराधिकारी जुल्फिकार अली तथा अली बहादुर द्वितीय केवल नाम मात्र के नवाब रह गये। 1857 तक किसी तरह यह दिखावा चलता रहा और चूंकि इसी वर्ष 1857 के महा विद्रोह में शामिल होकर नवाब अली बहादुर द्वितीय ने भी विदेशी शासन के विरुद्ध स्वतन्त्रता संघर्ष प्रारम्भ किया।

मस्तानी बाजीराव से उत्पन्न हुई सन्तति ने हिन्दू-मुस्लिम एकता एवम् राष्ट्रीय एकता के तत्वों को भली-भाँति पुष्ट और विकसित किया। अली बहादुर से लेकर अन्त तक बाँदा के नवाबों के कार्यों तथा उनके जीवन वृतान्त को इसी रूप में देखा जा सकता है। बुन्देलखण्ड में बाजीराव द्वारा जीते हुये प्रदेशों की प्राप्ति के लिये बाँदा के नवाबों ने सतत संघर्ष किया और यदि हिम्मत बहादुर गोसाँई ने धोखा न दिया होता और वह अंग्रेजों के साथ न जा मिला होता तो निश्चय ही बुन्देलखण्ड का इतिहास कुछ और हुआ होता किन्तु गोसाँई सेनानायक की स्वार्थपरता एवम् धोखे की नीति ने अली बहादुर तथा शमशेर बहादुर द्वारा किये गये विजय अभियानों को असफल बना दिया। बुन्देलखण्ड की मिट्टी में स्वयम् को सम्मानित कर यहाँ के स्वतन्त्रता, साहस, स्वाभिमान आदि गुणों का प्रतिनिधित्व बाँदा के

नवाबों द्वारा किया गया । यह कहना असंगत नहीं होगा कि मस्तानी और पेशवा बाजीराव के रक्त ने बुन्देलखण्ड में राष्ट्रीय एकता को ठोस आधार प्रदान किया । बाद में 1857 के विद्रोह के समय इसी रक्त ने बाँदा के नवाब अली बहादुर द्वितीय ने बुन्देलखण्ड के क्रान्तिवीरों जैसे महारानी लक्ष्मीबाई , राजा मर्दन सिंह, आदि के साथ एक संयुक्त प्रयास में शामिल होकर देश को अंग्रेजी शासन की दासता से मुक्त कराने हेतु प्रयास किया ।

——0——

अध्याय छठा

बुन्देलखण्ड में अंग्रेजी सत्ता का उदय एवं हिन्दू-मुस्लिम वर्गों की दशा:

1802 की बेसिन की संधि से बुन्देलखण्ड में अंग्रेजी प्रभुसत्ता का प्रारम्भ हुआ ।[1] इस संधि से जैसे ही बुन्देलखण्ड के मराठा क्षेत्र अंग्रेजों के नियन्त्रण में आये वैसे ही कैप्टन बेली इस क्षेत्र पर अधिकार करने के लिये नियुक्त किया गया । बेली ने शीघ्र ही बाँदा पहुँच कर कार्यभार ग्रहण किया तथा इस क्षेत्र के किसानों एवं जमींदारों से राजस्व वसूल करने के लिये राजस्व की दरें निर्धारित करने में तत्परता दिखाई। इस क्षेत्र से विशेष परिचित न होने के कारण उसने राजस्व निर्धारण के लिये लखनऊ से मिर्जा जाफर को बुलाकर राजस्व प्रबन्ध के कार्य का श्रीगणेश किया और बाँदा के नवाब के समय प्रचलित राजस्व की दरों की समीक्षा करते हुये स्थाई व्यवस्था होने तक भूमि कर की दरें निर्धारित कर दीं । बाँदा का लगभग सम्पूर्ण जिला अंग्रेजों को दिसम्बर 1803 की पूना की संधि के द्वारा प्राप्त हुआ था ।[2] इस क्षेत्र पर 1804 के रेगुलेशन नं0 4 लागू किया गया ।[3] जहाँ तक कालिन्जर का प्रश्न था उसका प्रबन्ध 1812 तक कालिन्जर के चौबे जमींदारों के सुपुर्द में था ।[4] तत्पश्चात् अंग्रेजी सरकार तथा चौबे जागीरदारों के बीच क्षेत्रों का

---

1. एचिन्सन, सी0यू0, ट्रीटीज इन्गेजमेण्ट्स एण्ड सनद्स, जिल्द-5, कलकत्ता, 1909, पृष्ठ-295.
2. वही.
3. वही.
4. एटकिन्सन, ई0टी0, बुन्देलखण्ड गजेटियर इलाहाबाद, 1878, पृष्ठ-366.

आदान-प्रदान हुआ । जिसके अनुसार पाँच जागीरदारों को बिलहरी तथा बदोसा के कुछ गाँव प्राप्त हुये । इसके बदले में अंग्रेजों ने कालिन्जर के क्षेत्र पर अधिकार कर लिया ।[5]

परगना खान्देह जो जालौन के मराठा सूबेदार के अधीन था , वह भी 1818 में अंग्रेजों को प्राप्त हो गया । ठीक इसी तरह बाँदा के अन्य क्षेत्रों पर भी अंग्रेज अपना आधिपत्य स्थापित करने में सफल हो गये ।

1854 में राजा गंगाधर राव की मृत्यु के बाद झाँसी की रियासत को अंग्रेजी शासन में मिला लिया गया था । इसके बाद के कुछ वर्षों का समय रानी लक्ष्मीबाई और अंग्रेजों के बीच परस्पर विरोधी दावे को लेकर गुजरता रहा । किन्तु 1858 में शांति व्यवस्था स्थापित होने के बाद राजस्व कर निर्धारण की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई । राजा गंगाधर राव की मृत्यु के समय झाँसी की रियासत जिस पर अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया था । उसमें 9 परगने थे, झाँसी , पिछोर, करेरा, मऊ, पंडवाहा और विजयगढ़ , इसके अतिरिक्त मोंठ, भाण्डेर और गरौठा भी अंग्रेजी शासन के अंग थे ।[6] ललितपुर 1891 तक एक पृथक जिला था ।[7] अतः झाँसी व ललितपुर के राजस्व बन्दोबस्त अलग-अलग समय पर किये गये, लेकिन 1903 में

---

5. एटकिन्सन, ई०टी०, बुन्देलखण्ड गजेटियर, इलाहाबाद, 1878, पृष्ठ-366.
6. पाठक, एस०पी०, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-92.
7. वही.

झाँसी और ललितपुर का राजस्व-प्रबन्ध पिम ने साथ-साथ किया, क्योंकि उस समय ललितपुर-झाँसी में मिलाकर उसका एक सब-डिवीजन बना दिया गया था ।

क्षेत्रों में प्रायः परिवर्तन होने के कारण राजस्व इतिहास के प्रारम्भिक स्वरूप के बारे में विशेष जानकारी प्राप्त करना कठिन प्रतीत होता है ।[8] 1857 के विद्रोह के समय राजस्व निर्धारण सम्बन्धी पत्रावलियों के नष्ट हो जाने के कारण भी हमें इस सम्बन्ध में काफी कठिनाई उठानी पड़ती है ।[9]

बुन्देलखण्ड में कठोर राजस्व प्रणाली :

अंग्रेजी शासन काल में बुन्देलखण्ड के जिलों में जो भी राजस्व प्रबन्ध किये गये उनके पीछे उद्देश्य अधिक से अधिक धन वसूल करना था । औपनिवेशिक सत्ता की रुचि इस देश के आर्थिक शोषण करने में ही थी और इसी नीति के अनुरूप इस देश से राजस्व का दोहन अधिक से अधिक मात्रा में किया गया । झाँसी जनपद का प्रारम्भिक बन्दोबस्त 1857 के विद्रोह के पूर्व कैप्टन गोर्डन ने किया था किन्तु वह पूरे जिले का प्रबन्ध नहीं कर सका था । मोंठ, भाण्डेर और गरौठा के परगनों का बन्दोबस्त गोर्डन द्वारा किया गया था[10] ललितपुर का प्रथम स्थाई बन्दोबस्त 1869 में हुआ[11] किन्तु इसके पूर्व

8. ड्रेक-ब्रोकमैन, डी0एल0, झाँसी गजे0, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-136.
9. जेनकिन्सन, ई0जी0, झाँसी सेटिलमेण्ट रिपोर्ट, इलाहाबाद, 1871, पृष्ठ-108.
10. वही, पृष्ठ-81.
11. ड्रेक ब्रोकमैन, डी0एल0, झाँसी गजे0, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-141.

1844 और 1860 के पूर्व यहाँ राजस्व की संक्षिप्त व्यवस्था की गई थी ।[12] झाँसी तथा ललितपुर जिलों में राजस्व निर्धारण की प्रक्रिया 1857 के विद्रोह से प्रभावित रही किन्तु 1858 में शांति स्थापित होने के पश्चात् कैप्टन मैक्लीन ने अगस्त 1858 में कार्य को प्रारम्भ किया । 1892 में झाँसी का दूसरा बन्दोबस्त हुआ और तीसरा बन्दोबस्त पिम द्वारा 1903 में किया गया ।[13] इस प्रकार झाँसी और ललितपुर का सब-डिवीजन का बन्दोबस्त 1906 में पूरा हुआ ।

1804 में कैप्टन बेली ने मिर्जा जाफर की सहायता से बाँदा जिले में राजस्व की जो व्यवस्था प्रारम्भ की थी वो इस जिले के दक्षिणी तथा पूर्वी भागों तक सीमित थी ।[14] 1805 में अर्सकिन को बुन्देलखण्ड को एक स्थाई जिला बनाने के पश्चात् यहाँ का कलेक्टर बना दिया गया । 1806 में हिम्मत बहादुर की मृत्यु होने के पश्चात् उसकी जागीर भी अंग्रेजों के हाथ में आ गई । इस प्रकार पूरे क्षेत्र का प्रबन्ध अर्सकिन ने 1806 में किया । इसी प्रकार 1808, 1815, 1820 तथा 1825 में बाँदा में राजस्व प्रबन्ध किये गये ।[15] 1842 में इस जिले का पहली बार वैज्ञानिक ढंग से सर्वेक्षण प्रारम्भ हुआ और राजस्व कर का निर्धारण हुआ । इसके पश्चात् 1858 में राजस्व की दरों में संशोधन हुआ और 1874 में कैडिल ने बाँदा का बन्दोबस्त किया ।

---

12. ड्रेक ब्रोकमैन, डी०एल०, झाँसी गजे०, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-141.
13. पाठक, एस०पी०, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ 97-98.
14. कैडिल, ए०, सेटिलमेन्ट रिपोर्ट ऑफ बाँदा, इलाहाबाद, 1881, पृष्ठ-96.
15. ड्रेक ब्रोकमैन, डी०एल०, बाँदा गजे०, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-127.

1805 तथा 1806 में गवर्नर जनरल के रेजीडेन्ट बेली ने [illegible] जिले का राजस्व प्रबन्ध प्रारम्भ किया। इसी प्रकार 1807, 1812, 1815, 1842 में इस जिले के विभिन्न क्षेत्रों के प्रबन्ध हुये।[16]

जालौन जिले में मुख्यतः तीन राजस्व प्रबन्ध हुये 1863-64 में इस जिले के 675 गाँवों का लगान वसूली हेतु राजस्व की दरें निर्धारित की गईं।[17] 1875 में कोंच और कालपी का राजस्व प्रबन्ध किया गया जिसमें 203 गाँव शामिल थे। इस जिले में तीसरा बन्दोबस्त 1876-77 में हुआ।[18] जालौन रियासत में शामिल परगनों जैसे जालौन, मोहम्मदाबाद, इटौरा, रामपुरा और महोबा तथा गाँव का बन्दोबस्त 1838 में लेफ्टिनेन्ट डूलान ने किया था।[19] 1854 में जालौन का क्षेत्रफल परिवर्तित हुआ तथा 1860 में पुनः इस जिले के 255 गाँव को ग्वालियर रियासत को दे दिया।[20]

राजस्व-व्यवस्था का मूल्यांकन :

1803 से 1947 के बीच औपनिवेशिक शासन के समय बुन्देलखण्ड सामाजिक, आर्थिक रूप से अत्यन्त दबा हुआ था। इस युग में राजस्व की अत्यन्त कठोर दरें निर्धारित की गईं। राजस्व निर्धारण के अधिकारी प्रायः सेना के उच्च अधिकारी थे। प्रायः बिना पूर्व

---

16. एटकिन्सन, ई0टी0, बुन्देलखण्ड गजे0, इलाहाबाद, 1878, पृष्ठ-173.
17. वही.
18. वही.
19. वही, पृष्ठ-212.
20. वही.

अनुभव तथा इस क्षेत्र के लोगों की आर्थिक क्षमता को सोचे समझे अधिक से अधिक धन राजस्व के रूप में वसूल किया जाता रहा । ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे जनता द्वारा भुगतान करने की क्षमता का परीक्षण किया जा रहा हो । राजस्व निर्धारण में बुन्देलखण्ड के सभी जिलों में एक समान नीति नहीं अपनाई गई । अधिक से अधिक राजस्व वसूल कर अधिकारियों में अपने उच्च अधिकारियों को प्रसन्न करने की होड़ लगी हुई थी । राजस्व निर्धारण के जो तरीके अपनायें गये उसकी भिन्नता स्पष्ट परिलक्षित होती है । उदाहरण के लिये बाँदा जिले में 1874 के बन्दोबस्त अधिकारी केडिल ने कई गाँवों को अनेकों भागों में विभाजित कर विभिन्न वर्ग बनाये थे ।[21] वहीं दूसरी ओर इस जिले के कर्वी सब-डिवीजन के बन्दोबस्त अधिकारी पैटरसन ने 1881 के बन्दोबस्त के समय दरों का निर्धारण विभिन्न किस्म की भूमि पर आधारित किया ।[22]

राजस्व की दरें अत्यन्त ही कठोर थी । 1804 में कैप्टन बेली ने जैसे ही इस क्षेत्र में पदार्पण किया उसने तत्कुमक बाँदा के लिये राजस्व की ऊँची से ऊँची दरों का निर्धारण किया । इसकी पुष्टि इस तथ्य से होती है कि एक ही वर्ष बाद 1805 में अरस्किन को इन दरों में कमी करनी पड़ी ।[23] इन दुखद घटना का अन्त यहीं नहीं हुआ । अरस्किन के बाद बाँदा जिले के बन्दोबस्त का कार्य बान्धुप

21. केडिल, ए०, सैटिलमेन्ट रिपोर्ट ऑफ बाँदा, इलाहाबाद, 1881, पृष्ठ-14.

22. ड्रेक ब्रोकमेन, डी०एल०, बाँदा गजे०, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-132.

23. वही.

को मिला था जिसने दरों में पुनः वृद्धि कर दी थी ।[24]

परिणाम स्वरूप कृषकों की आर्थिक स्थिति दयनीय होती गयी । लगातार पड़ रहे अकालों तथा अन्य आपदाओं के कारण किसान पहले से ही परेशान थे, किन्तु राजस्व की बढ़ी हुई दरों ने उनके कन्धों पर और अधिक बोझ डाल दिया । आश्चर्य की बात तो यह थी कि उपरोक्त विपत्तियों में राहत तथा सुविधा पहुँचाने के स्थान पर सरकार ने राजस्व की बढ़ी हुई दरों को तीव्रता से वसूल करने का आदेश दे दिया ।[25] इस स्थिति में असन्तोष की लहर और बढ़ी । बन्दोबस्त अधिकारी तथा बाँदा के कलेक्टर केडिल ने स्वयं ब्रिटिश अधिकारियों द्वारा राजस्व की दरों के उच्च निर्धारण की तीखी आलोचना करते हुये कहा "ऐसा प्रतीत होता है कि हमारा प्रशासन राजस्व वसूली के तरीकों में उन अमानुषिक परम्पराओं का पालन कर रहा है जो किसी काल में अत्याचारी शासकों द्वारा किये जाते रहे" ।[26] राजस्व की उच्च दरें इसके साथ ही साथ उनका तेजी से वसूली के कारण इस जिले के अधिकांश लोगों को सरकारी दरों की पूर्ति के लिये अपनी भूमि मारवाड़ियों, जैनियों तथा अनेक ऋण-दाताओं के हाथों में बेचनी पड़ी । बाँदा तथा कर्वी सब-डिवीजन दोनों क्षेत्रों में राजस्व प्रबन्ध अकाल तथा अन्य प्राकृतिक आपदाओं के कारण प्रभावित होते रहे । सम्भवतः किसी भी बन्दोबस्त ने अपनी-

---

24. केडिल, ए०, सेटिलमेन्ट रिपोर्ट ऑफ बाँदा, इलाहाबाद, 1881, पृष्ठ-14.
25. वही.
26. वही.

अपनी अवधि पूरी नहीं की होगी । इस प्रकार की राजस्व नीति भी जिले के सामाजिक, आर्थिक पिछड़ेपन के लिये उत्तरदायी रही ।

झाँसी तथा ललितपुर जिलों की भी लगभग स्थिति ऐसी रही । इन जिलों में बन्दोबस्त अधिकारियों का प्रायः स्थानान्तरण होता रहा । अतः राजस्व निर्धारण की एक समान नीति का पालन नहीं किया गया ।[27] यह उल्लेखनीय है कि कैप्टन जॉर्डन ने जहाँ झाँसी जिले में भूमि के उत्पादन के आधार पर कर का निर्धारण किया था वहाँ डेनियल और डेविडसन ने विभिन्न किस्म की भूमि का सेवेक्षण कर उनकी किस्म के अनुसार लगान की दरें निर्धारित की । 1864 में अपने बन्दोबस्त के समय जैनकिन्सन झाँसी के बन्दोबस्त अधिकारी ने यह दावा किया था कि इस जिले की राजस्व दरें उचित हैं और ये दरें इतनी हल्की हैं[28] कि जिन्हें जमींदार आसानी से अदा कर सकते हैं । जैनकिन्सन ने इस सम्बन्ध में यह स्पष्ट है कि नई दरें पूरे जिले में एक समान नहीं थी । कुछ परगनों में तो यह हल्की थीं, जबकि अन्य परगनों में ये दरें कठोर थीं । जैनकिन्सन के ही शब्दों में भाण्डेर परगना में राजस्व की दरें हल्की थीं, जबकि अन्य परगनों में ये काफी ऊँची थीं। इसके अतिरिक्त मऊ तथा पण्डवाहा परगनों के राजस्व की दरें भी भिन्न भिन्न थीं । संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि इन परगनों में कुछ गाँवों में ये अत्यन्त ही ऊँची थीं ।[29] डेनियल जिसने इन परगनों का बन्दोबस्त

---

27. पाठक, एस०पी०, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-111.
28. जैनकिन्सन, ई०जी०, झाँसी सेटिलमेन्ट रिपोर्ट, इलाहाबाद, 1871, पृष्ठ-105.
29. वही.

किया था उसने इस ओर उचित ध्यान नहीं दिया अथवा उसे इस सम्बन्ध में पर्याप्त सूचना प्राप्त नहीं हुई । निःसन्देह राजस्व के भार से इन परगनों में स्थिति दयनीय हुई । बाद में कलकर भऊ परगने के बन्दोबस्त की जब जाँच की गई तब जाँच अधिकारी पॉर्टर ने इस बात को स्वीकार किया कि राजस्व की ऊँची दरें इन परगनों की गरीबी के लिये उत्तरदायी है ।[30]

बाँदा की भाँति झाँसी तथा ललितपुर में भी बन्दोबस्त अपना पूरा समय पूर्ण नहीं कर सके । इसका मुख्य कारण समय-समय पर अकालों तथा प्राकृतिक आपदाओं का प्रभाव रहा । जैसे ही नया बन्दोबस्त लागू हुआ , झाँसी में 1868 में भयंकर अकाल पड़ा ।[31] 1872 में इस जिले की 40,000 एकड़ जमीन[32] में घास उग गई थी । निः सन्देह इससे कृषकों की आर्थिक स्थिति दयनीय हुई और वे गरीबी के कारण जैनियों, मारवाड़ियों तथा अन्य ऋण-दाताओं को अपनी जमीनें बेचने लगे ।

झाँसी जिले का दूसरा बन्दोबस्त उस समय हुआ (1890-91) जबकि जिले की स्थिति अत्यन्त ही खराब थी । इसके बावजूद भी वहाँ के किसानों ने कठिन परिश्रम से लगभग 18.81 प्रतिशत खेती का विस्तार किया । यही कारण था कि इस प्रगति को देखते हुये अँग्रेजी सरकार के

30. इम्पे, डब्ल्यू०एच०एल० तथा मेस्टन, जे०एस०, झाँसी सेटिलमेन्ट, इलाहाबाद, 1892, पृष्ठ 55-56.
31. वही.
32. ड्रेक ब्रोकमैन, डी०एल०, झाँसी गजे०, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-140.

पहले से ही चली आ रही राजस्व की दरों में 12 प्रतिशत की वृद्धि कर दी । यह वृद्धि भी आर्थिक पिछड़ेपन का कारण बन गई ।

ललितपुर जिले में हुये बन्दोबस्त की असमान तथा कठोर दरों की पुष्टि इसी बात से होती है कि परवर्ती बन्दोबस्त में राजस्व की पूर्व निर्धारित दरों को कम करना पड़ा ।[33]

1903 में यहाँ के बन्दोबस्त अधिकारी पिम ने लिखा था कि इस जिले में पहले बन्दोबस्त से राजस्व की दरें निर्धारित की गई थीं । वे दरें उन गाँवों में जहाँ पर कि परिश्रमी किसान थे, वहाँ काफी ऊँची रखी गयीं, किन्तु ऐसे गाँव जहाँ बुन्देला ठाकुरों का बोलबाला था उनके लिये राजस्व की दरें कम रखी गयीं ।[34] ऐसा प्रतीत होता है कि ब्रिटिश सरकार ने बुन्देला ठाकुरों को खुश करने का प्रयास किया, ताकि वे सरकार का सहयोग कर सकें । निःसन्देह इस प्रणाली से परिश्रमी किसानों को नुकसान हुआ जिनसे राजस्व की उच्च दरें वसूल की जाती थीं । इन परिश्रमी किसानों का उत्साहवर्धन तथा प्रोत्साहन करने के स्थान पर सरकार ने राजस्व की दरें बढ़ाकर उन्हें हतोत्साहित करने का प्रयास किया ।

ललितपुर में दूसरा बन्दोबस्त जिसे हौरे ने 30 वर्ष के लिये बनाया था, वह अपनी अवधि पूरी नहीं कर सका ।[35] लगातार

---

33. पिम, ए०डब्ल्यू०, फाईनल सेटिलमेन्ट ऑफ झाँसी (ललितपुर सहित) इलाहाबाद, 1907, पृष्ठ-14.
34. वही.
35. पाठक, एस०पी०, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-114.

पड़ रहे अकालों, कांश की वृद्धि तथा अन्य प्राकृतिक आपदाओं ने किसानों की आर्थिक रीढ़ तोड़ दी थी और वे इस स्थिति में नहीं थे कि राजस्व का भुगतान कर सकें । अतः बाध्य होकर सरकार को 1903 में ही इस बन्दोबस्त का पुनः निरीक्षण करना पड़ा जिसमें पुनः राजस्व की दरें कम करनी पड़ी । राजस्व की इस छूट ने भी किसानों को कोई सहायता नहीं पहुँचाई , क्योंकि प्राकृतिक आपदाओं से लोग इतने परेशान थे जिससे उनकी स्थिति निरन्तर दयनीय होती चली जा रही थी । इस प्रकार झाँसी, ललितपुर, बाँदा आदि सभी जिलों में बन्दोबस्त न तो ठीक प्रकार से हो सके और न ही जनता को इससे सन्तोष हुआ ।

जालौन जिले का राजस्व प्रबन्ध भी लगातार गाँवों के परिवर्तन तथा उनके क्षेत्रफल के परिवर्तन के साथ-साथ प्रभावित होता रहा । ग्वालियर रियासत से मिलने वाली सीमा पर बसे गाँवों को हमेशा यह चिन्ता बनी रहती थी कि वे जालौन जिले में रहेंगे अथवा ग्वालियर जिले को दे दिये जायेंगे । ठीक यही अनिश्चय की स्थिति जालौन तथा झाँसी की सीमा पर बसे गाँवों की स्थिति थी । किसी भी समय पूरे जिले का एक साथ बन्दोबस्त नहीं किया गया । कुठयागढ़ परगना का जो बन्दोबस्त हुआ था उसकी दरें इतनी ऊँची थीं कि 1848, 1849 में इसमें संशोधन करना पड़ा ।[36] ठीक यही स्थिति अन्य परगनों की भी थी । इसके साथ ही मार्च , 1853 में

---

36. एटकिन्सन, ई०टी०, बुन्देलखण्ड गजे०, पृष्ठ-219.

परगना महोबा और जैतपुर जो जालौन जिले के अंग थे , उन्हें हमीरपुर को हस्तान्तरित कर दिया गया । इसके बदले जालौन को कालपी और पूंछ के परगने मिले । 1854 में मोंठ , चिरगाँव और गरौठा तथा 1856 में भाण्डेर के परगने जालौन से झाँसी जिले को दे दिये गये ।[37] 1850 में भी अरस्किन ने इसी प्रकार के परिवर्तन किये । निःसन्देह इन परगनों में बसे हुये गाँवों को हमेशा अनिश्चय की स्थिति का सामना करना पड़ा जिससे वे हमेशा मनोवैज्ञानिक दबाव में बने रहे ।

जालौन के भी राजस्व प्रबन्ध अपना पूर्ण लक्ष्य पूरा नहीं कर सके । इनकी दरें भी बुन्देलखण्ड के अन्य जिलों की तरह असमान तथा कठोर थीं । प्राकृतिक आपदाओं ने भी इनको ठीक प्रकार से चलने नहीं दिया । 1851 में अरस्किन ने जो बन्दोबस्त किया था। उसका जनता पर बुरा प्रभाव पड़ा लोग अपनी भूमि को बेचने लगे । 1855 में बालमैन ने यह अच्छी तरह स्पष्ट किया था कि "गाँव में भूमि की बिक्री तेजी से हो रही है । ऐसा प्रतीत होता है कि खेती से लोगों को लाभ नहीं हो रहा था । फलतः सरकार को कुछ गाँवों को अपने नियन्त्रण में लेना पड़ा । अधिकांश जमींदार परेशान तथा ऋण से ग्रस्त थे । यदि उनके ऋणदाता उनकी सहायता न करें तो वे अपनी भूमि के लिये बीज ही नहीं खरीद सकते थे । केवल जानवरों के अलावा उनके पास अन्य कोई व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं है "।[38]

---

37. एटकिन्सन, ई०टी०, बुन्देलखण्ड गजे०, पृ०-219.
38. वही.

बालगैन ने 1855 में जालौन जिले की स्थिति का वर्णन करते हुये पुनः लिखा है - "इस जिले का $\frac{1}{6}$ भाग खेती की परिधि से बाहर हो गया है। अकाल तथा प्राकृतिक आपदाओं से लोग खेती करना छोड़ रहे हैं। राजस्व की दरों से भी लोगों पर बुरा प्रभाव पड़ा है"। कैप्टन स्कीने जो 1855 में जालौन का सुपरिन्टेन्डेन्ट था।[39] उसने भी इसी मत की पुष्टि की है तथा लिखा है कि "इस समय इन जिलों में जो बन्दोबस्त चल रहा है उनकी दरें इतनी ऊँची हैं कि जिसका कुपरिणाम जमींदारों पर स्पष्ट दिखाई दे रहा है"। यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि कठोर राजस्व नीति बुन्देलखण्ड में 1857 के विद्रोह का प्रमुख कारण रही। निःसन्देह इस क्षेत्र के आर्थिक पिछड़ापन के लिये राजस्व की कठोर दरें उत्तरदायी थीं।

हमीरपुर जिले की राजस्व स्थिति बुन्देलखण्ड के अन्य जिलों की भाँति ही दुखद रहीं। राजस्व की असमान तथा कठोर दरें इस व्यवस्था की मुख्य विशेषता को स्पष्ट करती है। इसके अतिरिक्त हमीरपुर जिले में डकैतों तथा लूटपाट करने वाले गिरोह नेता पारस राम, गोपाल सिंह इतने सक्रिय थे कि ये डकैत ब्रिटिश गाँव से किसानों से जबरन करवसूल कर लेते थे। इस प्रकार अंग्रेजी शासनकाल में असुरक्षा की भावना के कारण भी लोग बाध्य होकर उन डकैतों को कर दे देते थे।[40] अरिस्किन ने जब इस जिले का बन्दोबस्त प्रारम्भ किया तब उस समय 1807 में यह पता चला कि

---

39. स्टकिन्सन, ई०टी०, बुन्देलखण्ड गजे०, पृष्ठ-219.
40. वही, पृष्ठ-169.

इस जिले के बागी गोपाल सिंह तथा उसके समर्थकों ने पश्चिमी परगनों में अपना पूर्ण नियन्त्रण स्थापित कर रखा है ।[41] 1803 में बान्पुस ने इन पश्चिमी परगनों की राजस्व की दरों को बढ़ा दिया । स्कान का मत है कि पनवाड़ी परगने में राजस्व वृद्धि का कारण यह था कि वहाँ के दो कानूनगो आपस में झगड़ा रखते थे और उनके षड़यन्त्र से यह वृद्धि हो गई ।[42] लेकिन इतना सारा दोष इन निम्न अधिकारियों को नहीं दिया जा सकता । राजस्व जैसी दरों के निर्धारण के महत्व पूर्ण कार्य के लिये अन्य उच्च अधिकारी भी अपने कर्तव्यों का उचित निर्वाह नहीं कर सके । जिसके परिणामस्वरूप हमीरपुर जिले के पश्चिमी परगनों में राजस्व की दरें ऊँची हो गयी । पनवाड़ी परगने में स्थिति इतनी खराब हुई कि लोग राजस्व का भुगतान नहीं कर सके और 1815 में भुखमरी के शिकार हुये ।[43] 1815 में जब स्काट बारिंग ने पनवाड़ी का बन्दोबस्त प्रारम्भ किया तो उसने यह देखा कि पनवाड़ी की स्थिति अन्य परगनों से दयनीय है । स्काट बारिंग ने पूर्वी परगनों की राजस्व में 46 प्रतिशत वृद्धि कर दी और पश्चिमी परगनों में 21 प्रतिशत वृद्धि कर दी गई । यह उल्लेखनीय है कि पश्चिमी परगनों में पहले से ही राजस्व की दरें अत्यन्त ही ऊँची थीं । अधिकतम वृद्धि ने लोगों को भुखमरी की कगार पर ला दिया । राजस्व बोर्ड के कमिश्नर ने इस अनियमितता की ओर इशारा किया था, लेकिन बन्दोबस्त

---

41. एटकिन्सन, ई०टी०, बुन्देलखण्ड गजे०, पृष्ठ-169.
42. वही, पृष्ठ-170.
43. वही, पृष्ठ-170.

अधिकारी बारिंग ने इन ऊँची दरों का समर्थन किया । बारिंग के बाद बन्दोबस्त का कार्य बाल्पी को सौंपा गया जिसने राजस्व बोर्ड के कमिश्नर फोर्ड के इन सुझावों से राजस्व की दरों में कमी कर दी जाये , का प्रतिरोध किया तथा कमी के स्थान पर इन दरों की बढ़ोत्तरी की ओर संकेत किया ।[44] राजस्व की बढ़ोत्तरी का यह परिणाम निकला कि किसान ऋण ग्रस्त हो गये और उन्हें राजस्व की अदायगी के लिये अपनी जमीन बेचनी पड़ी । यहाँ तक कि 1825-26 में जब बाल्पी ने दूसरी बार बन्दोबस्त अधिकारी का कार्य-भार ग्रहण किया तो उसने पुनः अपनी पुरानी राजस्व की दरों का ही समर्थन किया । परिणामस्वरूप किसानों को जब भुगतान करने में कठिनाई हुई उसमें तहसीलदार तथा राजस्व-विभाग के कर्मों के वेतन इसलिये बन्द कर दिये ।[45] क्योंकि वे राजस्व की बकाया धनराशि की वसूली नहीं करा सके थे । निःसन्देह बाल्पी के बन्दोबस्त ने इस जिले की आर्थिक स्थिति को और खराब किया । संक्षेप में राजस्व की कठोर दरों के कारण लोगों को अपनी भूमि भारवाड़ियों तथा ऋणदाताओं के हाथ बेचनी पड़ी । 1815 से लेकर 1819 के बीच इस जिले के 815 जागीरों की इसलिये नीलामी करनी पड़ी, क्योंकि इनके भू-स्वामी राजस्व की दरों का भुगतान नहीं कर सके थे ।[46] 1842 में इस जिले की गरीबी का वर्णन रैलन की रिपोर्ट में देखने को

44. एटकिन्सन, ई0टी0, बुन्देलखण्ड गजे0, पृष्ठ-170.
45. वही, पृष्ठ 175-176.
46. वही, पृष्ठ-175.

मिलता है ।[47]जो उसी के शब्दों में राजस्व की ऊँची दरों का नतीजा था । उसने लिखा है " 1818 से लेकर 1824 के बीच में लखनऊ के एक व्यापारी कुतुबुद्दीन हुसैन खान ने हमीरपुर जिले की 8,000 रुपये राजस्व मूल्य के कई गाँवों को इसलिये खरीद लिया था क्योंकि वहाँ के भू-स्वामी राजस्व की पिछली बकाया का भुगतान नहीं कर सके थे ।[48] उसी समय फैजउद्दीन खान ने भी 7,000 रुपये की मालगुजारी की भूमि खरीद ली थी, लेकिन आगामी वर्षों में उसकी भी आर्थिक स्थिति इतनी खराब हो गई थी कि उसे भिखारी के रूप में जिला छोड़ देना पड़ा । ऐलन ने भूमि स्थानान्तरण के अनेक उदाहरण दिये हैं । वह पुनः लिखता है कि हमीरपुर के एक ऋणदाता दयाराम ने ऋण लेन-देन का व्यापार करके लगभग 12,000 रुपये की मालगुजारी की जमीन खरीद ली थी जो उन किसानों की थी जो आर्थिक तंगी के कारण राजस्व का भुगतान नहीं कर सके थे और बाध्य होकर अपनी जमीन ऋणदाताओं को बेच रहे थे , लेकिन दयाराम को भी सारी जमीन बाद में इसलिये बेच देनी पड़ी , क्योंकि वह स्वयं भी राजस्व का भुगतान नहीं कर सका था । इसी समय इलाहाबाद के मिर्जा मुहम्मद खान ने हमीरपुर के दो गाँवों की जमींदारी खरीद ली थी जिसकी वार्षिक मालगुजारी 4,000 रुपये थी ।[49] भूमि को खरीद करने वालों में हमीरपुर के एक सरकारी वकील गुनायका राय भी थे,

---

47. एटकिन्सन, ई0टी0, बुन्देलखण्ड गजे0, पृष्ठ-175.
48. वही.
49. वही, पृष्ठ 175-176.

लेकिन बाद में चलकर राजस्व की अदायगी न कर सकने के कारण उन्हें भी अपनी भूमि दूसरों को बेचनी पड़ी । यही स्थिति दीवान मदन सिंह की भी हुई जिन्होंने गरीब किसानों की भूमि खरीदी थी, किन्तु बाद में मदनसिंह की आर्थिक स्थिति स्वयम् खराब हुई और उन्हें अपनी सारी जमीन बेच[50] देनी पड़ी । मजे की बात तो यह थी कि एक यूरोपीय जमींदार गुल्स ने भी हमीरपुर जिले में कृषि के कुछ फार्म खरीदे थे, लेकिन उसकी भी आर्थिक स्थिति चिन्ताजनक हो गई थी । भूमि हस्तान्तरण की यह प्रक्रिया निरन्तर चलती रही। अतः इससे इस क्षेत्र में गरीबी, भुखमरी तथा बेरोजगारी का बोलबाला हुआ और सामाजिक, आर्थिक पिछड़ापन बढ़ता गया ।

उद्योगों का पतन एवम् व्याप्त बेरोजगारी :

अंग्रेजी शासन-काल में बुन्देलखण्ड का जो सामाजिक, आर्थिक शोषण हुआ उसके बारे में राजस्व की दरें तो लोगों के लिये घातक थी ही । राजस्व की इन दरों ने हिन्दू-मुस्लिम, ईसाई तथा अन्य कृषि कार्य में संलग्न जातियों को क्षतिग्रस्त किया जिनसे लोगों के मन में औपनिवेशिक शासन के प्रति घृणा और असन्तोष पनपता रहा। निःसन्देह इस भावना ने राष्ट्रीय एकता को मजबूत आधार प्रदान किया । जिसमें हिन्दू तथा मुसलमान, ईसाई, जैन आदि सभी धर्मावलम्बी एवम् सम्प्रदायों के लोग अपनी गिरती हुई स्थिति के लिये विदेशी शासन को जिम्मेदार मानने लगे ।

50. एटकिन्सन, ई०टी०, बुन्देलखण्ड गजे०, पृष्ठ- 175-176.

भारतीय आर्थिक समृद्धि का प्रधान कारण सूती कपड़ा तथा हथकरघा उद्योग था । जिसमें अधिकांश मुस्लिम ही कार्यरत थे । 1818 तक भारत न केवल अपनी जनसंख्या की कपड़े की जरूरतें ही पूरी करता था बल्कि सूती कपड़े से बनी वस्तुओं का निर्यात भी करता था ।[51] 1813 के बाद मुक्त व्यापार का सबसे पहला आघात भारत के कपड़ा उद्योग पर हुआ । ब्रिटिश सूती कपड़ा उद्योग को विकसित करने के लिये भारतीय निर्माताओं के साथ सीमा शुल्क में भेद-भाव का सिलसिला शुरु किया गया । भारत में आयात होने वाले ब्रिटिश सूती तथा रेशमी कपड़ों पर 3 से 5 प्रतिशत और ऊनी कपड़ों पर 2 प्रतिशत कर देना पड़ता था । वहाँ ब्रिटेन को निर्यात किये जाने वाले भारतीय सूती कपड़ों पर एक प्रतिशत, रेशमी कपड़ों पर 20 प्रतिशत और ऊनी कपड़ों पर 30 प्रतिशत टैक्स देना पड़ता था ।[52] परिणामस्वरूप 1814 और 1835 के बीच इंग्लैण्ड में बने सूती कपड़े की भारत में खपत लगभग दस लाख गज से बढ़कर पाँच करोड़ दस लाख गज से भी अधिक हो गई। इसी अवधि में ब्रिटेन के बाजार में जाने वाले भारतीय सूती कपड़ों के कटपीसों की संख्या $12\frac{1}{2}$ लाख से घटकर तीन लाख छः हजार हो गई और 1844 तक तो यह संख्या केवल 63 सौ गज रह गई ।[53] 1850 तक स्थिति ऐसी हो गई कि भारत जो कई सौ वर्षों से समूचे दुनिया को कपड़ा भेजता आ रहा था । अब निर्यात किये जाने वाले कुल

---

51. रजनी पामदत्त, आज का भारत, पृष्ठ-143.
52. वही.
53. सत्यारराय, भारत में उपनिवेशवाद और राष्ट्रवाद, पृष्ठ-[illegible].

ब्रिटिश सूती कपड़ों का एक चौथाई हिस्सा अपने यहाँ मँगाने लगा। मजे की बात तो यह है कि इंग्लैण्ड के मशीन से बने कपड़ों ने जहाँ भारत के बुनकरों को बर्बाद किया वहीं दूसरी तरफ मशीन से बने सूत कातने वालों को उजाड़ दिया । सूती कपड़ो के अलावा रेशमी कपड़ों, ऊनी कपड़ों, लोहे, बर्तन, कांच तथा कागज आदि के मामलों में भी यही हालत हुई ।[54] देश में अलमोनियम के सामान का प्रयोग होने लगा । भारत के विभिन्न क्षेत्रों में रेलों के पहुँचने से सस्ता विदेशी लोहा और इस्पात भी वहाँ पहुँच गया जिससे लोहा बनाने वाले देशी उद्योग वस्तुतः समाप्त हो गये ।[55] इस तरह शहरों और गाँवों दोनों स्थानों में रहने वाले लाखों शिल्पी और कारीगरों, सूत काटने वालों, बुनकरों, लोहारों आदि के लिये कोई विकल्प नहीं बचा । और वे ब्रिटेन के उद्योगी पूँजीवाद के उपनिवेशी के रूप में परिवर्तित हो गये ।

18 वीं शदी के आरम्भ में ब्रिटिश पूँजीपतियों ने भारतीय सूती और रेशमी कपड़ों के विरुद्ध स्वदेश आन्दोलन चलाया । उन्होंने 1700 और 1720 में दो कानून ब्रिटिश पार्लियामेण्ट से बनवाकर इंग्लैण्ड में भारतीय सूती और रेशमी कपड़े पहनने तथा दूसरी तरफ इस्तेमाल करने पर रोक लगवा दी[56] इस कानून के भंग करने वाले को 200 पौण्ड जुर्माना देना होता था ।[57] ब्रिटेन के छींट के उद्योगपतियों

---

54. रजनी पामदत्त, आज का भारत, पृष्ठ-143.
55. वही.
56. मजूमदार, चौधरी और दत्त, एण्ड एडवान्स हिस्ट्री ऑफ इंडिया, (मैक मिलन, न्यूयार्क 1967), पृष्ठ-802.
57. कार्लमार्क्स, ईस्ट इंडिया कम्पनी उसका इतिहास और परिणाम न्यूयार्क डेली ट्रिब्यून के 11 जुलाई 1853 के अंक में प्रकाशित लेख।

की माँग पर 1780 में भारतीय छींट का इंग्लैण्ड में आयात 4 साल के लिये पुनः बन्द कर दिया गया।[58] इस तरह 18 वीं शदी के उत्तरार्ध में भारतीय उद्योग के तैयार माल को ब्रिटेन के बाजार से दूर रखा गया। यहाँ के व्यापारी जो भी भारतीय कपड़ा या रेशम लाते वह विशेष रूप से योरोप में बेचने केलिये लाते थे।[59] भारत का जहाज उद्योग भी यहाँ के सूती और रेशमी कपड़ों के उद्योग की तरह विकसित था। 19 वीं शदी के आरम्भ तक यह भारतीय उद्योग ब्रिटिश उद्योग से काफी आगे बढ़ा हुआ था। भारतीय जहाजों में भारत का माल ब्रिटेन जाता था लेकिन भारतीय कपड़ों की तरह भारतीय जहाजों के विरुद्ध भी ब्रिटिश उद्योगपतियों ने आन्दोलन चलाया और कानून बनवाकर इस भारतीय उद्योग को भी नष्ट करवा दिया।[60] भारत के आर्थिक शोषण के उद्देश्य से कम्पनी तथा ब्रिटिश पूँजीपतियों ने मिलकर हमारे उद्योग धन्धों तथा व्यापार को नष्ट कर दिया। और भारतीय वस्तुओं को योरोप के बाजारों से निष्कासित करा दिया। करघा और चर्खा पुराने भारतीय समाज के धुरी थे किन्तु उपनिवेशिक शक्ति ने भारतीय करघा को तोड़ डाला, चर्खे को नष्ट कर दिया और भारतको जो कपड़े का घर कहलाता था उसे विदेशी कपड़े से भर दिया। भारत जो अपनी समृद्धि के सारे संसार में प्रसिद्ध था, उसे गरीबी,बिमारी, बेकारी और अकाल का घर बना दिया।[61]

---

58. मजूमदार, चौधरी और दत्त, वही, पृष्ठ 802-803.
59. वही.
60. वही, पृष्ठ-804.
61. सत्याराय, भारत में उपनिवेशवाद और राष्ट्रवाद, पृष्ठ-27.

मुस्लिम वर्ग की विशेष क्षतिः

यह उल्लेखनीय है कि भारत में अंग्रेजी शासन काल में कला, शिल्प, सूती वस्त्र उद्योग, हथकरघा आदि व्यापारिक कार्यों में अधिक से अधिक मुस्लिम वर्ग संलग्न था । अतः यह स्वाभाविक ही है कि अंग्रेजी शासनकाल में हुये आर्थिक शोषण तथा कुटीर उद्योगधन्धों के विनाश का सबसे बुरा प्रभाव मुस्लिम वर्ग की ही दशा पर पड़ा । बुन्देलखण्ड में भी कुटीर उद्योग धन्धों , कारीगरी, हथकरघा एवम् वस्त्रों के रँगाई के उद्योग में अधिकांश जुलाहे ही कार्यरत थे । ब्रिटिश शासन की स्थापना के लगभग 100 वर्ष पूर्व ही बुन्देलखण्ड में मऊरानीपुर, खरुआ वस्त्र उद्योग का एक प्रमुख केन्द्र बन चुका था । जिसके बारे में एटकिन्सन[62] ने लिखा था कि "मऊरानीपुर पहले एक छोटा सा गाँव था , जहाँ लोगों का मुख्य पेशा कृषि था । झाँसी के राजा रघुनाथ राव के समय छतरपुर से कुछ व्यापारी मऊरानीपुर आकर बस गये जिन्हें रघुनाथराव ने सहायता एवम् संरक्षण प्रदान किया । इन्हीं व्यापारियों ने इस क्षेत्र में औद्योगिक प्रतिष्ठान खोलने प्रारम्भ कर दिये । तभी से यह क्षेत्र व्यापारिक केन्द्र के रूप में विकसित होने लगा" । यहाँ का उद्योग खरुआ वस्त्र की बुनाई तथा रँगाई से सम्बन्धित था । वस्त्रों की रँगाई अल नामक पौधे की जड़ से पकाये गये रंग से की जाती थी ।[63] इस उद्योग के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के कपड़े बुनकरों द्वारा बुने जाते थे ।[64] इन कपड़ों की रँगाई कर देने से इन्हें खरुआ नाम से पुकारा

---

62. पाठक, एस०पी०, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-60.
63. वही.
64. एटकिन्सन, ई०टी०, बुन्देलखण्ड गजे०, पृष्ठ-289.

जाता था । 1863 तक यह उद्योग इतना विकसित हो चुका था कि डैनियल के अनुसार इसी वर्ष इस कपड़े का निर्यात लगभग छः लाख अस्सी हजार रुपये हुआ ।[65] मऊरानीपुर के व्यापारी भारत के दूर-दूर क्षेत्रों में अपना सामान बेचते थे । अमरावती, मिर्जापुर, नागपुर, इन्दौर, फर्रुखाबाद, हाथरस, कालपी, कानपुर और दिल्ली जैसे नगर इनके व्यापारिक सम्बन्धों के प्रमुख केन्द्र थे ।[66]

आश्चर्य यह है कि तत्कालीन परिस्थिति में जबकि बुन्देलखण्ड में औपनिवेशिक शासन के कष्टदायक परिणाम लोगों को भुगतने पड़ रहे थे । उस समय खरुआ वस्त्र उद्योग जो बुनकरों की जीविका का साधन था उसे सरकार की ओर से कोई प्रोत्साहन नहीं मिला बल्कि विदेशी रंग आ जाने के कारण मऊरानीपुर का वस्त्रों की बुनाई एवम् रंगाई का उद्योग संरक्षण के अभाव में नष्ट हो गया । इसी उद्योग से बुन्देलखण्ड का कपास उद्योग भी जुड़ा हुआ था । बुन्देलखण्ड में पैदा होने वाली कपास अच्छी किस्म के होने के बावजूद[67] मऊरानीपुर में उद्योग के नष्ट होने से माँग के अभाव में नष्ट हो गया। जिससे तमाम बुनकर जो हथकरघा के द्वारा सूती कपड़े तैयार करते थे । उनका भी उद्योग नष्ट हो गया । इसी तरह बुन्देलखण्ड के अन्य कुटीर उद्योग भी पूरी तरह क्षतिग्रस्त हुये ।

---

65. पाठक, एस०पी०, झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-61.
66. वही.
67. वही, पृष्ठ-62.

खजुआ उद्योग के अलावा बुन्देलखण्ड में अंग्रेजी शासन से पूर्व बुन्देलखण्ड में कुटीर उद्योग तथा हस्तशिल्प विकसित अवस्था में थे। जिनमें अधिकांश जुलाहे तथा मुस्लिम वर्ग के लोग ही कार्यरत थे। 1825 में केप्टन जेम्स फ्रेंकलिंग[68] ने झाँसी में बनने वाली अच्छी किस्म की [illegible] [illegible] झाँसी जिले के ही तालबेहट परगने में आस-पास के गाँवों में कम्बल बुनाई का कार्य होता था।[70] [illegible] में पीतल तथा लोहे की कलात्मक वस्तुयें बनाई जाती थीं।[71] ऐरछ में यहाँ के गाँव के आस-पास के मुसलमान कलात्मक ढंग की चुनरी बनाते थे।[72] इसी प्रकार ललितपुर में चन्देरी में बनने वाली अच्छी प्रकार की साड़ी जैसा कुटीर उद्योग प्रारम्भ करने के लिये कुछ जुलाहे आकर बसे थे लेकिन 1865 में हैजा फैल जाने के कारण उनमें से अधिकांश जुलाहे मर गये।[73] अंग्रेज सरकार ने इस उद्योग में लगे जुलाहों को प्रोत्साहन तो देना दूर यहाँ के कुटीर उद्योगों पर निषेधात्मक कर लगाये जिससे इनका पतन हुआ। बाँदा जिले में सूती कपड़ों की बुनाई का कार्य होता था और इस कपड़े को गजी कहते थे। इस कपड़े की रंगाई करके इसे फर्श पर बिछाने के कार्य में लाया जाता था।[74] ठीक इसी तरह बाँदा जिले में अनेक स्थानों पर पीतल तथा

---

68. मेमोरियल्स ऑफ बुन्देलखण्ड, मई 12, 1825, पृष्ठ-277.
69. ड्रेक ब्रोकमैन, डी०एल०, झाँसी गजे०, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-75, तथा जोशी, ई०बी०, झाँसी गजे०, लखनऊ, 1965, पृष्ठ-144
70. ड्रेक ब्रोकमैन, डी०एल०, झाँसी गजे०, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-75.
71. वही.
72. वही.
73. वही.
74. वही, पृष्ठ-77.

ताम्बे के कलात्मक बर्तन, सोने-चाँदी के अच्छे किस्म के आभूषण बनाये जाते थे । कम्बल तथा टाट-पट्टी की बुनाई भी की जाती थी । 1909 में ड्रेक ब्रोकमेन ने लिखा है कि बाँदा से जुड़े हुये कुछ गाँव में जैसे राजकी, कल्याणपुर और गौंडा आदि स्थानों पर विभिन्न प्रकार के पत्थरों को काटकर उनपर कलात्मक पॉलिश से अंकित किया जाता था । कर्वी में सिल्क की कढ़ाई का हस्तशिल्प विकसित दशा में था।[75] केन नदी के तलहटी में छोटे किस्म के पत्थरों को जो पानी की रगड़ से मुलायम और चिकने हो जाते थे उन्हें पालिश करके अच्छी किस्म के चमकीले पत्थरों के रूप में यहाँ के कारीगर सौन्दर्य प्रदान करते थे।[76] इन पत्थरों को लकड़ी के टुकड़ों पर ऊँचाई से मढ़कर हस्तनिर्मित चीजें बनाई जाती थीं । इस कलात्मक कार्य ने यहाँ के कारीगरों को दिल्ली प्रदर्शनी में पारितोषिक भी प्राप्त कराया था ।[77] हमीरपुर में भी जुलाहे, वस्त्रों की बुनाई , लोहे, पीतल के बर्तन तथा आभूषण निर्माण का कार्य करते थे ।[78] 1847 में रेलन ने लिखा था कि हमीरपुर जिले में कुछ स्थानों पर कपड़ों की रंगाई का कार्य होता था । जिसमें बढ़िया कपड़े भी शामिल होते थे ।[79] जालौन में भी कौंच, कालपी, सैयदनगर और कोटरा में वस्त्रों की रंगाई अच्छी प्रकार की जाती थी । जिसमें बुन्देलखण्ड के ही कपास का प्रयोग होता था ।

---

75. ड्रेक ब्रोकमेन, डी०एल०, बाँदा गजे०, इलाहाबाद, 1909, पृ०-77.

76. वही.

77. वही.

78. एटकिन्सन, ई०टी०, बुन्देलखण्ड गजे०, पृ०-183.

79. वही.

उपरोक्त सभी कुटीर उद्योग धन्धों तथा हस्तशिल्पों के नष्ट होने से इनसे जुड़ा हुआ मुस्लिम वर्ग बुरी तरह प्रभावित हुआ। उसने अपने दुख तथा दरिद्रता का प्रमुख कारण अंग्रेजी शासन को समझा। बुन्देलखण्ड के मुसलमानों ने इस परिवेश में यह आवश्यक समझा कि हिन्दुओं तथा अन्य धर्मावलम्बियों से कन्धे से कन्धा मिलाकर परस्पर सहयोग से विदेशी शासन को उखाड़ फेंका जा सकता है। निःसन्देह आर्थिक शोषण ने राष्ट्रीय एकता के बोध को बढ़ावा दिया।

बाँदा के नवाब के प्रति अंग्रेजी नीति :

भारतीय इतिहास के रंगमंच पर बाँदा के नवाबों की गाथा का प्रारम्भ महाराज छत्रसाल बुन्देला के दत्तक पुत्र पेशवा बाजीराव प्रथम और उनकी नृत्यांगना मस्तानी की प्रेम कथा से 1729-30 में हुआ था। इसकी परिणति 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम में नवाब अली बहादुर द्वितीय के भाग लेने से हुई। इस बीच मस्तानी बाजीराव के वंशज शमशेर बहादुर, अलीबहादुर, शमशेर बहादुर द्वितीय, जुल्फिकार बहादुर और नवाब अली बहादुर द्वितीय बाँदा के नवाब हुये और वे पूना के पेशवाओं और मराठाओं के प्रति समर्पित तथा निष्ठावान रहे तथा उनके हितों के लिये संघर्ष करते हुये अपना सब कुछ दाव पर लगाते रहे थे।[80] शमशेर बहादुर ने पानीपत के तृतीय युद्ध में 22 वर्ष की आयु में पेशवा बाजीराव और मराठा सत्ता की आन पर अपना जीवन अर्पण कर दिया था। उसके पुत्र और बाँदा के नवाबों के संस्थापक

80. गुप्त, भगवान दास, मस्तानी बाजीराव, और उनके वंशज बाँदा के नवाब, पृष्ठ-132.

नबाब अली बहादुर ने बुन्देलखण्ड में मराठा प्रभुत्व की पुर्नस्थापना करने के लिये कालिन्जर में अपने प्राण दे दिये थे और उसके उत्तराधिकारी नबाब शमशेर बहादुर द्वितीय ने बेसीन की संधि (1803) के पश्चात् मराठा संघ का पक्षधर बनकर निरन्तर अंग्रेजों से संघर्ष किया और बाँदा की नबाबी से हाथ धो लिया था ।[81] इस स्वतन्त्रता कथा गाथा में बाँदा में रहने वाले आखिरी नबाब अली बहादुर द्वितीय ने सन् 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेकर बाँदा के नबाबों की उसी साहसपूर्ण परम्परा का निर्वाह किया ।

अंग्रेजों ने बाँदा के नबाबों के प्रति जो नीति अपनाई उसका मूल उद्देश्य बुन्देलखण्ड में अंग्रेजी सत्ता का विस्तार तथा यहाँ का आर्थिक शोषण कुटीर उद्योग धन्धों का विनाश तथा ईस्ट इंडिया कम्पनी को अधिक से अधिक लाभ पहुँचाना था । बाँदा के नबाब शमशेर बहादुर प्रथम से लेकर अली बहादुर द्वितीय तक नबाबों ने विदेशी आक्रान्ताओं से निरन्तर संघर्ष करने की शानदार परम्परा प्रारम्भ की । इन नबाबों ने धर्मनिरपेक्षता की अद्भुत परम्पराओं का पालन किया । यही कारण है कि वे भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के इतिहास में अमिट रूप से जुड़ गये । महारानी लक्ष्मीबाई तथा तात्या टोपे, मर्दनसिंह आदि सभी क्रान्तिकारियों के साथ राष्ट्रीय एकता को मजबूती प्रदान करते हुये अली बहादुर द्वितीय ने हिन्दू-मुस्लिम एकता का अद्भुत प्रदर्शन किया तथा 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम में डटकर रानी

---

81. गुप्त, भगवानदास, मस्तानी बाजीराव और उनके वंशज, बाँदा के नबाब, पृष्ठ-132.

लक्ष्मीबाई का साथ दिया । बुन्देलखण्ड में राष्ट्रीय एकता के इतिहास में यह एक अनोखा उदाहरण है ।

अंग्रेजों के प्रति व्याप्त असन्तोष :

औपनिवेशिक शासन में राजस्व अधिकारियों ने अधिक से अधिक राजस्व वसूलने के लिये बुन्देलखण्ड में अधिक से अधिक दरें निर्धारित की जो असमान तथा कष्टकारक थीं ।[82] राजस्व प्रबन्ध के समय स्थानीय दशाओं को न तो ध्यान में रखा गया और न तो स्थानीय कर्मचारियों से परामर्श ही किया गया । कृषकों की भुगतान क्षमता की बिल्कुल अवहेलना की गई । जितना जमींदार रहा गया उसे यह समझा गया कि जमींदार और अधिक भुगतान कर सकता है । इस नीति के दुखद परिणाम निकले और लोगों में अंग्रेजी शासन के प्रति घोर असन्तोष उत्पन्न हुआ । ठीक इसी प्रकार भारतीय जो कि धार्मिक मामलों में अत्यन्त ही भावना प्रधान थे । उनकी धार्मिक भावनाओं की भी उपेक्षा की गई । 1781 में हाउस ऑफ कामन्स की एक कमेटी ने सर्वसम्मति से विचार व्यक्त किया था कि यदि भारतीयों के धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप किया गया तो ब्रिटिश साम्राज्य नष्ट हो सकता है ।[83] लेकिन ईस्ट इंडिया कम्पनी ने इस प्रस्ताव की ओर ध्यान नहीं दिया और बुन्देलखण्ड में मिशनरियों के प्रचार तथा प्रसार से लोगों की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचाई गई । ईसाई मिशनरी

82. आर०एम० मार्टिन, द हिस्ट्री ऑफ द इण्डियन इम्पायर वोल्यूम, पेज-2.

83. कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, वोल्यूम-6, पेज-124.

पुलिस संरक्षण में राजकीय सहायता के बल पर धर्म प्रचार करते थे तथा उन तरीकों का प्रयोग करते थे जो स्थानीय लोगों को असह्य थे । सर सैय्यद अहमद खाँ ने कहा था[84] कि चारों ओर यह धारणा बन चुकी थी कि ईसाई धर्म प्रचारक सरकार द्वारा नियुक्त तथा संरक्षित थे । ठीक इसी तरह भारतीयों के सामाजिक मामलों में हस्तक्षेप किया गया ।[85] इसके अतिरिक्त सैनिकों में व्याप्त असन्तोष बुन्देलखण्ड के जमींदारों की जागीरें हड़पना, अपहरण की नीति, कुटीर उद्योग धन्धों का विनाश , रानी लक्ष्मीबाई के साथ दुर्व्यवहार, राजा बखतबली के साथ अपमान, कर्वी में नारायण राव तथा माधवराव के साथ दुर्व्यवहार , बाँदा के नवाब के साथ अनुचित व्यवहार आदि कारण से बुन्देलखण्ड के लोगों में अंग्रेजी शासन के प्रति घोर असन्तोष था ।

उपरोक्त परिस्थिति में बुन्देलखण्ड में हिन्दू तथा मुसलमान दोनों भली-भाँति यह समझने लगे थे कि अंग्रेजी शासक अपने हितों की रक्षा के लिये किसी भी सीमा तक जा सकते थे चाहे हिन्दू हो या मुसलमान हो अथवा अन्य सम्प्रदाय के समर्थक, अंग्रेज तो केवल अपने स्वार्थ सिद्धि में लगे हुये थे । बुन्देलखण्ड में व्याप्त सर्वधर्मसम्भाव तथा राष्ट्रीय एकता की परम्पराओं से यहाँ के लोगों में उभरते हुये असन्तोष के परिणामस्वरूप 1857 का विद्रोह प्रारम्भ हुआ ।

---0---

84. सैय्यद अहमदखाँ, असबाबे सरकशी ए हिन्दुस्तान, पेज-1[illegible]
85. सिन्हा, एस०एन०, द रिवोल्ट ऑफ 1857 इन बुन्देलखण्ड, पृष्ठ-41.

अध्याय सप्तम

1857 का विद्रोह एवम् बुन्देलखण्ड में हिन्दू-मुस्लिम सहयोग :

बुन्देलखण्ड में 1857 के महान् विद्रोह का प्रारम्भ सबसे पहले झाँसी से हुआ। इसके साथ ही पूरे बुन्देलखण्ड क्षेत्र में इस विद्रोह की चिन्गारी तेजी से फैली। झाँसी में 12 वीं पैदल सेना की टुकड़ी तैनात थी तथा 14 वीं घुड़सवार सेना की भी एक टुकड़ी यहाँ पर नियुक्त की गई थी। इसका सर्वोच्च अधिकारी डनलप था।[1] इन दोनों सेनाओं की टुकड़ियों में योरूपीय सैनिकों की संख्या नाम मात्र की थी। पैदल सेना में 522 भारतीय सैनिक, छैः योरोपीय थे जबकि घुड़सवार टुकड़ी में भारतीयों की संख्या 332 तथा योरोपीयन की संख्या पाँच थी। इसके साथ ही यहाँ स्थित तोपखाने में भारतीयों की संख्या 27 थी। कुल मिलाकर झाँसी स्थित अंग्रेजी सेना में 881 भारतीय तथा 11 योरोपीय थे। झाँसी नगर में ही दो किले थे। एक नगर में तथा दूसरा जिसे स्टार फोर्ट[2] के नाम से पुकारा जाता है छावनी में स्थित था। इसी स्टार फोर्ट में शस्त्रागार तथा शाही खजाना रखा जाता था। जिसकी देख-रेख कैप्टन स्कीने तथा कैप्टन गोर्डन किया करते थे। कैप्टन स्कीने स्टार फोर्ट का सुपरीन्टेन्डेन्ट तथा गोर्डन डिप्टी कमीश्नर था।[3] कैप्टन स्कीने को झाँसी स्थित सैनिकों की निष्ठा पर पूरा विश्वास था।

---

1. के0जे0डब्ल्यू0, ए हिस्ट्री ऑफ द सिपाय्स वार इन इण्डिया, भाग-3, लन्दन, 1876, पृष्ठ-362.
2. स्टार फोर्ट झाँसी कचहरी के पास, छावनी में स्थित स्टार के आकार की इमारत है।
3. सिन्हा, एस0एन0, द रिवोल्ट ऑफ 1857 इन बुन्देलखण्ड, पृष्ठ-71.

मेरठ में विद्रोह की खबर प्राप्त होने के बाद [illegible] [illegible] स्कीने ने झाँसी छावनी निरीक्षण किया तथा सेना के बारे में अपना विचार अपने उच्च अधिकारियों को लिखा था कि "मैं यह नहीं समझता कि झाँसी तथा आस-पास के क्षेत्रों में विद्रोह की कोई आशंका है । मुझे उनकी निष्ठा पर पूरा विश्वास है ।"[4] झाँसी में विद्रोह के प्रारम्भ से पूर्व यहाँ के सिपाहियों को उत्प्रेरित करने के कुछ प्रयास किये गये । कैप्टन स्कीने ने कैप्टन डनलप को सूचित किया था कि लक्ष्मण राव तथा भोला नाथ नामक व्यक्तियों ने कठिनाई पैदा करने के उद्देश्य से सैनिकों से गोपनीय विचार-विमर्श किया था ।[5]

सैनिकों के अतिरिक्त बुन्देलखण्ड के ऐसे ठाकुरों ने भी विद्रोह की भूमिका बनाना प्रारम्भ कर दी थी जो ब्रिटिश शासन द्वारा अपनाये गये तरीकों से प्रभावित हुये थे । 30 मई 1857 को कैप्टन गोर्डन ने कैप्टन डनलप को सूचित किया था कि बुन्देलखण्ड के ऐसे ठाकुरों के प्रतिनिधियों की तथा झाँसी सेना के हवलदार तथा दो सिपाहियों के बीच विचार-विमर्श हुआ था जिसमें यह निश्चय किया गया था कि यदि ये ठाकुर विद्रोह करेंगे तो सैनिक उनमें सहयोग करेंगे अथवा अधिक से अधिक निष्क्रिय बने रहेंगे[6] इन सूचनाओं के बावजूद भी स्कीने ने यह आशा व्यक्त की थी कि झाँसी में शांति बनी रहेगी और सेना किसी भी प्रकार की हरकत नहीं करेगी लेकिन

---

4. कै०जे०डब्ल्यू०, ए हिस्ट्री ऑफ द सिपाय्स वार इन इण्डिया, भाग-3, लन्दन, 1876, पृष्ठ 362-363.
5. सिन्हा, एस०एन०, (वही), पृष्ठ-71.
6. वही.

निश्चित रूप से झाँसी नगर के धनवान लोगों में विद्रोह की घटनाओं को लेकर असन्तोष की भावना सक्रिय हो गई और ठाकुर युद्ध करने के लिये प्रयास कर रहे थे ।

एक जून 1857 को प्राप्त सूचना के आधार पर गोर्डन ने कैप्टन स्कीने को यह संकेत दिया था कि परगना करेरा के पवार ठाकुर विद्रोह की तैयारी कर रहे हैं ।[7] इसके लिये उन्होंने दो जून 1857 को करेरा कस्बे पर आक्रमण करने की योजना बनाई है । चूँकि ब्रिटिश अधिकारियों ने करेरा में अपनी सेना उसी दिन भेज दी थी अतः यह ठाकुर उस दिन अपनी योजना क्रियान्वित नहीं कर पाये ।[8] झाँसी में असन्तोष की भावना एक जून या दो जून 1857 को उस समय भड़क गई जबकि छावनी स्थित दो बंगलों में आग लगा दी गई ।[9] निःसन्देह यह किसी होने वाली बड़ी घटना की पूर्व चेतावनी थी किन्तु स्कीने ने सेना की विश्वसनीयता की पुष्टि करते हुये पुनः तीन जून को लेफ्टीनेन्ट गवर्नर को यह सूचित किया था कि झाँसी में शांति है और सैनिकों में किसी प्रकार की ऐसी कमजोरी नहीं है ।[10] घटनाओं का क्रम तेजी से उग्रता की ओर बढ़ रहा था और जब झाँसी के अंग्रेज अधिकारी सुरक्षा का वातावरण अनुभव कर रहे थे उस समय सेना में बेचैनी की छुट-पुट घटनायें दिखाई पड़ने लगी ।

---

7. सिन्हा, एस०एन०, (वही), पृष्ठ-71.
8. वही, पृष्ठ-72.
9. वही, पृष्ठ-72.
10. के०, (वही), भाग-3, पृष्ठ-363.

इसी समय यह चर्चा फैली की झाँसी स्थित सेना के जवान का एक रिश्तेदार दिल्ली से सैनिकों के नाम एक पत्र लेकर आया है । जिसमें यह उल्लेख है कि बंगाल की पूरी पैदल सेना ने विद्रोह कर दिया है । किन्तु झाँसी स्थित सेना ने अभी इस दिशा में पहल नहीं की है । अतः इसमें शामिल सैनिकों को सैनिक बिरादरी से बाहर निकाल दिया गया है ।[11] इस चर्चा के परिणामस्वरूप देवीसिंह , नौरंगसिंह , मनसिंह तथा जयदीन सिंह नामक जवानों ने अन्य सैनिकों को समझा-बुझा कर विद्रोह करने के लिये तैयार कर लिया था ।[12] इस प्रकार पूर्व निश्चित कार्यक्रम के अनुसार आपस में यह तय किया गया कि जैसे ही यह चेतावनी दी जायेगी कि डकैतों ने स्टार-फोर्ट पर आक्रमण कर दिया है वैसे ही पूरी सेना बैरक से निकलकर विद्रोह कर देगी । इसके बाद कोई भी सैनिक वापिस नहीं जायेगा ।[13]

इस प्रकार पाँच जून 1857 को तीन बजे के लगभग उपरोक्त चेतावनी देते हुये आवाज लगाई गई और तदानुसार अनेकों सैनिकों ने तुरन्त अपनी बन्दूकें उठाकर मोर्चा ले लिया ।[14] चार बजे पैदल सेना के कुछ सिपाहियों ने तथा 12 तोपखानों के सैनिकों ने स्टार-फोर्ट में रखे हुये शस्त्रागार तथा पाँच लाख रूपये लूट लिये ।[15] केप्टन गोर्डन ने अपनी सूचना में स्टार-फोर्ट में रखे गये साढ़े चार लाख रूपये की राशि लूटने का उल्लेख किया है ।[16] विद्रोही सैनिकों को दमन करने

---

11. के0 [वही], भाग-3, पृष्ठ-363.
12. फोरन पोलिटिकल कन्सलटेशन, 30 दिसम्बर, 1859, नम्बर-2[illegible]
13. वही, नम्बर-280.
14. वही.
15. वही.
16. वही.

के लिये अधिकारियों ने उस समय कोई प्रयास नहीं किये और उन्होंने यह सोचा कि यदि विद्रोही सैनिकों पर गोली चलाई गई तो उसका परिणाम यह होगा कि शेष सैनिक भी खुला विद्रोह करेंगे । स्टार-फोर्ट पर लगभग 50 सैनिक दो गनों के साथ घेरा डाले हुये थे ।[17] किन्तु उस समय तक कोई भी घायल नहीं हुआ था और कुछ अपवादों को छोड़कर झाँसी स्थित सभी योरूपीय तथा एंग्लोइण्डियन अधिकारी अपने परिवार की सुरक्षा के लिये स्टार-फोर्ट में शरण लिये हुये थे ।

विद्रोह की घटना प्रारम्भ होने से उत्पन्न परिस्थिति से निपटने के लिये ब्रिटिश अधिकारियों ने झाँसी के पड़ोसी समथर और ओरछा की रियासतों से मदद की माँग की किन्तु इन रियासतों से उस समय तक कोई सहायता नहीं पहुँची ।[18] अँग्रेज अधिकारियों ने ग्वालियर तथा कानपुर को सूचना भेजकर सहायता की माँग की ।

झाँसी में रानी लक्ष्मीबाई के प्रति लोगों में घनिष्टता एवम् सम्मान की भावना थी । लोग लक्ष्मीबाई का आदर करते थे । अतः अँग्रेजों ने अनुकूल वातावरण बनाने के लिये झाँसी की रानी से सहायता की माँग की । कैप्टन गोर्डन तथा कुछ योरूपीय अधिकारी लक्ष्मीबाई के पास यह प्रार्थना लेकर गये कि कल और भी बुरी घटनायें घट सकती है अतः हम यह सुझाव देते हैं कि झाँसी तथा आस-पास के क्षेत्रों का शासन आप अपने हाथ में रखें और यह व्यवस्था उस

---

17. फौरन पोलिटिकल कन्सल्टेशन, 30 दिसम्बर, 1859, नम्बर-280.
18. वही.

क्षेत्र में जब तक ब्रिटिश शासन की पुनः स्थापना नहीं हो जाती तब तक चलाती रहे । अंग्रेज अधिकारियों ने अपने तथा अपने परिवारजनों के जीवन की सुरक्षा के लिये भी रानी से प्रार्थना की ।[19] इस प्रार्थना को स्वीकार करते हुये रानी ने दो दिन तक अंग्रेज अधिकारियों को शरण देते हुये खाने आदि का प्रबन्ध किया तथा उनकी सुरक्षा और सहायता के लिये 100 तोपची सैनिकों को भेजा ।[20] इस प्रकार झाँसी में विद्रोह का प्रारम्भ 5 जून 1857 को हुआ ।[21]

दूसरे दिन छः जून को पुनः सेना की परेड हुई । ब्रिटिश अधिकारियों कैप्टन डनलप, जोर्डन और स्कीन ने विद्रोही सैनिकों से मिलकर शान्ति व्यवस्था बनाने के लिये प्रयास प्रारम्भ किये । स्कीन ने झाँसी की पड़ोसी रियासतों जैसे टेहरी, दतिया तथा गुरसराय में राव को अविलम्ब सहायता देने हेतु पत्र भी लिखे । इस बदलती हुई परिस्थिति में अंग्रेज अधिकारियों ने झाँसी के तहसीलदार को स्थानीय कुछ लोगों को सेना में भर्ती के लिये लाने को कहा । डिप्टी कलेक्टर एण्ड्रियूज ने जेल में जाकर वहाँ रखे गये शस्त्रों को स्टार-फोर्ट की ओर लाने का प्रयास किया किन्तु यह हथियार बहुत कम थे ।

उल्लेखनीय है कि जेल गार्ड तथा जेल का दरोगा दोनों ब्रिटिश शासन के विरुद्ध विद्रोह में शामिल हो चुके थे । अतः अंग्रेजों को

---

19. गोडसे, माझा प्रवास-हिन्दी अनुवाद, आँखों देखा गदर, पृष्ठ 79-80.
20. डी0वी0 पारसनीस, झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, पृष्ठ 101-102.
21. सिन्हा, एस0एन0, [वही], पृष्ठ-73.

उस उद्देश्य में भी सफलता प्राप्त नहीं हुई । उसी दिन दोपहर को काफी लोगों ने एकत्रित होकर एक साथ झाँसी नगर से छावनी की ओर प्रस्थान किया । जैसे ही यह लोग छावनी की ओर पहुँचे उसी समय ऐहसान अली नामक एक व्यक्ति ने सारे मुसलमानों को नमाज के लिये आवाज लगाई । यह संकेत पाकर छावनी स्थित सेना ने विद्रोह का बिगुल बजा दिया तथा अपने अधिकारियों जैसे कैप्टन डनलप, लेफ्टीनेन्ट कैम्पबेल तथा टर्नबुल को बन्दूक की गोलियों का निशाना बना दिया ।[22] इस घटना में लेफ्टीनेन्ट टेलर बुरी तरह घायल हुआ किन्तु किसी भी प्रकार किले तक पहुँचने में सफल हो गया । स्टार-फोर्ट की रक्षा के लिये वहाँ शस्त्र लिये हुये अधिकारी तैयारी करने लगे । इस किले के फाटक को बन्द कर दिया गया तथा किले की दीवारों की सुरक्षा के लिये योरूपीय एंग्लोइण्डियन तथा कुछ सिपाही जिनमें बटेरा के ठाकुर शामिल थे पहरा देने लगे ।[23] इस घटना के कुछ ही देर बाद विद्रोही सैनिक तथा क्रान्तिकारी जनों ने मिलकर जेल पर धावा बोल दिया तथा वहाँ बन्द किये गये कैदियों को मुक्त करा दिया। तत्पश्चात् विद्रोहियों ने कचहरी की इमारत तथा छावनी के बंगलों को आग लगा दी और किले पर धावा बोलने के उद्देश्य से प्रस्थान किया । किन्तु वहाँ किले की सुरक्षा कर रहे योरूपीयन लोगों की गोलीबारी से क्रान्तिकारियों की भीड़ थोड़ी दूर पर रुक गई ।

---

22. सिन्हा, एस0एन0, (वही), पृष्ठ-73.
23. जी0बी0 मैलेसन, हिस्ट्री ऑफ द इण्डियन म्यूटिनी, 1857-58, भाग-1, पृष्ठ-186.

विषम स्थिति देखकर कैप्टन गोर्डन ने रानी लक्ष्मीबाई से अविलम्ब सहायता हेतु प्रार्थना की ।[24] किन्तु विद्रोहियों ने रानी द्वारा सहायता प्रदान किये जाने पर उन्हें जान से मारने की धमकी दी तथा यह भी चेतावनी दी कि यदि रानी ने अंग्रेजों को सहायता दी तो शीघ्र ही राजमहल में आग लगा दी जायेगी । यह चेतावनी पाकर रानी ने भी अपने निवास के चारों ओर सुरक्षाकर्मियों को तैनात कर दिया ।[25]

7 जून 1857 को प्रातः कैप्टन स्कीने ने अपने तीन सैनिकों को रानी लक्ष्मीबाई के पास इस प्रार्थना के साथ भेजा कि जैसे ही स्टार-फोर्ट में निवास कर रहे यूरोपीय बाहर आयेंगे रानी लक्ष्मीबाई उनकी सुरक्षा करने के लिये प्रयास करें । लेकिन क्रान्तिकारी इतने सतर्क थे कि इन तीन सैनिकों को पकड़ कर उनकी हत्या कर दी । थोड़ी ही देर पश्चात् डेप्युटीकलेक्टर (मुख्य सदर अमीन) जिसने स्टार-फोर्ट से निकलने का प्रयास किया था, उसे भी रानी झाँसी के महल के दरवाजे के सामने कत्ल कर दिया गया । उसी दिन दो बजे स्टार-फोर्ट पर क्रान्तिकारियों तथा विद्रोही सैनिकों ने मिलकर धावा बोला जो शाम तक चलता रहा किन्तु स्टार-फोर्ट में शरण लिये हुये अंग्रेज किसी तरह वहाँ अपना नियंत्रण बनाये रखने में सफल रहे ।[26]

---

24. जी०बी० मैलेसन, हिस्ट्री ऑफ द इण्डियन म्यूटिनी, 1857-58, भाग-1, पृष्ठ-186.
25. सिन्हा, एस०एन०, (वही), पृष्ठ-74.
26. वही, पृष्ठ-74.

स्टार-फोर्ट पर विद्रोही सैनिकों तथा क्रान्तिकारियों का आक्रमणः

आठ जून 1857 को झाँसी के विद्रोही सैनिकों और क्रान्तिकारियों ने छावनी स्थित स्टारफोर्ट पर पुनः आक्रमण किया। रानी लक्ष्मीबाई के 150 व्यक्तियों को भी इस अभियान में शामिल कर लिया गया।[27] दोपहर तक क्रान्तिकारियों ने इस किले पर अधिकार कर लिया तथा इसकी रक्षा कर रहे कैप्टन गोर्डन का कत्ल कर दिया। कैप्टन गोर्डन जिस समय किले की दीवार से क्रान्तिकारियों के बढ़ते हुये कदमों की निगरानी कर रहा था उसी समय उसे गोली मार दी। इस घटना से स्टार फोर्ट में शामिल हुये योरूपीयन अधिकारी तथा उनके परिवार के लोग पूर्णतः आतंकित एवं हतोत्साहित हो गये। स्कीने ने आत्मसमर्पण करने का संकेत दिया तथा डा० सलेह मोहम्मद के द्वारा क्रान्तिकारियों के पास यह सन्देश भेजा कि यदि उन्हें सुरक्षित निकल जाने दिया जाये तो वे किला छोड़कर शस्त्र डाल कर जाने को तैयार हैं। कैप्टन स्कीने इस योजना से सहमत हो गये। तत्पश्चात् वहाँ शरण लिये हुये योरूपीयन एवं ऐंग्लोइण्डियन क्रान्तिकारियों द्वारा बन्दी बना लिये गये।

जोखनबाग की घटना तथा काले खाँ द्वारा विद्रोह का नेतृत्वः

स्टार-फोर्ट से निकलने के पश्चात् योरूपीयन तथा ऐंग्लोइण्डियनों को बन्दी बनाकर झाँसी कचहरी से जोखनबाग की ओर ले जाया गया। उल्लेखनीय यह है कि बंदियों के इस काफिले में

---

27. सिन्हा, एस०एन०, (वही), पृष्ठ-74.

योरूपीय महिलाओं तथा बच्चों के साथ क्रान्तिकारियों ने किसी भी प्रकार बुरा बर्ताव नहीं किया । जैसे ही यह पार्टी जोखनबाग की तरफ पहुँची वैसे ही झाँसी किले के दीवार के बाहर क्रान्तिकारी नेता काले खाँ ने यह आदेश दिया कि बन्दी बनाये गये सभी योरूपीयों को कत्ल कर दिया जाये । इस आदेश का क्रियान्वन करते हुये क्रान्तिकारियों ने सभी बन्दियों का बध कर दिया ।[28] किसी प्रकार मिसेज मुटलो स्थानीय महिला का वस्त्र पहनकर बच निकलने में सफल रही ।

इस समय तक काले खाँ तथा फेल दरोगा बख्शीश अली क्रान्तिकारियों का नेतृत्व कर रहे थे । बख्शीश अली ने ही अपने हाथ से मेजर स्कीने की हत्या कर दी थी ।[29] उल्लेखनीय यह है कि योरूपीय महिलाओं को किसी भी प्रकार अपमानित नहीं किया गया । इस समय बुन्देलखण्ड में हिन्दू-मुस्लिम एकता की दीवार सुदृढ़ हो चुकी थी । दोनों एक-दूसरे से मिलकर विदेशी शासन को समाप्त करने के लिये कटिबद्ध थे । 8 जून 1857 को झाँसी में यह घोषणा जारी की गई कि खल्क खुदा का मुल्क बादशाह का तथा राज्य हिन्दू तथा मुस्लिम का ।[30]

इस समय तक करेरा स्थित सेना ने भी विद्रोह कर दिया था तथा झाँसी के विद्रोहियों के साथ हाथ मिला लिया था । दिल्ली

---

28. सिन्हा, एस०एन०, (वही), पृष्ठ-74.
29. वही.
30. नरेटिव इवेन्टस, झाँसी डिवीजन, पृष्ठ-6.

का बादशाह बहादुर शाह द्वितीय हिन्दुस्तानी क्रान्तिकारी सेना के रूप में नेतृत्व सम्भाल लिया था । अन्य क्षेत्रों के विद्रोही सैनिकों की भाँति झाँसी के भी विद्रोही सैनिक दिल्ली की ओर प्रस्थान करना चाह रहे थे किन्तु पैसों की कमी आड़े आ रही थी । इन विद्रोही सैनिकों ने रानी लक्ष्मीबाई से सम्पर्क कर यह प्रस्ताव रखा कि झाँसी का राज्य वह रानी को देकर दिल्ली की ओर प्रस्थान करना चाहते हैं किन्तु रानी को तीन लाख रूपये इन सैनिकों को देना होगा ऐसा न करने पर विद्रोही सैनिकों ने रानी महल को उड़ा देने की धमकी दी ।[31] अन्त में रानी ने एक लाख रूपया क्रान्तिकारियों को देकर इस मामले का निपटारा किया । इसके पश्चात् कुछ दिन पूर्व जो घोषणा की गई थी उसमें संशोधन करते हुये विद्रोही सैनिकों ने यह घोषित किया "राज्य रानी लक्ष्मीबाई का"[32] इस घोषणा के पश्चात् विद्रोही सैनिक 11 जून 1857 को झाँसी से दिल्ली की ओर प्रस्थान कर गये ।[33]

बुन्देलखण्ड के अन्य क्षेत्रों में विद्रोह का शुभारम्भ :

झाँसी में विद्रोह के प्रारम्भ होने के साथ ही साथ बुन्देलखण्ड के अन्य क्षेत्रों में भी क्रान्तिकारी गतिविधियाँ प्रारम्भ हो गईं । मऊरानीपुर में स्थिति नियन्त्रण के बाहर समझकर वहाँ के डिप्टी कलेक्टर थार्टन ने मऊरानीपुर खाली कर दिया ।[34] तथा वहाँ का

---

31. ताहमान्कर, डी०बी०, द रानी ऑफ झाँसी, पृष्ठ-76.
32. सिन्हा, एस०एन०, (वही), पृष्ठ-76.
33. वही.
34. फोरन सीक्रेट कन्सल्टेशन, 30 अक्टूबर, 1857, नम्बर-603.

प्रबन्ध पुन्नू भईया को सौंप दिया गया[35] थार्टन मऊरानीपुर से गुरसराय भाग गया तथा वहाँ के राव के दरबार में शरण ले ली । उल्लेखनीय यह है कि गुरसराय का राव भी विद्रोही गतिविधियों से संचालित था । 10 जून 1857 को थार्टन ने मरोठा पहुँचकर वहाँ स्थानीय बुन्देलाओं को भर्ती कर सेना की एक टुकड़ी गठित करने का असफल प्रयास किया । स्थानीय पुलिस तथा तहसील के कर्मचारियों ने थार्टन की सहायता करने से मना कर दिया और इन कर्मचारियों ने बिना मुगल सम्राट की अनुमति प्राप्त किये शाही खजाना भी उपरोक्त अंग्रेज अधिकारी को देने से मना कर दिया । परिणामस्वरूप थार्टन मरोठा से भागकर सागर रियासत में शरण लेने को बाध्य हुआ ।[36] 13 जून 1857 को झाँसी के विद्रोही मोठ पहुँचे तथा वहाँ रखे सरकारी खजाने को अपने अधिकार में ले लिया । इस समय तक अधिकाँश जागीरदार तथा ठाकुर विद्रोह में सक्रिय हो चुके थे ।

झाँसी जिले के अतिरिक्त यहाँ से 200 मील पूर्व से स्थित नौगाँव में भी विद्रोही की चिन्गारी फूट चुकी थी । और वहाँ नियुक्त 12 वीं पैदल सेना घुड़सवार सेना तथा तोपखाने में तैनात सैनिकों ने विद्रोह के लिये तैयारी प्रारम्भ कर दी थी । जोखनबाग की घटना ने विद्रोह की अग्नि में घी डालने का कार्य किया योरूपीय अधिकारियों के कत्ल किये जाने का समाचार पूरे बुन्देलखण्ड में बम्ब की भाँति फैला। 10 जून को स्थानीय पैदल सेना ने परेड के समय शाम को एक सिक्ख

---

35. फोरन सीक्रेट कन्सलटेशन, 31 जुलाई, 1857, नम्बर-354 [डी
36. फोरन सीक्रेट कन्सलटेशन, 30 अक्टूबर, 1857, नम्बर-603.

सैनिक ने अपने हवलदार मेजर को सिर में गोली मारकर विद्रोह का प्रारम्भ किया ।[37] इस घटना से आतंकित होकर योरूपीय अधिकारियों ने नौगांव से पलायन किया । तत्पश्चात् विद्रोहियों ने वहाँ रखे एक लाख इक्कीस हजार चार सौ पैंसठ रुपये लूट लिये ।[38] झाँसी तथा नौगांव में हुये विद्रोह की घटनाओं से चन्देरी के लोगों को भी इस दिशा में पहल करने की प्रेरणा प्राप्त हुई । चारों ओर बुन्देले विद्रोह का सूत्रपात कर रहे थे[39] चन्देरी, तालबेहट तथा ललितपुर के चारों ओर बुन्देला ठाकुर बड़ी संख्या में एकत्र होने लगे थे और बानपुर के राजा मर्दनसिंह इस सुअवसर का प्रयोग अपने उद्देश्य की प्राप्ति में करने के लिये प्रयत्नशील था ।

मर्दनसिंह यह चाहते थे कि ऐसे वातावरण में अपने खोये हुये क्षेत्रों को पुनः प्राप्त कर लिया जाये । अतः मालथन के प्रवेश द्वार पर मर्दनसिंह ने 11 तथा 12 जून 1857 को अधिकार करते हुये वहाँ अपने सैनिक नियुक्त कर दिये । छठी ग्वालियर रेजीमेन्ट जो ललितपुर में तैनात थी उसके सैनिकों को मर्दनसिंह ने हतोत्साहित किया तथा उसमें नियुक्त स्थानीय अधिकारियों से मिलकर षड्यन्त्र करते हुये विद्रोह का सूत्रपात किया । मर्दनसिंह ने वहाँ स्थित छावनी को अपने हजारों समर्थकों के साथ घेर लिया । इसके पश्चात् अपनी सेना की टुकड़ी को दो गनों के साथ मर्दनसिंह ने चन्देरी पर आक्रमण करने के लिये भेजा और इसके पश्चात् चन्देरी पर मर्दनसिंह का अधिकार हो गया ।[40]

---

37. सिन्हा, एस०एन०, (वही), पृष्ठ-76.
38. वही.
39. फौरन सीक्रेट कन्सलटेशन, 18 दिसम्बर, 1857, नम्बर-273.
40. सिन्हा, एस०एन०, (वही), पृष्ठ-77.

कुछ ही दिनों के बाद सागर के राजा ने भी विद्रोह का झण्डा उठा लिया तथा गढ़कोटा के किले पर अधिकार कर लिया ।[41]

मई 1857 में जालौन के मुख्यालय उरई में नियुक्त 53 वीं स्थानीय पैदल सेना की दो कम्पनियाँ कैप्टन अलेक्जेण्डर के नेतृत्व में तैनात थीं । मई तक इसमें तैनात सैनिकों का व्यवहार सन्तोषजनक रहा । छः जून 1857 को झाँसी में विद्रोह की घटना सम्बन्धी सूचना उरई के लोगों को मिली और इसके साथ ही वहाँ तैनात कस्टम विभाग के चपरासियों ने विद्रोह कर दिया । तथा वहाँ कि कस्टम विभाग की चौकियों को आग लगा दी गई ।[42] वहाँ कि पुलिस ने भी उसी तरह विद्रोह में प्रवेश किया । इस घटना से राजस्व लूट आदि का कार्य प्रभावित हुआ । फलतः कैप्टन ब्राउन ने ग्वालियर की सिन्धियाँ तथा ईटावा स्थित सेना की माँग की । समथर के राजा से भी इसी तरह सहायता की याचना की गई । समथर से सैनिक सहायता दूसरे दिन मिली जिसमें 450 पैदल सैनिक 60 या 75 घुड़सवार तथा एक तोप भी थी ।[43] कुछ ही देर पश्चात् उरई स्थित स्थानीय सेना के जवानों ने भी विद्रोह कर दिया । इसके साथ ही कालपी में विद्रोह प्रारम्भ हो चुका था ।

बुन्देलखण्ड में चारों ओर विद्रोह के सूत्रपात होने से हमीरपुर भी इस कार्य में पीछे नहीं रहा । वहाँ के कलेक्टर लायड ने आत्मरक्षापूर्वक

---

41. सिन्हा, एस०एन०, (वही), पृष्ठ-78.
42. वही.
43. वही, पृष्ठ-79.

500 नये सैनिकों 10 चपरासियों तथा कुछ अन्य कर्मचारियों को नियुक्त कर लिया ताकि इनके माध्यम से शांति व्यवस्था स्थापित हो सके । इसके अतिरिक्त विद्रोही सैनिकों के क्रिया कलापों को रोकने के लिये उसने चरखारी के राजा से सहायता की माँग की । चरखारी के राजा ने 100 बन्दूकची 10 सवार तथा एक गन सहायता हेतु भेजी ।[44] बाओनी के नवाब ने 50 सैनिक तथा एक गन तथा बेरी के जागीरदार ने [illegible] व्यक्तियों को भेजकर हमीरपुर के कलेक्टर की सहायता की ।[45] लेकिन यह सारे प्रयास असफल रहे और विद्रोह की चिन्गारी हमीरपुर में तेजी से फैलने लगी ।

यह उल्लेखनीय है कि बाओनी रियासत ने जो सैनिक और गन अंग्रेजी शासन की सहायता में हमीरपुर भेजा था उस सेना का प्रमुख रहीम उद्दीन था जिसने शीघ्र ही अपनी तोप को अंग्रेज अधिकारियों के निवास की ओर मोड़ दिया[46] और वह विद्रोही हो गई । इसके पश्चात् स्थानीय बुन्देलाओं ने रहीम उद्दीन तथा उसकी सेना का साथ दिया तथा जेल पहुँचकर वहाँ का दरवाजा खोलकर बंदियों को बाहर निकाल दिया ।[47] किसी प्रकार मजिस्ट्रेट लॉयड तथा ज्वाइन्ट मजिस्ट्रेट डोनाल्ड ग्रान्ट अपना जीवन बचाने में सफल रहे और वे एक नाव द्वारा जमुना पार गये जबकि अन्य अधिकारियों को विद्रोहियों ने कत्ल कर दिया । पाँच दिन पश्चात् लॉयड तथा डोनाल्ड ग्रान्ट को भी विद्रोहियों ने ढूँढ कर मार डाला ।[48] इस घटना के पश्चात्

---

44. फोरन सीक्रेट कन्सल्टेशन, 25 सितम्बर, 1857, नम्बर-356.
45. सिन्हा, एस०एन०, [पूर्वो०], पृ०-81.
46. हमीरपुर कलक्ट्रेट प्री म्यूटनी रिकार्ड्स, फाईल, नम्बर 13-125.
47. वही.
48. फोरन सीक्रेट कन्सल्टेशन, 25 सितम्बर, 1857, नम्बर-356.

हमीरपुर में सूबेदार अली बख्श ने दिल्ली के राजा के शासन की घोषणा की तथा स्वयम् को उनका ऐजेण्ट घोषित कर दिया ।[49] विद्रोह की यह लहर हमीरपुर गाँव में तेजी से फैली और विद्रोहियों का शिकार ऐसे ऋणदाता तथा लेन-देन करने वाले लोग हुये जिन्हें इस जिले में अंग्रेजों का ऐजेण्ट समझा जाता था । इन ऐजेण्टों को प्रत्येक गाँव से निकाल दिया गया ।[50] बुन्देलखण्ड में प्रत्येक क्षेत्र में विद्रोहियों में पूर्णतया तालमेल था तथा हिन्दू तथा मुस्लिम दोनों राष्ट्रीय एकता के अनुरूप ब्रिटिश शासन को उखाड़ फेंकने हेतु कटिबद्ध थे ।

बाँदा तथा कर्वी :

बाँदा में विद्रोह का सूत्रपात वहाँ कि जनता ने किया । सेना ने उनका साथ दिया । इन दिनों मैन बाँदा में कलेक्टर तथा कॉकरेल कर्वी में ज्वाइण्ट मजिस्ट्रेट था । विद्रोहियों के आगमन को रोकने के लिये तथा जिले में शासन व्यवस्था बनाये रखने के लिये अंग्रेज अधिकारियों ने अजयगढ़ तथा चरखारी की रियासतों से सहायता प्राप्त की थी ।[51] यद्यपि जून को जैसे ही इलाहाबाद में विद्रोह प्रारम्भ हुआ उसी समय सेन्ट्रल जेल से कुछ बन्दी छूटकर मऊ, घाट होते हुये 8 जून 1857 को बाँदा पहुँचे तथा वहाँ विद्रोह प्रारम्भ कर दिया । विद्रोह का आह्वान बुन्देलाओं ने किया । मऊ तथा आस-पास के जमींदारों ने एकत्रित होकर वहाँ की तहसील पर धावा बोला तथा तहसील [illegible]

---

49. हमीरपुर कलेक्ट्रेट प्री म्यूटनी रिकार्ड्स फाइल, नम्बर [illegible]-125.
50. वही.
51. सिन्हा, एस०एन०, (वही), पृष्ठ-84.

को नष्ट करते हुये सरकारी खजाने से 1200 रुपये लूट लिये[52], 9 जून को मरफा तथा बबेरु तहसील के लोगों ने विद्रोह कर दिया तथा तहसील में रखे खजाने को लूट लिया । वहाँ का तहसीलदार तथा पुलिस बाँदा भाग गये । इस घटना के साथ ही बाँदा और जौहरपुर के लोगों ने भी विद्रोह में शामिल होने की घोषणा कर दी । इसी प्रकार आस-पास के गाँव विशेषतः सिमरी, पातिकपुर के निवासियों ने भी विद्रोह कर दिया और तिन्दवारी तहसील पर आक्रमण करने के लिये जौहरपुर तथा आस-पास के लोगों ने योजना बनाई । 11 जून 1857 को स्थानीय लोगों की एक बड़ी भीड़ ने तिन्दवारी तहसील कार्यालय को घेर लिया और वहाँ रखे गये सरकारी खजाने में से 3500 रुपये लूट लिये और कार्यालय के अभिलेख को नष्ट कर दिया ।[53]

अपने को असहाय पाकर तिन्दवारी के तहसीलदार ने 13 जून 1857 को वहाँ से भागकर बाँदा में शरण ली । इसी प्रकार बाँदा जिले की पैलानी तहसील के लोगों ने भी इस विद्रोह में स्वयम् को शामिल कर लिया ।[54] बाँदा जिले की एक के बाद एक तहसील के लोगों ने विदेशी शासन के विरुद्ध विद्रोह का सूत्रपात किया । बाँदा नगर भी इससे अछूता नहीं बचा और एक सप्ताह के अन्दर सम्पूर्ण जिला इस विद्रोह की लपटों में आ गया । उसी समय यह रिपोर्ट प्राप्त हुई कि कानपुर से बड़ी संख्या में विद्रोही बाँदा में अपने विद्रोही सिपाहियों की मदद के लिये प्रवेश कर रहे हैं । यह सूचना मिलते ही बाँदा के एक

---

52. सिन्हा, एस0एन0, (वही), पृष्ठ-84.
53. वही, पृष्ठ-85.
54. वही.

अंग्रेज कलेक्टर मैन का चिन्तित होना स्वाभाविक था तथा उसने अपनी रक्षा के लिये बाँदा में योरूपीय महिलाओं को नवाब के महल में सुरक्षा के लिये भेज दिया ।

12 जून 1857 को जब बाँदा में दो बंगलों में आग लगा दी गई उस समय वहाँ के योरूपीय अधिकारी एक ही बंगले में साथ-साथ रहने लगे ।[55] 14 जून 1857 को बाँदा स्थित देशी पैदल सेना के सैनिकों ने विद्रोह प्रारम्भ कर दिया तथा उन्होंने अपने अधिकारियों के आदेशों की अवहेलना प्रारम्भ कर दी । सैनिकों ने अपने अधिकारियों को शाही खजाना देने से भी मना कर दिया और उन्होंने जेल दरोगा को यह सूचना भेजी कि वह सैनिक अपने नियन्त्रण में रखे हुये सरकारी स्टोर तथा दो तोपों को वहाँ से नहीं हटाने देंगे । इस घटना के प्रारम्भ से ही बाँदा के जेल दरोगा तथा अन्य स्थानीय कर्मचारियों ने भी विद्रोहियों का खुला समर्थन कर दिया ।[56] देशप्रेम तथा राष्ट्रीय चेतना की इस भावना ने विदेशी हुकूमत और औपनिवेशिक शोषण से मुक्ति पाने के लिये इन कर्मचारियों का यह सहयोग बुन्देलखण्ड के इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना मानी जायेगी ।

बाँदा के कलेक्टर मेन ने इस चुनौती का सामना करने के लिये वहाँ के नवाब के सैनिकों की सहायता से विद्रोही सैनिकों के नियन्त्रण से दोनों तोपें वापिस लेने तथा उनके नियन्त्रण में रखे गये

55. सिन्हा, एस0एन0, (वही), पृष्ठ-85.
56. नरेटिव ईवेन्ट्स, बाँदा डिस्ट्रिक्ट, भाग-एक, पृष्ठ-4.

खजाने और शस्त्रागार को प्राप्त करने की योजना बनाई । इस कार्य के लिये उसने नवाब की सेना तथा अजयगढ़ रियासत की सेना से सहायता लेने का प्रयास किया । नवाब बाँदा की सेना ने अंग्रेजों की मदद् करने का विरोध किया तथा नवाब के सैनिकों ने विद्रोह कर दिया । नवाब के विद्रोही सैनिकों ने इस सेना को निर्देश देने वाले लेफ्टीनेन्ट बैनेट अंग्रेज अधिकारी पर अपनी बन्दूकों की मूठों से आक्रमण कर दिया ।[57] नवाब के सैनिकों ने जेहाद की घोषणा करते हुये विद्रोह घोषित कर दिया था । यह उल्लेखनीय है कि बाँदा स्थित देशी पैदल सेना के पहले से ही अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह प्रारम्भ कर दिया था और ऐसी परिस्थिति में अंग्रेज सैनिक अधिकारी अपनी सुरक्षा के लिये नवाब बाँदा के राजमहल में शरण लिये हुये थे ।[58] किन्तु विद्रोहियों का दबाव नवाब के राजमहल पर निरन्तर बढ़ता जा रहा था । अतः उसके राजमहल में शरण लिये हुये सभी अंग्रेज अधिकारी तथा उनके परिवार के लोग 14 जून 1857 को आठ बजे राजमहल से बाहर निकलने के लिये मजबूर किये गये । और उसी समय छावनी स्थित सभी बंगलों में आग लगा दी गई । यहाँ रखे सरकारी खजाने तथा अभिलेखों को लूटकर नष्ट कर दिया गया ।[59] और ऐसी परिस्थिति में उत्साहित लोगों ने बाँदा के नवाब अली बहादुर को अपना शासन स्थापित करने के लिये निर्देशित किये और नवाब ने इसी प्रकार यह घोषणा कि:-

---

57. सिन्हा, एस०एन०, (वही), पृष्ठ-85.
58. नरेटिव ईवेन्ट्स, बाँदा डिस्ट्रिक्ट , भाग-एक, पृष्ठ-5.
59. वही, पृष्ठ-7.

मुल्क खुदा का, मुल्क बादशाह का,

और हुकुम नवाब अलीबहादुर का ।[60]

इस घोषणा के दूसरे दिन बाद कर्वी का ज्वाइन्ट मजिस्ट्रेट काकरेल कुछ सरकारी खजाने के साथ जैसे ही बाँदा पहुँचा वैसे ही नवाब के महल के दरवाजे के सामने उसकी हत्या कर दी गई ।[61] कैम ने [illegible] घटना की रिपोर्ट उच्च अधिकारियों को देते हुये सूचित किया था कि काकरेल की हत्या में नवाब बाँदा का हाथ नहीं प्रतीत होता है । मेरा यह विश्वास है कि प्रातःकाल जब वह सो रहा था [illegible] काकरेल नवाब के महल के दरवाजे पर जाकर नवाब से मिलना चाहता था ।[62] उसी दिन देशी पैदल सेना के विद्रोही सिपाहियों ने बाँदा स्थित जेल के दरवाजे को तोड़ दिया तथा वहाँ बन्दी बनाये गये कैदियों को मुक्त कर दिया । जेल पर रखी हुई दो तोपों तथा वहाँ के शस्त्रागार पर भी विद्रोही सैनिकों ने अपना अधिकार कर लिया । बाँदा नगर स्थित मिशनरी स्कूल को भी विद्रोहियों ने लूट लिया ।[63] औपनिवेशिक शासन को जड़ से उखाड़ फेंकने के इस प्रयास में सभी वर्गों का सहयोग प्राप्त था ।

बाँदा के व्यापारियों ने खुशी व्यक्त करते हुये विद्रोही सैनिकों को मिठाईयाँ बाँटीं । हिन्दू तथा मुस्लिम दोनों धर्मावलम्बियों

---

60. फोरन सीक्रेट कन्सल्टेशन, 31 जुलाई, 1857, नम्बर-182.
61. वही.
62. नरेटिव इवेन्ट्स, बाँदा डिस्ट्रिक्ट, भाग-2, पृष्ठ-2.
63. फोरन सीक्रेट कन्सल्टेशन, 31 जुलाई, 1857, नम्बर-182.

में सहयोग की पराकाष्ठा दिखाई पड़ रही थी और विद्रोही सैनिकों ने बाँदा का प्रशासन अपने नियन्त्रण में ले लिया तथा मोहम्मद सरदार खाँन को बाँदा का नाज़िम नियुक्त किया गया । पूर्व से कार्यरत अधिकारियों और कर्मचारियों को यह विश्वास दिलाया गया कि उनकी सेवायें यथावत् रखी जायेगी । बाँदा नगर में सरदार खाँन नाज़िम ने गाय तथा बैल का बध करने पर प्रतिबन्ध लगा दिया ।[64] धार्मिक सद्भाव और भाईचारा तथा सहिष्णुता की दृष्टि में मोहम्मद सरदार खाँन की यह घोषणा आदर्श प्रस्तुत करती है । इस स्थिति का वर्णन करते हुये बाँदा के कलेक्टर मैन ने लिखा है कि बुन्देलखण्ड में तलवारें तथा तोपें तो विद्रोहियों के पास इक्का दुक्का ही थी किन्तु यहाँ कि विद्रोही जनता के पास लोहे से बँधी हुई लाठी, बल्लम, गण्डासे, तेज धारवाली आरियाँ तथा तेज धारवाले चाकू लिये हुये लोग स्वयम् को बड़ा पराक्रमी समझ रहे थे और इन विद्रोहियों ने अपना राजा स्वयम् नियुक्त कर लिया था । बुन्देलखण्ड में कभी भी क्रान्ति या विद्रोह उतना उग्र नहीं था जैसा कि इस समय[65] ब्रिटिश सत्ता की समाप्ति के पश्चात् नवाब अली बहादुर तथा विद्रोही सिपाहियों के बीच 17 जून 1857 को एक बैठक हुई । विद्रोही सिपाहियों के नेताओं ने अली बहादुर के दरबार में उनसे भेंट की । उसमें यह तय हुआ कि बिठूर के नाना साहब के आदेश की प्राप्ति तक नवाब अली बहादुर इस क्षेत्र पर शासन करते रहेंगे । तत्पश्चात् नाना साहब जो निर्णय करेंगे उसके अनुसार इस क्षेत्र की व्यवस्था की जायेगी ।[66]

---

64. नरेटिव ईवेन्टस, बाँदा डिस्ट्रिक्ट, भाग-2, पृष्ठ-2.
65. वही.
66. सिन्हा, एस०एन०, [वही], पृष्ठ-87.

इस अन्तरिम व्यवस्था के उपरान्त विद्रोही सिपाहियों ने दो लाख रुपये कुछ तोपें तथा शस्त्रों के साथ बाँदा से प्रस्थान किया ।

शासन प्राप्ति के पश्चात् नवाब अली बहादुर द्वारा विभिन्न वर्गों के विश्वास प्राप्त करने का प्रयास :

नवाब अली बहादुर बाँदा में अपनी सत्ता स्थापित करने के पश्चात् स्वयं को क्रान्तिकारियों का एक प्रभावशाली नेता के रूप में प्रस्तुत किया । वह अच्छा निशान्ची था । बन्दूक तथा पिस्तौल चलाने में कुशल , अच्छा घुड़सवार खिलाड़ी होने के कारण अली बहादुर शारीरिक रूप से अधिक से अधिक श्रम कर सकता था ।[67] यद्यपि उसके पास सायकों की कमी थी फिर भी उसके बावजूद भी इस क्षेत्र में शान्ति व्यवस्था की पुनर्स्थापना करने तथा अपने को प्रभावपूर्ण बनाने के लिये नवाब ने अपने पुराने अधिकारियों को पुनः नियुक्त किया और इसी प्रकार अपनी पुरानी सेना के सैनिकों को भी जिसने ब्रिटिश शासन के विरुद्ध विद्रोह कर दिया था उसे भी पुनः नियुक्त किया[68] ऐसे इन विद्रोही सैनिकों में हिन्दू तथा मुस्लिम काफी संख्या में थे । उनको पुनः सेवा में लेकर नवाब ने न केवल देश की स्वतन्त्रता के आन्दोलन को आगे ही बढ़ाया बल्कि समान रूप से हिन्दू तथा मुसलमानों को अवसर प्रदान किये ।

---

67. सिन्हा, एस0एन0, (वही), पृष्ठ-88.
68. नरेटिव इवेन्टस, बाँदा डिस्ट्रिक्ट , भाग-2, पृष्ठ-5.

प्रशासन को ठीक प्रकार से चलाने के लिये नवाब ने एक कौंसिल का गठन किया जिसमें मुहम्मद सरदार खाँ, नजीम, मीर इन्सा अल्लाह सिपहसालार, मिर्जा विलायत हुसैन, नवाब रिसालदार तथा मीर फरहत अली, मुन्म सरीम और उदयकरन कोषाधिकारी शामिल थे[69] नवाब ने हिजरी कलेन्डर प्रारम्भ किया तथा हिन्दुस्तानी शासन स्थापित किया । 20 जून 1857 को उसने एक आदेश जारी कर लूट तथा डकैती को प्रतिबन्धित कर दिया ।[70]

बाँदा में क्रान्तिकारियों का सामूहिक समागम :

बुन्देलखण्ड में 1857 का विद्रोह अपने प्रारम्भिक चरण में सफल रहा । क्रान्तिकारियों ने अंग्रेज अधिकारियों के शासन से मुक्ति पाकर जो नई स्वतन्त्रता प्राप्त की थी उसे सुरक्षित बनाये रखने के उपाय सोचे जाने लगे । इसलिये आवश्यक यह था कि सभी क्रान्तिकारी नेताओं का आपस में पूर्ण सहयोग तथा समन्वय स्थापित हो सके । आपसी सहयोग और एक-दूसरे की मदद के द्वारा ही क्रान्ति को आगे बढ़ाया जा सकता था तथा वांछित उद्देश्य की प्राप्ति की जा सकती थी । यद्यपि यह कार्य कठिन था । विशेषतः यह देखते हुये कि अंग्रेजी शासन इस क्षेत्र से पूर्ण रूपेण समाप्त नहीं किया जा सकता था ।

प्रारम्भ में बाँदा बुन्देलखण्ड में क्रान्तिकारियों का प्रमुख केन्द्र रहा जहाँ पर क्रान्तिकारियों तथा विद्रोही सिपाहियों ने एकत्र

---

69. नरेटिव ईवेन्ट्स, बाँदा डिस्ट्रिक्ट, भाग-2, पृष्ठ 4-5.
70. फोरन सीक्रेट कन्सल्टेशन, 18 दिसम्बर, 1857, नम्बर-105.

होकर भविष्य की योजनायें निर्मित की । बाँदा का नवाब अली बहादुर ने इस दिशा में नेतृत्व सम्भालने का कार्य किया और उसने अपनी स्वतन्त्र सत्ता की स्थापना कर क्रान्तिकारियों का मार्गदर्शन भी किया । उल्लेखनीय यह है कि जैसे ही अली बहादुर ने अपनी स्वतन्त्र सत्ता घोषित की वैसे ही उसे मुगल सम्राट से इसकी मान्यता सम्बन्धी एक फरमान प्राप्त हुआ ।[71]

कानपुर में नाना साहब की सफलताओं के तुरन्त बाद ही उसके प्रति अपना सम्मान तथा अपनी सत्ता प्राप्त की कृतज्ञता ज्ञापित करने के लिये नवाब ने उसे 21 सोने की मोहरें, बिठूर की गद्दी प्राप्त करने के उपलक्ष में नजर हेतु भेंट की ।[72] स्वतन्त्रता के इस पवित्र कार्य को आगे बढ़ाने के लिये अलीबहादुर ने स्वयम् को पेशवाओं के सच्चे प्रतिनिधि के रूप में पेश किया और नाना साहब से जन तथा धन की सहायता भी चाही । उसने पेशवा को पत्र में यह लिखते हुये प्रार्थना की आपके धन तथा जन सम्बन्धी सहायता की मुझे अविलम्ब आवश्यकता है क्योंकि बिना इस सहायता के बाँदा का जिला जो बहुत पहले से ही पेशवा परिवार का इलाका रहा है वह हमसे अलग हो जायेगा ।[73] नवाब बाँदा के एक अधिकारी मोहम्मद नजीर खाँ ने उसी समय फर्रुखाबाद में अपने भाई को एक पत्र लिखकर नवाब की स्थिति को स्पष्ट किया था । इसमें यह उल्लेख है कि नवाब अली बहादुर के पास साधन तथा शक्ति की पर्याप्त कमी है । अतः आगामी तूफान का

---

71. बाँदा कलेक्टर प्री म्यूटनी रिकार्डस, फाइल, नम्बर-XIII-35
72. सिन्हा, एस०एन०, (वही), पृष्ठ-99.
73. बाँदा कलेक्टर प्री म्यूटनी रिकार्डस, फाइल नम्बर-XIII-35.

स्रोत बना और इससे हिन्दू तथा मुस्लिम दोनों वर्गों की स्वतन्त्रता की भावना अवश्य मजबूत हुई होगी । नवाब अली बहादुर भी बाँदा में क्रान्तिकारी नेताओं के समागम का मुख्य आकर्षण बन चुका था शाहगढ़ के राजा बखतबली से भी इसी प्रकार का सहयोग सम्बन्धी आश्वासन प्राप्त किया जिसमें शाहगढ़ के राजा ने यह सुझाव दिया कि क्रान्तिकारियों में आत्मविश्वास पैदा करने के लिये कुछ ठोस कदम उठाये जाने चाहिये और तदानुसार नवाब अली बहादुर ने कालिन्जर को क्रान्तिकारियों के मुख्यालय के रूप में स्थापित करने की सम्भावना व्यक्त की । एक अक्टूबर 1857 को नवाब ने शाहगढ़ के राजा को एक पत्र[77] लिखकर यह सुझाव किया कि "अब हम लोगों को बुन्देलखण्ड में क्रान्तिकारियों के लिये एक सुरक्षित तथा मजबूत स्थान स्थापित कर लेना चाहिये जहाँ हम लोग अपनी आयो तथा एक सिहाई सेना स्थाई रूप से नियुक्त कर दें ।

बुन्देलखण्ड में कालिन्जर को छोड़कर कोई भी ऐसा स्थान इन सेनाओं की नियुक्ति के लिये उतना अधिक मजबूत और सुरक्षित नहीं है । अतः कालिन्जर ही इस कार्य के लिये उचित स्थान है । चूँकि वहाँ पन्ना के राजा के सेना की कुछ टुकड़ी पहले से ही नियुक्त है । इसलिये आप एक ऐसी तिथि निर्धारित कर लें जिस तिथि को आपकी सेना कालिन्जर पहुँच कर अपना स्थान ग्रहण कर लेगी उसी तिथि को मैं भी अपनी सेना भेज दूँगा ताकि आपकी और हमारी सेनायें मिलकर

---

77. बांदा कलेक्टर प्री म्यूटनी रिकार्ड्स, फाईल नम्बर-XIII-35.

एक साथ किले के स्थान ग्रहण कर लें । ये सेनायें वहाँ स्थाई रूप से रहेंगी तथा वहाँ आवश्यक सामानों की खरीद भी कर लेंगी । आप और मैं मिलकर उनके खर्च का वहन कर दूँगा । आप जितना चाहेंगे, उतने लोगों को मैं भेज दूँगा । नवाब ने यह भी लिखा कि कालिन्जर में इन सेनाओं को रखने के पीछे उद्देश्य यह है कि यदि अंग्रेजी शत्रु सेना इस क्षेत्र में प्रवेश करती है तो ऐसी स्थिति में हम दोनों की मिली-जुली सेना शत्रुओं का सफाया कर देगी । यहाँ से आवश्यकता पड़ने पर अन्य क्षेत्रों को भी सेनायें भेजी जाती रहेंगी"।

वास्तव में कालिन्जर का दुर्ग अपनी मजबूती और सुरक्षा की दृष्टि से बुन्देलखण्ड का एक प्रसिद्ध दुर्ग था । चन्देलों ने इस दुर्ग स्थान को अपना केन्द्र बनाकर अपने साम्राज्य का विस्तार किया था । सुरक्षा सम्बन्धी इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रख नवाब अली बहादुर तथा शाहगढ़ के राजा बखतबली ने बुन्देलखण्ड में क्रान्तिकारियों के मुख्य केन्द्र के रूप में कालिन्जर के दुर्ग के चयन करने का भी सुझाव दिया ।

जिस समय बुन्देलखण्ड में क्रान्तिकारी अपनी स्वतन्त्रता को बनाये रखने के लिये सामूहिक रूप से आगामी सुरक्षा को ध्यान में रखते हुये नये तरीके अपनाने का विचार कर रहे थे उसी समय दीनापुर से सातवीं तथा आठवीं रेजीमेण्ट के पैदल सेना के विद्रोही सैनिकों को दुबकी अंग्रेजों के विरुद्ध क्रान्ति घोष करती हुई 20 सितम्बर 1857 को

बाँदा पहुँची ।[78] बाँदा के नवाब तथा उसके लोगों ने इन क्रान्ति वीर सैनिकों का गर्म जोशी से स्वागत किया ।[79] इस क्रान्तिकारी टोली का नेतृत्व बिहार के जगदीशपुर का निवासी 75 वर्षीय क्रान्तिकारी कुँवरसिंह कर रहा था । बुन्देलखण्ड में क्रान्तिकारी तत्वों को संगठित करने की दिशा में कुँवरसिंह ने अपनी वृद्धावस्था की परवाह किये बिना भी सतत् प्रयत्नशील था । कुँवरसिंह के साथ लगभग दो हजार लोग थे ।[80] उसका उद्देश्य तात्या टोपे से मिलना था ।[81]

बुन्देलखण्ड के क्रान्तिकारियों ने उस समय सबसे प्रमुख आवश्यकता यह समझी कि ब्रिटिश शासन के विरोध में इस क्षेत्र में जो भी लोग सक्रिय थे उनमें आपस में किसी भी प्रकार का मतभेद न पैदा होने पाये यदि पहले किसी भी प्रकार का कोई मतभेद रहा हो तो उसे समाप्त कराया जाये । उल्लेखनीय यह है कि नवाब अली बहादुर तथा अजयगढ़ के रनमोर दउआ के बीच में अंग्रेजों के प्रति संयुक्त अभियान प्रारम्भ करने के सम्बन्ध में तीव्र मतभेद था । दउआ किसी भी प्रकार नवाब का सहयोग करने को तैयार नहीं था । ऐसे समय में राष्ट्रवादी भावना से ओत-प्रोत क्रान्तिकारियों ने बाँदा के नवाब का साथ दिया । क्रान्तिकारियों में इतना अधिक जोश था कि उनके सहयोग से 8 अक्टूबर 1857 को अलीबहादुर की सेनाओं ने दउआ के

---

78. सिन्हा, एस0एन0, (वही), पृष्ठ-100.
79. नरेटिव ईवेन्टस, बाँदा डिस्ट्रिक्ट , भाग-2, पृष्ठ-6.
80. वही, पृष्ठ-7.
81. के0के0 दत्त, बायोग्राफी आफ कुँवरसिंह एण्ड अमरसिंह, पृष्ठ-141.

निम्नीपार स्थित किले पर आक्रमण किया तथा उसे ध्वस्त कर जमीन पर गिरा दिया तथा दफादार को बन्दी बना लिया ।[82]

कुँवरसिंह तथा उसके साथियों का प्रस्थान :

20 अक्टूबर 1857 को क्रान्तिकारी नेता कुँवरसिंह तथा उसके साथियों ने बाँदा से कालपी के लिये प्रस्थान किया । इसे पाँच दिन पश्चात् 25 अक्टूबर को सातवीं तथा आठवीं पैदल सेना के जवानों ने तथा कुछ क्रान्तिकारियों ने तीन तोपों के साथ चिल्लातारा की ओर प्रस्थान किया । आठवीं पैदल सेना का सूबेदार [illegible] उन दिनों विद्रोही सैनिकों को निर्देशित कर रहा था । विद्रोही सैनिकों के अतिरिक्त बाँदा की नवाब सेना में एक हजार पैदल, छः हजार घुड़सवार दस हजार बन्दूकची तथा 15 तोपें थीं ।[83] आश्चर्य की बात यह है कि सिन्धिया के महाराजा जियाजीराव जो कि अंग्रेजों के पक्के मित्र और समर्थक समझे जाते थे, ने भी देश के इस प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम में क्रान्तिकारियों के प्रति सहानुभूति दिखाई ।[84] उन्होंने बाँदा के नवाब के साथ एक पत्र में न केवल उसकी सहायता के लिये आश्वासन दिया बल्कि उन्होंने ऐसे राजाओं की आलोचना की जिनकी गतिविधियाँ क्रान्तिकारियों की गतिविधियों के प्रतिकूल तथा ब्रिटिश उद्देश्यों के अनुकूल थीं । विशेषतः रीवा तथा पन्ना के राजाओं के कार्यों की आलोचना सिन्धिया ने अपने पत्र के माध्यम से की ।

---

82. नरेटिव ईवेन्ट्स, बाँदा डिस्ट्रिक्ट , भाग-2, पृष्ठ-6.
83. वही, पृष्ठ-7.
84. सिन्हा, एस0एन0, (वही), पृष्ठ-101.

सिन्धिया ने 11 नवम्बर 1857 को नवाब अली बहादुर के व्यवहार तथा कार्यों की प्रशंसा करते हुये लिखा "अंग्रेजों को देश से बाहर निकालने के लिये आपने जो प्रयास किया है उससे मुझे बहुत प्रसन्नता तथा संतुष्टि हुई है । यदि आपके इस कार्य में कोई आपका विरोध करता है तो आप मुझे लिखें और मैं अपनी सेना भेजकर आपकी सहायता करूँगा ।[85] 18 नवम्बर 1857 को सिन्धिया ने नवाब अली बहादुर को पुनः एक पत्र लिखकर उनकी सहायता देने का वचन दिया था ।[86] सिन्धिया ने नवाब अली बहादुर को यह भी समझाने का प्रयास किया था कि समथर राजा हिन्दूपत के सुझाव पर भी सिन्धिया ने उक्त पत्र बाँदा के नवाब को लिखा था । इससे यह स्पष्ट होता है कि समथर की रियासत जिसके अंग्रेजों के साथ मैत्री सम्बन्ध थे उसके मन में भी बुन्देलखण्ड के क्रान्तिकारियों के प्रति हमदर्दी थी । ऐसा प्रतीत हो रहा है कि राष्ट्रीयता की चिन्गारी जो स्वतन्त्रता संग्राम के रूप में प्रस्फुटित हुई थी, उसकी लपटें निरन्तर तेज हो रही थीं और बुन्देलखण्ड की ऐसी रियासतों के लोग जो किसी न किसी कारण अंग्रेजों के मित्र बने हुये थे । वे भी इस स्वतन्त्रता संघर्ष में क्रान्तिकारियों के साथ हमदर्दी तथा सहानुभूति रखे हुये थे ।

अलीबहादुर,लक्ष्मीबाई,तात्याटोपे आदि क्रान्तिकारियों का कालपी में सम्मेलन :

विदेशी शासन को समूल नष्ट करने के उद्देश्य से बुन्देलखण्ड के क्रान्तिकारी नेता आगामी योजनाओं की रूप-रेखा तैयार करने के

---

85. बाँदा कलेक्टर की म्यूटिनी रिकार्ड्स, फाईल नम्बर-XIII-55; फोरन पोलीटिकल कन्सलटेशन, 11 मार्च, 1859, नम्बर-244.

86. वही, नम्बर-241.

उद्देश्य से कालपी में एकत्रित होने लगे । यमुना के तट पर स्थित कालपी बुन्देलखण्ड का प्रवेश द्वार था । अतः यह स्थल सामरिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण था । शीघ्र ही यह क्रान्तिकारी गतिविधियों का केन्द्र बन गया । क्रान्तिकारी नेता अपनी सेनाओं सहित कालपी तथा यमुना के उस पार वाले क्षेत्र में भी ब्रिटिश हुकूमत के विरुद्ध अभियान तेज कर रहे थे । नाना साहब के आमन्त्रण पर बिहार का वृद्ध क्रान्तिकारी नेता कुंवरसिंह अपने क्रान्तिकारियों के साथ मिलकर कानपुर पर आक्रमण की योजना बनाने लगा ।[87] 29 अक्टूबर 1857 को ग्वालियर सेना की एक टुकड़ी के साथ तात्याटोपे कालपी पहुँचा तथा बालाजी की गद्दी पर अपने ही एक व्यक्ति को मनोनीत किया और पदारूढ़ कराया[88] कुंवरसिंह तथा तात्या टोपे की सम्मिलित सेनाओं ने उसी समय कानपुर पर आक्रमण किया किन्तु वहाँ आधिपत्य करने की उनकी योजनायें सफल न रहीं । इस अभियान में असफल रहने के बाद 6 दिसम्बर 1857 को तात्या टोपे वापिस कालपी पहुँचा ।

नाना साहब का भतीजा पाण्डुरंग सदाशिव ने भी कालपी में स्थान ग्रहण किया ।[89] सदाशिव की सेना ने यहाँ एकत्रित क्रान्तिकारियों की योजनाओं का मार्गदर्शन किया । कालपी में क्रान्तिकारियों ने अनेकों तोपें तथा पर्याप्त सैनिक, सामान इकट्ठा कर कालपी के किले में अपनी शक्ति को सुदृढ़ कर लिया था । तात्या

---

87. फोरन सीक्रेट कन्सल्टेशन, 30 अक्टूबर, 1857, नम्बर-204.
88. फोरन पॉलीटिकल कन्सल्टेशन, 13 अगस्त, 1858, नम्बर-141.
89. कानपुर कलेक्ट्रेट म्यूटनी बस्ता-ड्राफ्ट प्रोसीडिंग्स ऑफ राय साहब .

टोपे ने उसी समय 31 दिसम्बर 1857 को एक परिपत्र जारी करते हुये रानी लक्ष्मीबाई तथा राजा बानपुर, राजा शाहगढ़ चरखारी तथा पन्ना के राजाओं को यह सूचित किया कि पेशवा का सहायक मोहम्मद इसहाक बुन्देलखण्ड में दिशा निर्देश करने के लिये आ रहे हैं।[90]

इस अवसर पर बुन्देलखण्ड के राजाओं तथा सामन्तों का सहयोग अत्यधिक आवश्यक था ताकि इस क्षेत्र में ब्रिटिश शासन के विरुद्ध सैनिकों की चिन्गारी को प्रज्वलित रखा जाये। इसी सहयोग की आकांक्षा से तात्या टोपे ने 2 जनवरी 1858 को बुन्देलखण्ड के विभिन्न सामन्तों तथा राजाओं को पत्र लिखकर यह सूचित किया था कि नाना साहब पेशवा का उद्देश्य इस क्षेत्र से अंग्रेजों को बाहर निकालना है।

बुन्देलखण्ड के किसी राज्य या सामन्त के क्षेत्र पर अधिकार करना या मराठों की शक्ति की स्थापना करना नहीं।[91] नाना साहब ने यही इच्छा व्यक्त की ब्रिटिश शासन की समाप्ति के बाद उनके क्षेत्रों को बुन्देलखण्ड के राजाओं तथा सामन्तों को पूर्व की भाँति दे दिया जायेगा। पेशवा ने यह विश्वास व्यक्त किया कि यदि यहाँ के राजे तथा सामन्त संगठित रूप से पूरी क्षमता से ब्रिटिश शासन को उखाड़ फेंकने के लिये कटिबद्ध हो जायें तो हमें अपने

---

90. फोरन पॉलीटिकल कन्सल्टेशन, 30 दिसम्बर, 1859 [सप्लीमेन्टरी], नम्बर-619.

91. सिन्हा, एस0एन0, [वही], पृष्ठ-102.

उद्देश्य की सफलता के लिये कोई संदेह नहीं रहेगा । इसी प्रकार का सहयोग प्राप्त करने के लिये एक परिपत्र बुन्देलखण्ड में पेशवा के सहायक मोहम्मद इसहाक द्वारा भी जारी किया गया ।[92]

बुन्देलखण्ड में 1857 का विद्रोह यहाँ के लोगों के साहस तथा शौर्य का अद्भुत प्रदर्शन है । अंग्रेजी शासन की कूटनीति यहाँ के कतिपय रियासतों का अंग्रेजों को दिया गया सहयोग तथा उनकी विशाल सैनिक शक्ति और पर्याप्त साधनों के कारण इस क्षेत्र में शांति स्थापित हो गई लेकिन इस अभियान में अंग्रेज अधिकारियों को अत्यधिक परेशानी उठानी पड़ी । यही कारण था कि भविष्य कि सम्भावनाओं को ध्यान में रखकर भी कहीं यहाँ के लोग पुनः सशस्त्र विद्रोह न कर दें । विदेशी शासन ने बुन्देलखण्ड को सामाजिक, आर्थिक रूप से पिछड़ा बनाये रखने की नीति का अनुसरण किया । यहाँ के बहादुर लोगों ने अनेकों कष्टों की चिन्ता न किये बिना विभिन्न धर्मावलम्बियों के प्रति परस्पर सहयोग मैत्री और सद्भाव की प्राचीन परम्परा को यथावत बनाये रखा । इतना ही नहीं बल्कि 1857 के विद्रोह के समय तो इस क्षेत्र में हिन्दू मुस्लिम सहयोग और अधिक मजबूत हुआ । इस प्रकार राष्ट्रीय एकता की कड़ी बुन्देलखण्ड में और सशक्त हुई ।

---

92. फॉरेन पॉलिटिकल कन्सल्टेशन, 31 दिसम्बर, 1858, नम्बर-2132.

अध्याय अष्टम

1858 से 1947 के बीच बुन्देलखण्ड में अंग्रेजी नीति एवम् राष्ट्रीय एकता का स्वरूप :

अंग्रेजी शासन पूरे देश की ही भाँति बुन्देलखण्ड में भी आर्थिक शोषण एवम् विदोहन का पर्याय बन चुका था । 1804 की बेसिन की संधि से भारत के इस हृदय प्रदेश में विदेशी सत्ता का प्रारम्भ हुआ जो 1947 तक यथावत् बना रहा । अंग्रेजी ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधिकारियों ने यह लक्ष्य बना रखा था कि अधिक से अधिक धन प्राप्त कर बुन्देलखण्ड से इंग्लैण्ड को भेजा जाये । इसी लक्ष्य की पूर्ति के लिये कर्नल बेली ने बाँदा को केन्द्र बनाते हुये ।[1] लखनऊ से मिर्जा जाफर को बुलाकर अतिशीघ्र राजस्व की दरों का निर्धारण कराया । 1804 से लेकर 1858 के बीच जितने भी राजस्व प्रबन्ध हुये उनकी दरें अत्याधिक कठोर थीं[2] बाध्य होकर राजस्व अधिकारियों को राजस्व की दरों में कटौती करनी पड़ी क्योंकि इनका भुगतान किसानों की क्षमता के बाहर था । निःसन्देह राजस्व की कठोर दरें इस क्षेत्र में 1857 के विद्रोह का प्रमुख कारण बनी ।

1858 में किसी प्रकार शांति स्थापित हो जाने के बाद राजस्व की दरों के निर्धारण का कार्य पुनः प्रारम्भ हुआ और समय-समय पर झाँसी, ललितपुर, जालौन, हमीरपुर तथा बाँदा जनपदों का

---

1. देखिये अध्याय 2 राजस्व प्रबन्ध ।
2. वही।

राजस्व प्रबन्ध हुआ किन्तु शोषण की नीति 1858 के पश्चात् भी जारी रही बल्कि 1858 के पश्चात् तो खुलकर अंग्रेजों ने इस क्षेत्र को लूट करना प्रारम्भ कर दी।

1858 के पश्चात् बुन्देलखण्ड में व्याप्त दमन तथा आर्थिक उत्पीड़न :

यद्यपि 1857 का विद्रोह लगभग एक वर्ष बाद ही दबा दिया गया, किन्तु फिर भी बुन्देलखण्ड के लोगों में ब्रिटिश साम्राज्य वादी नीति के विरुद्ध आक्रोश और घृणा की भावना निरन्तर पल्लवित होती रही। इस बात की पुष्टि 1858 के झाँसी के सुपरिन्टेण्डेन्ट पिनकने के एक गोपनीय पत्र से होती है जिसमें उसने लिखा है कि यद्यपि इस देश में शाँति व्यवस्था स्थापित हो चुकी है फिर भी झाँसी के लोग हमसे घृणा करते हैं तथा हमारे समीप नहीं आते हैं।[3] लोगों में घृणा की यह भावना ब्रिटिश शासन की आर्थिक शोषण धार्मिक असमानता, झाँसी रियासत के प्रति अंग्रेजी सरकार के सौतेले व्यवहार की उपज थी। इसी के अन्तर्गत रानी लक्ष्मीबाई के नेतृत्व में बुन्देलखण्ड में जन-आन्दोलन का सूत्रपात हुआ था। 1858 में विद्रोह दबा दिये जाने के बाद लोगों में स्वतन्त्रता की भावना निरन्तर विकसित होती रही। निःसन्देह तत्कालीन परिस्थितियों में धारों और दमन तथा शोषण का बोलबाला रहा। अतः ऐसी परिस्थिति में स्वतन्त्रता की भावना अन्दर ही अन्दर प्रस्फुटित होती रही। धीरे-धीरे यह देश के राष्ट्रीय आन्दोलन में शामिल हो गयी।[4]

---

3. पिनकने, वीकली रिपोर्ट नम्बर-48, 22 मार्च 1858.
4. प्रोसीडिंग (होम डिपार्टमेन्ट पॉलीटिकल ब्रांच) फाईल नं0-19/1908 राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली.

1857 के विद्रोह के दमन के लिये सरकार ने जो तरीके अपनाये वे अत्यन्त बर्बर और अमानुषिक थे । विद्रोह के दमन के लिये उस समय अंग्रेज सेना ने झाँसी में भयंकर लूटपाट की । ऐसा प्रतीत होता है कि तैमूर लंग और चंगेज खाँ जैसे बर्बर आक्रमणकारियों ने जो अमानुषिक तरीके अपनाये थे , वे सभी 1857 में अपनाये गये ब्रिटिश तरीकों की तुलना में कम थे ।[5] झाँसी में कई महीनों तक सैनिक कानून लागू रहा । सर ह्यूरोज जिसे झाँसी में विद्रोह दबाने का कार्य सौंपा गया था, वह शाँति व्यवस्था स्थापित हो जाने के बाद में 17 दिनों तक झाँसी में डटा रहा । उसकी उपस्थिति में यहाँ चारों ओर लूटपाट का दृश्य रहा ।[6]

1857 के विद्रोह की समाप्ति के बाद बुन्देलखण्ड में स्वतन्त्रता की भावना अन्दर ही अन्दर सुलगती रही । ब्रिटिश शासन की असीमित शक्ति,दमन और आतंक का प्रभाव अधिक था जिसके कारण लोग खुलकर तुरन्त बाद ही विद्रोह नहीं करना चाहते थे । साथ ही साथ 1857 के विद्रोह के समय क्रान्तिकारियों के सैनिक सामान की काफी क्षति भी हो चुकी थी । आर्थिक स्थिति भी उतनी सुदृढ़ नहीं थी । साथ ही साथ नेतृत्व प्रदान करने वाले वर्ग जैसे लक्ष्मी बाई, तात्या टोपे, अली बहादुर आदि भी दृष्टि से बाहर हो गये थे ।

---

5. श्रीवास्तव, कमाली लाल . दि रिवोल्ट ऑफ 1857 इन सेन्ट्रल इण्डिया एण्ड मालवा, 1966, पृष्ठ-180.
6. वही.

1856 से 1876 के बीच के 20 वर्षों को कुछ इतिहासकारों ने भारत में ब्रिटिश शासन की प्रगति तथा पुनः स्थापना का युग माना है ।[7] इन दिनों देश में राजनैतिक गतिविधियों का अन्दर ही अन्दर प्रस्फुटन हो रहा था । 8 जून 1880 को जैसे ही लार्ड रिपन ने भारत के गवर्नर जनरल का पद भार ग्रहण किया[8] वैसे ही भारत में राजनैतिक आन्दोलन की दिशा में नई आशा का संचार हुआ ।[9] रिपन एक उदारवादी गवर्नर जनरल था जिसे भारत में इसलिये भेजा गया था ताकि ब्रिटिश प्रजा के मन में इस देश में जो असन्तोष पनप रहा था उसे रिपन अपने उदारवादी तरीकों द्वारा शान्त कर दे । वास्तव में लार्ड रिपन का समय भारत के राष्ट्रीय आन्दोलनों के बीजारोपण का समय था ।[10]

1858 के बाद ब्रिटिश शासन का भारतीय दशाओं पर जो प्रभाव पड़ा उससे उन परिस्थितियों का जन्म हुआ जिससे इस देश में साम्राज्यवादी शक्ति के विरुद्ध संगठित आन्दोलन का इस आशय से उदय हुआ ताकि भारतीय जनता को एक राष्ट्र के रूप में संगठित किया जा सके ।[11] अंग्रेजी शासन की नीतियों के फलस्वरूप 19 वीं शताब्दी के अन्त तक भारत एक ब्रिटिश उपनिवेश के रूप में परिवर्तित किया जा चुका था। यहाँ के कृषि उत्पादनों पर इस उद्देश्य से अधिक से अधिक कर लगा दिया गया ताकि ब्रिटिश साम्राज्यवादी हितों की रक्षा की जा सके।

---

7. रघुवंशी, वी0पी0 एस- इण्डियन नेशनलिस्ट मूवमेण्ट, पृष्ठ-31.
8. सिंह, एस0, फ्रीडम मूवमेण्ट इन दिल्ली (1858 से 1919), 1992, नई दिल्ली, पृष्ठ-57.
9. बरगेस जैम्स- दी क्रोनोलॉजी ऑफ इण्डियन हिस्ट्री, पृष्ठ-104.
10. रघुवंशी, वी0पी0 एस- इण्डियन नेशनलिस्ट मूवमेण्ट, पृष्ठ-38.
11. बी0 चन्द्रा - फ्रीडम स्ट्रगल, पृष्ठ-16.

ब्रिटिश सरकार ने भू-राजस्व तथा भूमि सुधार के लिये दो प्रथाओं को जन्म दिया - पहला रैयतवारी प्रथा तथा दूसरा जमींदारी प्रथा । जमींदारी प्रथा के अन्तर्गत गाँव में जमींदार सर्वेसर्वा हुआ करता था । उसकी भूमि पर खेती करने वाले किसान जमींदार की इच्छा पर्यन्त किरायेदार होते थे । अतः किसान जमींदारों को अधिक से अधिक लगान देते थे । इसके अतिरिक्त समय-समय पर उन्हें अवैधानिक कर भी जमींदार को देना पड़ते थे ।[12] अवसर आने पर ये कृषक जमींदारों के लिये बेगार भी किया करते थे । ब्रिटिश राजस्व प्रणाली का सबसे बुरा परिणाम यह निकला कि इस देश में ऋण-दाताओं के एक ऐसे प्रभावशाली आर्थिक वर्ग का विकास हुआ जिसने सभी क्षेत्रों में इस देश की अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया ।[13]

अंग्रेजी शासन का मुख्य उद्देश्य इस देश से अधिक से अधिक लगान वसूल करना था । इसके अतिरिक्त यहाँ तक कि राजस्व नियम इतने कठोर थे कि कृषकों को उसके भुगतान के लिये जब बाध्य किया जाने लगता था तब उनके पास अन्य रास्ता नहीं था , मात्र इसके कि वे अधिक से अधिक ब्याज देकर ऋण-दाताओं से कर लेकर सरकारी राजस्व का भुगतान कर सकें । प्रायः देखा गया है कि ऐसे समय में जब देश में अकाल पड़ रहा हो या अधिक वर्षा से फसल नष्ट हो गई हो तब लोग अधिक से अधिक ऋण दाताओं के चंगुल में आते रहे । जैसे ही फसल तैयार होती थी ये किसान ऋण दाताओं द्वारा इस बात के

---

12. विपिन चन्द्रा, पृष्ठ-18.
13. वही.

लिये बाध्य किये जाते थे जिससे उस पैदावार को सस्ती दर पर ऋण दाताओं को ही बेच दें । बुन्देलखण्ड में ऋण देने की जो पद्धति अपनाई गई वह कुछ अजीबो-गरीब थी । इस पद्धति के अनुसार ऋण का लेन-देन करने वाले जैनी तथा मारवाड़ी किसानों की भूमि को गिरवी रख देते थे और आर्थिक कठिनाई से पीड़ित किसान जब समय से ऋण का भुगतान नहीं कर पाते थे उस समय उनकी भूमि ऋणदाताओं के हाथ में आ जाती थी ।[14]

बुन्देलखण्ड में ऋण का लेन-देन करने की सुनियोजित पद्धति अपनाई गई । इस धन्धे में लगे हुये जो ऋणदाता थे वे अंग्रेजी शासन के अधीन विकसित हुये । एक नये धनाढ्य वर्ग के रूप में थे , फलतः बुन्देलखण्ड की अधिकांश जमीन कृषकों के हाथ से निकलकर ऋणदाताओं के हाथ में आ गयी ।[15] 1866 में झाँसी के कमिश्नर जिन किन्सन ने अपने अधीनस्थ कर्मचारियों को वास्तविक वर्गों की जाँच पड़ताल करने का आदेश दिया था, किन्तु[16] जिन किन्सन के सुझावों को उच्चाधिकारियों ने महत्व प्रदान नहीं किया । जिन किन्सन के 15 वर्ष पश्चात् सरकार ने उसके द्वारा दिये गये सुझावों की महत्ता को स्वीकार किया, किन्तु दुर्भाग्यवश उस समय तक ऋण से पीड़ित किसानों की स्थिति अत्यन्त खराब हो चुकी थी और इस क्षेत्र की कृषि योग्य भूमि का अधिकांश भाग ऋणदाताओं के हाथ में आ चुका था ।

---

14. पाठक, एस०पी०, झाँसी डिवीजन ब्रिटिश रूल, पृष्ठ-90.
15. वही.
16. जिन किन्सन, ई०जी०, झाँसी सेटिलमेण्ट रिपोर्ट, इलाहाबाद, 1871, पृष्ठ-442 से 448 तक .

नवम्बर 1873 में झाँसी के स्थानापन्न कमिश्नर कालविन[17] ने यह रिपोर्ट की, "1869 के अकाल के समय तक झाँसी जिले में राजस्व की पूरी वसूली की जा चुकी थी, लेकिन 28 प्रतिशत लोग या तो अपनी भूमि को गिरवी रख चुके थे या बेच चुके थे। इस जिले में लगभग 7 लाख रुपये का ऋण किसानों पर था जिसमें अधिक से अधिक ब्याज ऋणदाताओं ने किसानों से वसूल कर लिया था"।[18] 1892 में झाँसी जिले का दूसरा राजस्व बन्दोबस्त हुआ।[19] इस बन्दोबस्त को पूरा करने का श्रेय मेस्टन तथा इम्पे नामक अधिकारियों को है। 1892 में बन्दोबस्त अधिकारी ने जिलों की आख्या देते हुये लिखा - 1868-1871 के बीच झाँसी जिले में किसानों द्वारा अपनी अधिक से अधिक भूमि ऋणदाताओं को बेच देनी पड़ी। इस अवधि में 125 एकड़ भूमि इन किसानों ने ऋणदाताओं को बेच दी तथा लगभग 45,276 एकड़ भूमि ऋणदाताओं के पास गिरवी रख दी।

ललितपुर का क्षेत्र सूदखोरी के व्यापार से अधिक प्रभावित था। यहाँ सूद का कार्य करने वाले अधिकांश जैनी लोग थे। प्रचलित परम्परा के अनुसार देवपत तथा खेवपत नाम के दो बनियों ने मेरठ से चलकर बुन्देलखण्ड में प्रस्थान किया तथा ललितपुर को अपने व्यापार का केन्द्र बनाया। इन जैनी व्यापारियों ने ऋण देने का कार्य प्रारम्भ किया। जिले की गिरती हुई दशा तथा लगातार पड़ने वाले अकालों का प्रकोप अंग्रेज सरकार की कठोर राजस्व दरें, उद्योग तथा व्यापार

---

17. इम्पे तथा मेस्टन- झाँसी सेटिलमेन्ट रिपोर्ट, 1892, पृष्ठ-[illegible]
18. वही.
19. वही.

आदि नष्ट होने के कारण इस क्षेत्र में भुखमरी और गरीबी में वृद्धि हुई इसके कारण लोगों को अपनी भूमि गिरवी रखकर ऋणदाताओं से कर्ज लेना पड़ा, किन्तु इस कर्ज का भुगतान न कर पाने के कारण किसानों की भूमि ऋणदाताओं के हाथ में आ गई ।[20]

ललितपुर में बुन्देला ठाकुर जो इस क्षेत्र के प्रमुख जमींदार थे, आर्थिक मन्दी की चपेट के कारण धीरे-धीरे ऋणग्रस्त हो गये और उन्होंने भी बहुत सारी भूमि जैनी और मारवाड़ियों को गिरवी रख दी जो बाद में ऋणदाताओं के हाथ में आ गयी । इस क्षेत्र की ऋण की परम्परा ने लेफ्टिनेण्ट गवर्नर विलियम म्यूर का ध्यान आकृष्ट किया ।[21] जनवरी 1872 में उसने इस क्षेत्र का दौरा किया । बुन्देलखण्ड यात्रा के दौरान म्यूर ने यह अनुभव किया कि शीघ्र ही एक कानून पास कर ऋणदाताओं के वास्तविक हिसाब की जानकारी प्राप्त की जाये तथा इससे किसानों को मुक्त किया जाये ।[22] सेटिलमेण्ट अधिकारी के आदेश के आधार पर 1874 में कमिश्नर कालविन को जाँच-पड़ताल हेतु नियुक्त किया गया । 1876 में झाँसी के मऊ, गरौठा और भाण्डेर परगना में किसानों के ऊपर लदे हुये कर्ज की जाँच-पड़ताल का कार्य पोर्टर नामक अधिकारी को दिया गया, किन्तु पोर्टर अपना कार्य पूरा न कर सका और बीच में ही उसका स्थानान्तरण हो गया ।[23] उसके स्थान पर मार्टिन को नियुक्त किया गया जिसने अपनी आख्या में

---

20. पाठक, एस०पी०- झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल , पृष्ठ 170-171
21. इम्पे तथा मेस्टन, झाँसी सेटिलमेण्ट रिपोर्ट, 1892, पृष्ठ-55.
22. वही, पृष्ठ-56.
23. वही.

यह स्पष्ट किया कि इन परगनों में 16½ लाख रुपये का कर्ज किसानों पर लदा हुआ है ।[24]

बुन्देलखण्ड भूमि हस्तान्तरण कानून 1882 :

लाटन ने ऋण की परम्परा को समाप्त करने के सम्बन्ध में जो रिपोर्ट दी थी उसके आधार पर यह अनुभव किया गया कि एक कानून पास कर भूमि के हस्तान्तरण पर रोक लगा दी जाये । इस प्रकार का कानून सिन्ध प्रान्त में 1882 में पास हो चुका था ।[25] इसमें यह व्यवस्था कर दी गयी कि ऋण से लदे किसानों का बोझ हल्का करने के लिये सम्बन्धित मजिस्ट्रेट इसके लेने-देने का विवरण दें और ऋणग्रस्त किसान की भूमि का एक हिस्सा बेचकर शेष भूमि उन्हीं किसानों को सौंप दी जाये । बेचे हुये भाग से प्राप्त पैसे से ऋणदाताओं के ऋण की पूर्ति कर दी जाये ।[26]

इस नये कानून के अन्तर्गत जून 1882 में ईवान नामक अधिकारी को स्पेशल जज के रूप में नियुक्त कर दिया गया ।[27] लेकिन अन्ततः यह महसूस किया गया कि जब तक किसानों को भूमि बेचने पर रोक नहीं लगाई जायेगी, तब तक कृषि योग्य भूमि ऋणदाताओं के हाथ में जाने से नहीं रोकी जा सकेगी ।

---

24. इम्पे तथा मेस्टन - झाँसी सेटिलमेण्ट रिपोर्ट, 1892, पृष्ठ-58.
25. पाठक, एस0पी0 - झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ 88-89.
26. इम्पे तथा मेस्टन - झाँसी सेटिलमेण्ट रिपोर्ट, 1892, पृष्ठ 58-59.

भूमि हस्तान्तरण कानून 1903 :

भूमि का हस्तान्तरण रोकने के लिये तथा बुन्देलखण्ड के कृषकों की दशा में कुछ सुधार करने के लिये 1903 में सरकार को बाध्य होकर भूमि हस्तान्तरण कानून पास करना पड़ा ।[28] जिसमें यह व्यवस्था कर दी कि यदि कोई किसान किन्हीं कारणों से भूमि बेचना चाहता है तो वह उस भूमि का विक्रय केवल उसी वर्ग को करेगा जो वर्ग कृषि-कार्य में संलग्न है । इस एक्ट के पास करने के पीछे विशेष उद्देश्य यह था कि ऋणदाताओं एवम् गैर कृषक वर्ग में कृषि योग्य भूमि का विक्रय न होने दिया जाये । ऐसा प्रतीत होता है कि इस कानून द्वारा 1882 के एक्ट की कमियों को दूर करने का प्रयास किया गया । लेकिन तब तक काफी देर हो चुकी थी और बुन्देलखण्ड के अधिकांश किसान ऋणदाताओं के चंगुल में जा चुके थे ।[29] यदि सरकार ने यह तरीका पहले ही अपनाया होता तो विशेषतः उस समय जब 1864 में झाँसी के कमिश्नर मिन्सन ने इस बारे के प्रति सचेत किया था तो यह निश्चित था कि इस क्षेत्र में कृषकों की इतनी आर्थिक दुर्गति नहीं होती ।[30]

संक्षेप में बुन्देलखण्ड का इतिहास अत्यन्त ही शौर्य और साहस की परम्पराओं से सम्बन्ध था । 1804 में अँग्रेजी शासन की स्थापना के समय से लेकर 1947 तक यह क्षेत्र विदेशी शासन के अधीन सभी प्रकार

---

28. ड्रेक ब्रोक मैन, डी०एल०- झाँसी गजेटियर, इलाहाबाद, 1909, पृष्ठ-154.

29. वही.

30. पाठक, एस०पी० -झाँसी ड्यूरिंग द [illegible]

की शोषण एवम् अन्याय की नीति का शिकार रहा । फलतः बुन्देलखण्ड के जमींदारों तथा कृषकों का आर्थिक रूप से न केवल शोषण ही हुआ बल्कि विदेशी शासन के कारण उनमें अपराधिक प्रवृत्तियाँ जैसे डकैती, ठगी आदि का भी जन्म हुआ । इस क्षेत्र के जमींदार, राजे तथा महाराजे जो अपने शौर्य के लिये प्रख्यात थे, वे अंग्रेजी शासन में शांति स्थापित हो जाने के बाद विलासिता पूर्ण जीवन व्यतीत करने लगे । अब उन्हें न तो युद्ध लड़ने पड़े और न ही अपनी रियासत में शांति स्थापित करने के लिये प्रयास ही करना पड़ा । विलासितापूर्ण जीवन के कारण इनमें अनेकों बुराइयाँ विकसित हुई तथा वीरसिंह देव और छत्रसाल जैसे इस क्षेत्र के राजाओं ने शौर्य और पराक्रम का जो उदाहरण प्रस्तुत किया था उससे बुन्देलखण्ड के राजे और महाराजे अंग्रेजी शासन काल में विमुख हो गये । यहाँ तक कि उनमें एक-दूसरे के प्रति धोखा देने की प्रवृत्ति पैदा हो गई । अनेकों ने तो अंग्रेजी शासन का साथ दे दिया जिसमें विदेशी शासन को मजबूती मिली ।

ऐसे वातावरण में भी कुछ साहसी लोग अब भी थे जिन्होंने अंग्रेजी शासन के प्रति विरोध की भावना को जागृत रखा । झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, बानपुर के राजा मर्दनसिंह तथा बाँदा के नवाब अली बहादुर जैसे साहसी शूरवीरों ने 1857 में अंग्रेजी सरकार के दाँत खट्टे कर दिये थे । रानी लक्ष्मीबाई ने तो अपने विरोधी हीरोज से शहीद होने के पश्चात् सम्मान भी प्राप्त किया ।

1858 में शांति स्थापित होने के बाद अंग्रेजी शासन सत्ता ईस्ट इण्डिया कम्पनी से लेकर ब्रिटिश क्राउन के हाथ में आ गई । इसी

समय वाईसराय के पद पर कैनिंग की नियुक्ति हुई जिसने महारानी विक्टोरिया का घोषणा-पत्र भारतवर्ष के समक्ष रखा । इस घोषणा में यद्यपि महारानी विक्टोरिया ने यह कहा था कि अंग्रेज सरकार भारतीयों के धर्म , विश्वासों , परम्पराओं , रीति-रिवाजों में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करेगी । इसी के साथ ही सरकार ने साम्राज्य विस्तार की नीति का भी अन्त कर दिया , किन्तु वास्तव में 1858 के बाद भी अंग्रेजों ने भारतीय मामलों में बराबर हस्तक्षेप किया गया । बुन्देलखण्ड में तो एक नीति के अन्तर्गत इस क्षेत्र के लोगों को सामाजिक , आर्थिक रूप से पिछड़ा बनाये रखा गया । ऐसा जानबूझ कर किया गया, क्योंकि यहाँ के लोगों ने 1857 के विद्रोह में अंग्रेजों का डटकर विरोध किया था । अतः बदला लेने की दृष्टि से यहाँ के लोगों को सामाजिक व आर्थिक रूप से पिछड़ा बनाये रखा गया । इस पिछड़ेपन के बावजूद भी राष्ट्रीय आन्दोलन की चिंगारी लोगों के दिल में पनपती रही । रानी लक्ष्मीबाई का त्याग तथा बुन्देलखण्ड के क्रान्तिकारियों जैसे- अली बहादुर, मर्दनसिंह आदि की कुर्बानियाँ लोगों के सामने आदर्श थी । यहाँ के ग्रामीण अंचलों में राष्ट्रीयता के गीत , लोरी अथवा लोक-गीतों में गाये जाते रहे , जो लोगों के अंग्रेजी शासन के प्रति विरोध की भावना प्रगट करते हैं ।

सामाजिक, आर्थिक पिछड़ापन तथा अंग्रेजों के विरुद्ध घृणा की भावना :

1804 से लेकर 1947 तक ब्रिटिश शासन काल में बुन्देलखण्ड सामाजिक तथा आर्थिक रूप से पिछड़ापन की स्थिति का शिकार रहा।

यहाँ के लघु उद्योग धन्धों के विनाश से बेरोजगारी तथा गरीबी निरन्तर बढ़ती गई । मऊ की सूती मिल तथा कालपी की सूती मिल , एरच की चुनरी , झाँसी का कालीन उद्योग, मऊरानीपुर का प्रसिद्ध खारूआ वस्त्र उद्योग , हमीरपुर , जालौन आदि क्षेत्रों में भी फैला हुआ खारूआ तथा नील उद्योग के विनाश से इस क्षेत्र का आर्थिक पिछड़ापन बना रहा । ऐसा प्रतीत होता है कि यहाँ की स्वातन्त्र्य प्रिय जनता से अंग्रेज शासक चिढ़े हुये थे । 1857 के विद्रोह में झाँसी की रानी , मर्दनसिंह , बाँदा के नवाब अलीबहादुर आदि नेताओं के नेतृत्व में बुन्देलखण्ड की जनता ने अंग्रेजों को गहरा आघात पहुँचाया था । यद्यपि 1857 के विद्रोह का दमन हो गया और 1858 में अंग्रेजों को इस क्षेत्र में शासन स्थापित करने में सहायता मिली , लेकिन अंग्रेज इस क्षेत्र की जनता से बदला लेने पर तुले हुये थे। वे जानते थे कि यहाँ कि विद्रोही जनता को सजा देने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि बुन्देलखण्ड को आर्थिक रूप से पिछड़ा बनाये रखा जाये । यह नीति 1858 से जारी रही । राजस्व नीति की कठोरता ने अंग्रेजों को अपनी योजना के क्रियान्वयन में भरपूर मदद प्रदान की ।

अंग्रेजी नीति का यह परिणाम निकला कि लोगों के दिमाग में दमन तथा अत्याचार की छाया निरन्तर बनी रही । परिणामस्वरूप यहाँ के लोगों ने अंग्रेजी शासन से घृणा करना शुरू कर दिया । लोग अंग्रेजी शासन को अपने कष्ट का कारण समझते थे । अतः लोग अंग्रेजों को कुत्ता कहकर पुकारने लगे । झाँसी में इलाहाबाद बैंक चौराहे के

समीप स्थित झाँसी के तत्कालीन सुपरिन्टेनडेन्ट मेजर एफ0 डब्ल्यू0 पिन्कने के स्मारक को आज भी लोग कुत्ते की टौरिया के नाम से पुकारते हैं । इतना ही नहीं बल्कि अन्य भी स्मारक जो कि अंग्रेज अधिकारी की यादगार से बनाया गया उसे भी घृणा की दृष्टि से देखा जाता रहा । इस प्रकार बुन्देलखण्ड में अंग्रेजी शासन के परिणाम स्वरूप यहाँ घृणा का वातावरण पैदा हुआ । बुन्देलखण्ड से बाहर के लोगों को लाकर बसाना शुरू किया गया । झाँसी छावनी में स्थित अनेकों ठेकेदार बाहर से लाकर बसाये गये जो सेनाओं की आवश्यकताओं की पूर्ति किया करते थे । यहाँ के लोग अंग्रेजी योजनाओं में भी सहयोग नहीं करते थे । यह उल्लेखनीय है कि लड़कियों की शिक्षा के लिये सरकार की ओर से जब स्कूल खोला गया तो थोड़े ही दिन बाद लड़कियों की संख्या कम होने से सरकार को स्कूल बन्द करना पड़ा।[31] यह इस बात का प्रमाण है कि लोग सरकार के किसी भी मामले में सहयोग देने के लिये तैयार नहीं थे । ऐसी परिस्थिति में अंग्रेजों के लिये यह आवश्यक हुआ कि इस क्षेत्र में एक वफादार प्रजा का निर्माण किया जाये और इस उद्देश्य से ईसाई धर्म के प्रचारकों को बसाने के लिये प्रेरित किया गया । ताकि वे ईसाईयों के नाम पर वफादार हों। इसी पृष्ठ भूमि में बुन्देलखण्ड के पिछड़े क्षेत्र में ईसाई मिशनरियों ने अपना कार्य शुरू किया जिन्हें सरकार की ओर से संरक्षण और सुविधायें मिली । निःसन्देह इस धार्मिक वातावरण के लिये मुख्य उद्देश्य ब्रिटिश शासन को स्थायित्व देना था ।

---

31. पाठक, एस0पी0-झाँसी ड्यूरिंग द ब्रिटिश रूल, पृष्ठ 152-153.

गाँधीवादी आन्दोलनों का प्रारम्भ एवम् हिन्दू-मुस्लिम सहयोग :

प्रथम विश्व युद्ध में अंग्रेजों और उनके मित्र राष्ट्रों ने तुर्की साम्राज्य को तोड़ कर अरब को उससे अलग कर दिया एवम् उसके ईराक , फिलिस्तीन , सीरिया आदि प्रान्तों पर अधिकार कर लिया । अंग्रेज तुर्की से इतने असंतुष्ट थे कि उन्होंने तुर्की सुल्तान से खलीफा के पद को छीन लिया । यह मुस्लिमों की धार्मिक भावनाओं के साथ खिलवाड़ था । खलीफा का साम्राज्य टूटते देख भारतीय मुसलमानों में बहुत असन्तोष पैदा हुआ ।[32] इसके अतिरिक्त मार्च 1919 में ब्रिटिश सरकार ने "रौलेट एक्ट" पास किया जिसके अनुसार सरकार किसी भी व्यक्ति को बिना मुकदमा चलाये जेल में बन्द कर सकती थी । इस कानून के विरुद्ध समस्त् देश में विरोध एवम् प्रदर्शन हुये । 13 अप्रैल, 1919 ई0 को जलियाँवाला हत्या काण्ड इसी का परिणाम था जिसमें लगभग 1000 व्यक्ति मारे गये तथा 2000 के लगभग घायल हुये ।[33] इस हत्या काण्ड से संसार के लोगों के रोंगटे खड़े हो गये ।[34] 1919 के मान्टेग्यु चेम्सफोर्ड सुधारों से भी भारतीयों को घोर असन्तोष हुआ ।[35] इन परिस्थितियों में गाँधी जी के नेतृत्व में कांग्रेस ने खिलाफत आन्दोलन चलाया जो कुछ समय बाद असहयोग आन्दोलन

---

32. इतिहास प्रवेश- जयचन्द्र विद्यालंकार, पेज-745.
33. हिस्ट्री ऑफ इण्डिया- भाग-2, पर्सीवल स्पीयर, पेज 120-121.
34. वही.
35. भारतीय इतिहास कोष- सच्चिदानन्द भट्टाचार्य, पृष्ठ 357-358.

में परिवर्तित हो गया । इस आन्दोलन के मुख्य उद्देश्य थे- पंजाब में किये गये अत्याचार तथा खलीफा के प्रति किये गये अन्यायपूर्ण नीति का निराकरण और स्वराज्य की प्राप्ति । आन्दोलन को ठीक प्रकार चलाने के लिये कांग्रेस ने 1,50,000 स्वयं सेवक भर्ती किये ।

असहयोग आन्दोलन तथा बुन्देलखण्ड :

बुन्देलखण्ड में सर्वप्रथम झाँसी में 1916 ई0 में एक "संयुक्त प्रान्त राजनैतिक कान्फ्रेन्स" का आयोजन किया गया था जिसके स्वागताध्यक्ष सी0वाई0 चिन्तामणि[36] बनाये गये थे । इसके प्रायोजक हरनारायण गौरहार थे । इस कान्फ्रेन्स में अन्य जिलों के भी कांग्रेस विचारधारा के लोग एकत्रित हुये थे । इसमें झाँसी के आत्माराम गोविन्द खेर, रघुनाथ विनायक धुलेकर, लक्ष्मणराव कदम, कामरेड अयोध्याप्रसाद , कुन्जबिहारी लाल शिवानी, कृष्ण गोपाल शर्मा, रामेश्वर प्रसाद शर्मा आदि ने भाग लिया था[37] बाद में सी0वाई0 चिन्तामणि एवं श्यामनारायण घोष ने 1919 ई0 के अमृतसर में कांग्रेस अधिवेशन में भी भाग लिया था ।[38]

इस समस्त कांग्रेसी विचारधारा के लोगों ने 1917-1918 ई0 के कांग्रेस द्वारा चलाये गये होम रूल आन्दोलन में भी भाग लिया

36. सरस्वती पाठशाला इण्टरमिडियेट इण्टर कालेज, अंक-1991-92, पृष्ठ-5.

37. व्यक्तिगत साक्षात्कार- पं0 दुर्गाप्रसाद व्यास, मो0 वासुदेव, म0न0-222.

38. झाँसी गजेटियर, 1965, झाँसी , पृष्ठ-78.

तथा उसकी एक शाखा की स्थापना भी झाँसी में की गयी थी।[39]

दिसम्बर 1919 ई० में गाँधी जी के असहयोग आन्दोलन के आहवान पर समस्त बुन्देलखण्ड में इसकी प्रतिक्रिया आरम्भ हुई। इससे बुन्देलखण्ड के चारों जिले प्रभावित हुये। झाँसी, हमीरपुर एवम् बाँदा जिलों की इस आन्दोलन में प्रमुख भूमिका रही।

झाँसी में असहयोग आन्दोलन :

झाँसी नगर एवम् जिले की जनता में असहयोग आन्दोलन की तीव्र प्रतिक्रिया हुई। इस आन्दोलन में आत्माराम गोविन्द खेर रघुनाथ विनायक धुलेकर, कृष्ण गोपाल शर्मा तथा स्त्रियों में चिन्ता देवी तथा चन्द्रमुखी देवी की प्रमुख भूमिका रही।[40]

नगर में उस समय प्रमुख शिक्षण संस्था "मैकडोनल्ड हाई-स्कूल" था। अनेक विद्यार्थियों ने इस संस्था से अपना अध्ययन समाप्त कर दिया। संयोग से इस समय कुछ प्रमुख गाँधीवादी अध्यापकों ने एक विद्यालय की स्थापना की। इस संस्था का नाम "सरस्वती विद्यालय" था। इसके संस्थापक तत्कालीन प्रमुख शिक्षा विद् हर नारायण गौरहार थे जो कि "मैकडोनल्ड हाई-स्कूल" में अध्यापक थे।[41] उत्साही एवम् राष्ट्रीय चेतना से ओत-प्रोत अध्यापक हर नारायण गौरहार ने "मैकडोनल्ड हाई-स्कूल"[42] से अलग होकर इस

---

39. झाँसी गजेटियर, 1965, जोशी, पृष्ठ-78.
40. व्यक्तिगत साक्षात्कार- पं० दुर्गाप्रसाद व्यास, 222, वासुदेव, झाँसी.
41. सरस्वती पाठशाला, हीरक जयन्ती विवरणिका, पृष्ठ-5.

संस्था को प्रारम्भ किया था । असहयोग आन्दोलन के समय अनेक छात्रों ने इस नये विद्यालय में प्रवेश लिया । उधर अनेक वकीलों ने अदालतों का बहिष्कार किया, इनमें प्रमुख थे कालका प्रसाद अग्रवाल ।

हमीरपुर में असहयोग आन्दोलन :

हमीरपुर जिले में असहयोग आन्दोलन की प्रमुख महत्ता कुलपहाड़ एवम् महोबा तहसीलों में तीव्र गति से चली । हमीरपुर जिले में असहयोग आन्दोलन के प्रमुख कार्यकर्ता दीवान प्रद्युम्नसिंह एवं उनकी पत्नी, राजेन्द्र कुमार, कुँवर हरप्रसाद सिंह, महोबा के पं० बैजनाथ तिवारी, भारतेन्दु अरजरिया आदि थे । इस आन्दोलन का प्रमुख केन्द्र कुलपहाड़ था । बाद में यह आन्दोलन राठ, महोबा आदि तहसीलों में भी फैल गया था ।[43]

बाँदा में असहयोग आन्दोलन :

महात्मा गाँधी के आह्वान पर बाँदा जिले में कुँवर हरप्रसाद एवम् रमाशंकर रावत आदि ने अदालतों में जाकर वकीलों से अदालतों का बहिष्कार करने के लिये कहा ।[44]

अन्य जिलों में असहयोग आन्दोलन :

धीरे-धीरे असहयोग आन्दोलन समस्त बुन्देलखण्ड में फैल

---

43. अनासक्त समदर्शी- भारतेन्दु अभिनन्दन ग्रन्थ, पृष्ठ 56-57.
44. वही.

गया । ललितपुर जिले में नन्दकिशोर किलेदार, हुकुमचन्द्र बुखारिया, शादीलाल दुबे तथा उरई-जालौन में चन्द्रभान विद्यार्थी, मोतीलाल शर्मा आदि गाँधीवादी विचारधारा के व्यक्तियों ने इस आन्दोलन की बागडोर सम्भाली ।[45]

सत्याग्रह एवम् आन्दोलन :

इस प्रकार 1919-20 ई0 में गाँधी जी के नेतृत्व में शक्तिशाली परन्तु अहिंसात्मक असहयोग आन्दोलन समस्त भारत के साथ बुन्देलखण्ड में भी प्रारम्भ हो गया । इस आन्दोलन में शांति पूर्ण प्रदर्शन किये गये । सर्वप्रथम न्यायालयों का बायकाट किया गया, हड़ताल एवम् सत्याग्रह चलाये गये, शिक्षा संस्थाओं का बहिष्कार किया गया, शराब एवम् विदेशी वस्तुयें बेचने वाली दुकानों पर धरना दिया गया, विदेशी वस्तुओं की होली जलाई गई । हिन्दुओं और मुसलमानों ने कंधा से कंधा मिलाकर इस आन्दोलन में भाग लिया । यह आन्दोलन बुन्देलखण्ड के गाँव-गाँव में फैल गया । मऊरानीपुर [झाँसी] में सत्याग्रह करते हुये रामनाथ त्रिवेदी, ठाकुर दास झाँसी में कालका प्रसाद अग्रवाल, आत्माराम गोविन्द खेर, रघुनाथ विनायक धुलेकर, कुँज बिहारी लाल शिवानी, कामरेड अयोध्याप्रसाद, कामरेड पन्ना लाल शर्मा[बरुआसागर] रामसहाय शर्मा, चन्द्रमुखी देवी[46], दीवान शत्रुघ्न सिंह, भारतेन्दु अरजरिया,

45. "कंचन प्रभा"- मासिक पत्रिका, अप्रैल 1975, अंक-
46. राष्ट्रकवि घासीराम व्यास- रामचरण हयारण, पृष्ठ 20-36.

किशोर देवी (भारतेन्दु जी की पत्नी), राजेन्द्र कुमारी (दीवान जी की पत्नी), राठ-कुलपहाड़ में तथा ललितपुर में खिलेदार तथा बाँदा में कुँअर हरप्रसाद आदि ने सत्याग्रह एवम् आन्दोलन का नेतृत्व किया ।[47]

स्वदेशी आन्दोलन तथा विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार :

असहयोग आन्दोलन के प्रस्ताव की एक प्रमुख शर्त स्वदेशी वस्तुओं को अपनाना तथा विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार करना था । इस शर्त को स्वदेशी आन्दोलन कहा गया । इस आन्दोलन का प्रभाव समस्त देश पर हुआ । विदेशी वस्तुयें बेचने वाली दुकानों पर धरना दिया गया एवम् विदेशी वस्त्रों की होली जलाई गई ।

बुन्देलखण्ड में यह आन्दोलन अनेक नगर, गाँवों एवम् कस्बों में चलाया गया । झाँसी नगर में विदेशी कपड़ों की होली सरस्वती पाठशाला के प्राँगण में रघुनाथ विनायक धुलेकर के नेतृत्व में जलाई गई ।[48] इस आन्दोलन में आत्माराम गोविन्द खेर, स0मा0 धुलेकर, लक्ष्मण कदम के अतिरिक्त अनेक महिलाओं ने भाग लिया । इन महिलाओं में पिस्ता देवी अपनी पुत्रियों के सहित तथा चन्द्रमुखी देवी प्रमुख थीं । इन कार्यकर्ताओं ने मोती लाल पुस्तकालय के सामने विदेशी वस्त्रों की होली जलायी थी । इस आन्दोलन में नगर के प्रमुख मजदूर नेता रुस्तम सेठिया की महत्वपूर्ण भूमिका रही । बाद में इस स्वदेशी

47. अनासक्त मनस्वी, पृष्ठ-56.
48. सरस्वती पाठशाला , हीरक जयन्ती अंक, पृष्ठ-6.

आन्दोलन में पिस्ता देवी अपने पुत्रियों सहित तथा चन्द्रमुखी तथा कल्लम सेठिन आदि पुलिस द्वारा बन्दी बना लिये गये थे ।[49]

उधर झाँसी जिले के एक अन्य कस्बे एवम् तहसील मऊ रानीपुर में पं० घासीराम व्यास के नेतृत्व में दूध-दही चौक के प्रांगण में विदेशी कपड़ों की होली जलाई गई । इसमें पं० घासीराम व्यास, रामनाथ त्रिवेदी, रामनाथ राव , लक्ष्मीनारायण अग्रवाल एवम् पन्नालाल अग्रवाल आदि ने भाग लिया । इन सब व्यक्तियों को लाल बाजार में पुलिस द्वारा बन्दी बना लिया गया ।[50] झाँसी जिले के एक अन्य कस्बे चिरगाँव में भी गल्ला मण्डी के प्रांगण में विदेशी कपड़ों की होली जलाई गई ।

जिला हमीरपुर में स्वदेशी आन्दोलन के तहत कुलपहाड़ , महोबा, राठ आदि कस्बों में विदेशी कपड़ों की होली जलाई गई थी तथा गाँधी आश्रम खादी उत्पादन केन्द्र की स्थापना की गई । बाद में दीवान शत्रुघ्नसिंह उनकी पत्नी राजेन्द्र कुमार तथा भारतेन्दु अरजरिया आदि पुलिस द्वारा बन्दी बनाये गये ।[51]

समस्त बुन्देलखण्ड में असहयोग आन्दोलन पूरे वेग से चल रहा था । गाँधी जी का उत्प्रेरक नेतृत्व सभी धर्मों एवम् सम्प्रदायों को समान रूप से प्रेरित कर रहा था । असहयोग आन्दोलन के दौरान बुन्देलखण्ड में लगभग 1500 से अधिक लोगों को बन्दी बनाया

49. व्यक्तिगत साक्षात्कार-पं० दुर्गाप्रसाद व्यास.
50. राष्ट्रकवि घासीराम व्यास, रामचरण हयारण, पृष्ठ 20-21.
51. अनासक्त मनस्वी, पृष्ठ-180.

गया जिसमें झाँसी जिले में जलील अहमद[52] मोहम्मद शेर खाँ तथा बाँदा जिले में मज्जू खाँ, पठान खाँ तथा हमीरपुर जिले में मोहम्मद अहिया एवम् रज्जाक प्रमुख लोगों में से थे । यद्यपि चौरी-चौरा काण्ड के पश्चात् गाँधी जी ने यह आन्दोलन वापिस ले लिया था लेकिन 12 फरवरी 1922 को कांग्रेस की कार्यकारिणी ने एक प्रस्ताव पारित किया कि कांग्रेस चरखा प्रचार हिन्दू-मुस्लिम एकता और अछूत उद्धार के कार्यक्रमों को पूरी शक्ति लगाकर आगे बढ़ाया।[53] बुन्देलखण्ड हिन्दू-मुस्लिम एकता की दृष्टि से एक आदर्श रहा । असहयोग आन्दोलन तथा देश के अन्य स्वतन्त्रता आन्दोलनों में यहाँ के हिन्दू-मुस्लिम तथा ईसाई सभी ने समान रूप से योगदान दिया।

गाँधी जी का बुन्देलखण्ड आगमन :

1920-21 ई0 के तूफानी दिन, ऐसे लगता था, मानो सदियों से सोया हुआ राष्ट्र एकाएक जाग उठा था । गाँधी जी समस्त देश में त्याग, बलिदान और अहिंसात्मक असहयोग का प्रचार करते घूम रहे थे । अक्टूबर 1920 ई0 में गाँधी जी ने संयुक्त प्रान्त के मुरादाबाद अलीगढ़ , कानपुर , लखनऊ और बरेली आदि नगरों का दौरा किया । नवम्बर 1920 ई0 में वह पुनः संयुक्त प्रान्त में आये ।[54]

---

52. स्वतन्त्रता संग्राम के सैनिक, भाग-1 से [झाँसी मण्डल] सूचना विभाग का प्रकाशन, 1963.
53. कांग्रेस का इतिहास, पट्टाभि सीता रमैया, भाग-3.
54. उत्तर प्रदेश में गाँधी जी - श्री रामनाथ सुमन, पृष्ठ-73.

झाँसी में :-

संयुक्त प्रान्त में असहयोग और खिलाफत के प्रश्न का प्रचार करते हुये 20 नवम्बर , 1920 ई0 को गाँधी जी झाँसी आये । इस अवसर पर झाँसी नगर के मध्य में स्थित "हार्डीगंज"[55] जहाँ पर गाँधी जी का भाषण होना था, उनके स्वागत के लिये बहुत सुन्दर रूप से सजाया गया था । गाँधी जी के साथ मौलाना शौकत अली भी आये थे ।[56] गाँधी जी को झाँसी के राष्ट्रीय आन्दोलन के सूत्रपात के मुख्य केन्द्र-बिन्दु सरस्वती पाठशाला में ठहराया गया था । गाँधी जी ने सरस्वती पाठशाला को राष्ट्रीय विद्यालय घोषित करने के लिये श्री गौरहार एवम् कुंवर जी से कहा था । गाँधी जी की इस प्रेरणा के प्रभाव से श्री कुंवर एवम् गौरहार ने सरस्वती पाठशाला को राष्ट्रीय विद्यालय घोषित कर दिया था। बाद में इस घोषणा का प्रभाव यह हुआ कि ब्रिटिश सरकार ने विद्यालय की आठ हजार पाँच सौ रुपये की अनुदान राशि बन्द कर दी ।[57] बाद में गाँधी जी ने 20 नवम्बर 1920 ई0 को सायंकाल हार्डीगंज में एक विशाल जनसभा को सम्बोधित करते हुये सर्वप्रथम आयोजकों द्वारा सभा के कार्य-स्थल की रोशनी और सजावट की आलोचना करते हुये इसे फिजूल खर्ची बताया । सभा को सम्बोधित करते हुये उन्होंने कहा - "जब तक खिलाफत का सवाल हल नहीं

55. यह वर्तमान में सुभाष गंज के नाम से पुकारा जाता है .
56. उत्तर प्रदेश में गाँधी जी - श्री रामनाथ सुमन, पृष्ठ-74.
57. सरस्वती पाठशाला , हीरक जयन्ती विशेषांक, 1991-92, पृष्ठ-6 एवम् 15.

होता, पंजाब में किये गये अत्याचारों का इन्साफ नहीं किया जाता, और स्वराज्य नहीं हो जाता, तब तक किसी भारतीय को किसी भी तरह की कुर्सियों में शामिल नहीं होना चाहिये। हमारा उद्देश्य केवल हिन्दू-मुस्लिम एकता और हिंसा रहित असहयोग है इसके बाद उन्होंने असहयोग-कार्यक्रम के विविध कार्यक्रमों पर अमल करने के लिये बल दिया और कहा - किसी को भी सेना में भर्ती नहीं होना चाहिये। अन्त में उन्होंने तरक्की पाठशाला के लिये चन्दे की अपील की।[58] सभा को मौलाना शौकत अली ने भी सम्बोधित किया था।[59]

गाँधी जी के बुन्देलखण्ड में आगमन से बुन्देलखण्ड के लोगों में एक नई चेतना की लहर दौड़ गई। प्रत्येक नगर, कस्बों एवम् गाँवों में गाँधी जी एवम् स्वराज्य का जय घोष होने लगा। गाँव-गाँव में खादी का प्रचार एवम् चरखे की कताई प्रारम्भ हो गयी। कांग्रेस कमेटियाँ बनाई गयी तथा स्वराज्य प्राप्त करने के लिये गाँधी जी द्वारा बताये हुये मार्ग पर चलने का प्रण किया गया। झाँसी जिले की जिन नगरों एवम् कस्बों पर आन्दोलन का प्रभाव पड़ा उनमें मऊरानीपुर, बरुआसागर, चिरगाँव, गुरसराय, ललितपुर, तालबेहट एवम् मेहरौनी प्रमुख हैं।

---

58. उत्तर-प्रदेश में गाँधी जी - श्री रामनाथ सुमन, पृष्ठ-74.
59. जिला झाँसी गजेटियर, 1965, ई0, ई0 बी0 जोशी, पृष्ठ-72.

मऊरानीपुर में गाँधी जी :-

नवम्बर 1929 में गाँधी जी झाँसी जिले के मऊरानीपुर तहसील में आये थे । मऊरानीपुर नगर के लाल बाजार में सभा को सम्बोधित किया था । भाषण में उन्होंने स्वराज्य एवम् स्वदेशी वस्तुओं को अपनाने का आग्रह किया था ।[60]

कुलपहाड़ के ईसाई मिशन द्वारा गाँधी जी का स्वागत :

सन् 1928 ई0 में कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में हमीरपुर जिले से हमीरपुर जिले के कांग्रेस कमेटी के महामंत्री एवम् दीवान शत्रुघ्नसिंह जिला प्रतिनिधि बनकर उस अधिवेशन में शामिल हुये थे । इसमें हमीरपुर जिला कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष पण्डित भगवान दास बालेन्दु थे उन्होंने भी कलकत्ता अधिवेशन में भाग लिया तथा उसी समय उन्होंने गाँधी जी को हमीरपुर जिले में आने के लिये आमंत्रित किया । इस निमन्त्रण को स्वीकार करते हुये महात्मा जी ने 1929 में हमीरपुर का दौरा किया और राठ, महोबा तथा कुलपहाड़ में उन्होंने कई सभाओं को सम्बोधित किया । कुलपहाड़ में जनतान्त्र विद्यालय में एक सार्वजनिक सभा को भी गाँधी जी ने सम्बोधित किया और इस सभा में उनको 1500=00 रुपये की थैली भेंट की गई थी । उसी दिन दोपहर को गाँधी जी जब रेलगाड़ी द्वारा मऊरानीपुर रवाना हो रहे थे तभी कुलपहाड़

---

60. राष्ट्रकवि घासीराम व्यास - श्री रामचरण हयारण, पृष्ठ-29.

रेल्वे स्टेशन मार्ग पर ईसाई मिशन कुलपहाड़ के सदस्यों द्वारा उनका स्वागत किया गया तथा इस मिशन द्वारा गाँधी जी को 101=00 रुपये की थैली मिशन की ओर से भेंट की गई थी ।[61]

बुन्देलखण्ड में अमेरिकन मिशनरियों ने सर्वप्रथम नौगाँव स्थित छावनी में 1896 में अपने मिशन की स्थापना की थी । अमरीकी मिशनरियों का यह दल महिलाओं का था जिन्होंने देश के इस पिछड़े हुये हिस्से में चिकित्सा तथा शिक्षा सम्बन्धी सेवाओं को अपनाकर मिशन के प्रचार तथा प्रसार का कार्य प्रारम्भ किया धीरे-धीरे यह मिशन छतरपुर , कुलपहाड़ तथा अन्य केन्द्रों पर स्थापित हो गया । अमेरिकी मिशनरियों के साथ स्थानीय ऐसे लोग जिन्होंने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया था, वे इस मिशन से जुड़े हुये थे । इसके लिये फण्ड अमेरिका से ही प्राप्त होता था और इन धार्मिक कार्यों द्वारा अंग्रेज सरकार मिशनरियों के कार्यों से बुन्देलखण्ड में एक ऐसी प्रजा का निर्माण करना चाहती थी जो अंग्रेजी शासन के प्रति वफादार हो लेकिन महात्मा गाँधी के प्रेरक नेतृत्व ने राष्ट्रीयता की जिस भावना को पल्लवित किया था उससे बुन्देलखण्ड के ईसाई मिशनों के मिशनरी सभी प्रभावित हुये बिना नहीं बचे और गाँधी जी का स्वागत करते हुये उनके आन्दोलनों को चलाते हुये कुछ सहायता राशि भेंट की । उल्लेखनीय यह है कि हिन्दू-मुस्लिम तथा ईसाईयों ने मिलकर राष्ट्रीय एकता

---

61. अनासक्त मनस्वी , पृष्ठ 57-58.

को इतना मजबूत आधार प्रदान किया जो बुन्देलखण्ड में निरन्तर सशक्त होती रही और अंग्रेजों की फूट डालो राज करो नीति इसी कारण बुन्देलखण्ड में सफल नहीं होने पायी ।

सविनय अवज्ञा आन्दोलन तथा बुन्देलखण्ड :

पं० जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में 1929 ई० को 31 दिसम्बर की अर्ध रात्रि में कांग्रेस के लाहौर अधिवेशन में रावि के तट पर पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव पारित हो चुका था। इस प्रस्ताव को कार्य रूप में परिणित करने के लिये कांग्रेस ने 26 जनवरी , 1930 ई० को प्रथम स्वाधीनता दिवस सारे देश में मनाया था । प्रस्ताव में जनता के लिये मौलिक अधिकारों की घोषणा एवं ब्रिटिश सरकार को अल्टीमेटम दिया गया था कि यदि कांग्रेस की पूर्ण स्वतन्त्रता की माँग स्वीकार नहीं की गई तो सविनय अवज्ञा आन्दोलन एवम् सत्याग्रह प्रारम्भ किया जायेगा । उक्त प्रस्ताव केवल पारित ही नहीं किया गया वरन् कांग्रेस कार्य समिति के निर्देशानुसार सभा अध्यक्ष के द्वारा शपथ - पत्र के रूप में पढ़ा भी गया था , तथा जनसमूह द्वारा दोहराया भी गया था ।

इस अधिवेशन में बुन्देलखण्ड की ओर से जिला झाँसी एवम् हमीरपुर के प्रतिनिधियों ने प्रतिनिधित्व किया था । लाहौर से लौटकर अधिवेशन में गये लोगों ने ब्रिटिश सरकार के विरूद्ध सत्याग्रह की तैयारियाँ अपने-अपने क्षेत्रों में प्रारम्भ कर दी । उधर कांग्रेस ने

अपनी समस्त समितियाँ एवम् शाखाओं को स्थगित किया तथा महात्मा गाँधी को सर्वेसर्वा बनाकर अपने समस्त अधिकार स्थानान्तरित कर दिये। गाँधी जी को यह भी अधिकार दिया गया कि गिरफ्तार होने के बाद अपनी इच्छानुसार अपना उत्तराधिकारी मनोनीत कर सकते हैं। इसी प्रकार कानपुर में सत्याग्रह संग्राम के संचालन के लिये प्रान्तीय संचालक नियुक्त करने का अधिकार भी उन्हें दिया गया।[62] प्रान्तीय संचालकों को भी यह अधिकार दिया गया था कि वे प्रत्येक जिले में एक-एक संचालक नियुक्त करें जिससे प्रत्येक जिले में एक साथ सत्याग्रह-संग्राम प्रारम्भ किया जाये। संयुक्त प्रान्त [यू०पी०] के लिये गाँधी जी ने गणेश शंकर विद्यार्थी को संचालक नियुक्त किया था।[63]

हमीरपुर जिले में सविनय अवज्ञा आन्दोलन :

मार्च 1930 ई० को गणेश शंकर विद्यार्थी जो कि संयुक्त प्रान्त के आन्दोलन के संचालक थे, उन्होंने हमीरपुर जिले के सत्याग्रह के संचालन की बागडोर भगवानदास अरजरिया "भारतेन्दु" के हाथ में सौंप दी।[64] भारतेन्दु अरजरिया की अध्यक्षता में एक गुप्त सभा कुलपहाड़ कस्बे में की गई जिसमें सत्याग्रह के विभिन्न पहलुओं पर बातचीत की गई। अन्त में हमीरपुर जिले में सर्वप्रथम 13 अप्रैल, सन् 1930 ई० को नमक कानून तोड़ने की योजना बनाई गयी।

62. अनासक्त मनस्वी, पृष्ठ-196.
63. वही.
64. वही.

सत्याग्रहियों का एक जत्था पैदल महोबा एवं राठ तहसीलों के लिये रवाना हुआ , इस जत्थे ने कुलपहाड़ , राठ एवम् महोबा में नमक कानून भंग किया परन्तु पुलिस ने किसी को गिरफ्तार नहीं किया । गिरफ्तारियाँ न होने पर सत्याग्रहियों को निराशा हुयी , क्योंकि समस्त देश में हजारों व्यक्ति गिरफ्तार किये जा चुके थे ।[65] अन्त में भारतेन्दु जी के नेतृत्व में एक जत्था ने जाकर पुलिस थाना कुलपहाड़ पर जो साहित्य जब्त हो चुका था उसको पढ़ कर सुनाया गया । परन्तु इतना करने पर भी पुलिस ने किसी को गिरफ्तार नहीं किया ।[66]

हमीरपुर जिले में ब्रिटिश सरकार द्वारा आन्दोलन का मुकाबला करने में शिथिलता बरतने तथा जनता में राष्ट्र के प्रति उत्साह देख कर भारतेन्दु जी ने हमीरपुर जिले में "समानान्तर सरकार" बनाने का निश्चय किया । समानान्तर सरकार बनाने के लिये एक समस्त् जिले का संगठन तैयार किया गया । इस सम्बन्ध में कुलपहाड़ कस्बे में एक शिविर बनाया गया जिसमें जनता की सुरक्षा खादी प्रचार एवम् नये सत्याग्रहियों को भर्ती किया गया ।[67]

7 मई , 1930 ई0 को महात्मा गाँधी नमक कानून भंग करते हुये बन्दी बना लिये गये । यह समाचार मिलते ही समस्त् कुलपहाड़ में अभूतपूर्व हड़ताल की गयी कुछ पुलिसवालों द्वारा अपने आतंक

---

65. अनासक्त मनस्वी , पृष्ठ-196.
66. दैनिक जागरण दिनांक 26-1-78 के अंक से .
67. वही.

और दमन से दुकानें खुलवाकर सामान लेने का प्रयास किया गया परन्तु दुकानदारों ने उन्हें सामान देने से इन्कार कर दिया ।[68]

संध्या को कुलपहाड़ में एक विराट सार्वजनिक सभा में सर्वसम्मति से निर्णय लिया गया कि ब्रिटिश सरकार द्वारा देश के सबसे महान् नेता महात्मा गाँधी की गिरफ्तारी के विरोध में प्रत्येक भारतीय, सरकार का पूर्ण असहयोग करेंगे ।[69]

कहा गया कि स्थानीय पुलिस के लोग इस ऐतिहासिक अवसर पर ब्रिटिश सरकार की अवज्ञा करें तथा पद से त्यागपत्र देकर दमन में हाथ न बटावें । यदि उन्होंने त्यागपत्र नहीं दिया और ब्रिटिश सरकार की आज्ञा का पालन किया तो उनका सामाजिक बहिष्कार किया जायेगा । इस निर्णय पर गाँव के अनेक मुखिया और नम्बरदारों ने तथा जिला बोर्ड के अध्यापकों ने अपने पदों को त्याग कर आन्दोलन में सम्मिलित हो गये । कुलपहाड़ कस्बे के सभी वर्गों के मुखियों ने संकल्प किया कि हमारे जाति वर्ग के लोग पुलिस का सामाजिक बहिष्कार करेंगे ।[70]

दूसरे दिन से बाजार के दुकानदारों ने पुलिस के हाथ अपनी वस्तुयें बेचना बन्द कर दिया । नाई, कहार, धोबी, मेहतर आदि ने भी पुलिस की सेवा समाप्त कर दी । उच्च अधिकारियों

---

68. दैनिक जागरण दिनाँक 26-1-78 के अंक से ।
69. वही।
70. वही।

ने आकर इस समस्या का निपटारा करना चाहा किन्तु जनता अपने संकल्प पर अडिग रही । 14 मई, 1930 ई0 को सबसे पहले भारतेन्दु जी को गिरफ्तार किया गया । उन्होंने सत्याग्रह के संचालन के लिये अपने स्थान पर रामदुलारे गौरहार को नियुक्त किया । इस प्रकार सत्याग्रह चलता रहा । आठदिन के बाद रामदुलारे गौरहार सहित कांग्रेस के मुख्य लोगों को जेल भेज दिया गया । स्वयंसेवकों एवम् दुकानदारों से अमानुषिक व्यवहार किया गया । रामदुलारे गौरहार के गिरफ्तार होने पर सत्याग्रह के संचालन की बागडोर रानी राजेन्द्र कुमारी (मगरोठ)[71] के हाथों में सौंपी गयी । बहिष्कार का कार्य पूर्ववत् जारी रहा । इस आन्दोलन में अनेक महिलायें भी कूद पड़ीं । प्रत्येक दुकान पर सशस्त्र पुलिस बैठा दी गई । धारा- 144 लागू कर दी गयी दुकानदारों से बात करना जुर्म करार दिया गया । लोगों ने बाजार में आना-जाना बन्द कर दिया । इन सब कारणों से हमीरपुर जिले में उत्तेजना फैल गयी । जिले के अन्य तहसीलों से लोग जत्था बनाकर बाजार में आने लगे । सैकड़ों व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया गया और उन्हें जेल भेज दिया गया । एक माह तक यह आन्दोलन चला बाद में तत्कालीन जिला मजिस्ट्रेट पी0वी0 मटक्कर ने स्वराज्य पार्टी के विधायक कुँवर हरप्रसाद सिंह के माध्यम् से रानी राजेन्द्र कुमारी मगरोठ से पुलिस बहिष्कार आन्दोलन समाप्त करने की अपील की । अन्त में सर्वसम्मति की

---

71. सुप्रसिद्ध स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी दीवान शत्रुघ्नसिंह की पत्नी ।

राय से यह आन्दोलन समाप्त कर दिया गया । इस आन्दोलन के सम्बन्ध में आज तक लोग यह पंक्तियाँ गुनगुनाते हैं -

बहिष्कार को भयो है, यही शान्त संग्राम ।
ब्रिटिश पुलिस में दर्ज है, कुलपहाड़ को नाम ।।

इस आन्दोलन में झाँसी, चरखारी, सरीला, बिजनी, छतरपुर एवम् टीकमगढ़ के सत्याग्रहियों ने भाग लिया था ।[72]

राष्ट्रीय आन्दोलन में झाँसी और हमीरपुर जिले के लोगों ने सविनय अवज्ञा आन्दोलन में सक्रिय रूप से भागीदारी की । दिसम्बर 1929 में कांग्रेस के लाहौर अधिवेशन में झाँसी जिले से रघुनाथ विनायक राव धुलेकर, कुंज बिहारी लाल शिवानी एवम् लाड़ली प्रसाद ने हिस्सा लिया था । लाहौर से लौटने के पश्चात् नमक सत्याग्रह का इन्हीं सदस्यों ने नेतृत्व किया । इसके अतिरिक्त घासीराम व्यास, रामनाथ त्रिवेदी, रामनाथ राव, पन्ना लाल अग्रवाल [सभी मऊरानीपुर से] रघुनाथ विनायक धुलेकर, आत्माराम गोविन्द खेर, मणिराम कंचन, कुंज बिहारी लाल शिवानी, कृष्ण चन्द्र शर्मा, रुस्तम सैटिन, लाड़ली प्रसाद श्रीवास्तव [झाँसी नगर से][73] मैथिलीशरण गुप्त, सियारामशरण गुप्त [चिरगाँव से] कृष्ण गोपाल शर्मा, श्याम लाल आजाद, इन्दीवर [बरुआसागर से] तथा भादी लाल दुबे, सुदामाप्रसाद गोस्वामी, नन्दकिशोर किलेदार तथा हुकुमचन्द बुखारिया

---

72. दैनिक जागरण दिनांक 26-1-78 ई0 के अंक से ।
73. राष्ट्रकवि घासीराम व्यास-श्री रामचरण हयारण, पृष्ठ-37.

(ललितपुर से)[74] प्रमुख रूप से शामिल थे । 20 अक्टूबर 1930 को जवाहर लाल नेहरू झाँसी आये और सिविल अस्पताल के पास उनका भाषण हुआ[75] नेहरू जी के भाषण से आन्दोलनकारियों में नई चेतना एवम् स्फूर्ति पैदा हुई ।

सत्याग्रह के दौरान विदेशी कपड़ों तथा शराब की दुकानों पर महिलाओं ने धरना दिया । ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे बुन्देलखण्ड में सत्याग्रह करने वाली महिलाओं में एक तेज गति एवम् स्फूर्ति पैदा हो गई थी ।[76]

भारत छोड़ो आन्दोलन में बुन्देलखण्ड में सभी वर्गों का सहयोग :

1947 का भारत छोड़ो आन्दोलन राष्ट्रीय आन्दोलन को चरम सीमा था । गाँधी जी के "करो तथा मरो" के नारे ने पूरे देश के लोगों में एक नया उत्साह भर दिया था । बुन्देलखण्ड की जनता ने पूरे जोर और उत्साह के साथ सरकारी इमारतों पर प्रदर्शन करते हुये राष्ट्रीय ध्वज फहराये, रेलगाड़ियाँ रोकी तथा टेलीफोन के तार एवम् खम्भे उखाड़ दिये । इस आन्दोलन में लगभग पन्द्रह सौ सत्याग्रही गिरफ्तार हुये जिसमें चार व्यक्ति शहीद हुये ।[77] सभी वर्गव्यक्तियों ने खुलकर गाँधी जिन्दाबाद तथा अंग्रेज भारत छोड़ो के नारे लगाते हुये देश को स्वतन्त्र कराने में योगदान

---

74. पंडित दुर्गादास-एक साक्षात्कार(व्यक्तिगत).
75. यह भाषण सिविल अस्पताल में महिला अस्पताल के समीप हुआ था.
76. स्वतन्त्रता सेनानी की सूची के अनुसार नजर मोहम्मद कादरी (स्वतन्त्रता सेनानी से प्राप्त).
77. झाँसी गजेटियर, 1965, ई०वी० जोशी, पृष्ठ-72.

दिया । अंग्रेजी दमन चक्र लोगों को हतोत्साहित न कर सका । इस आन्दोलन के दौरान झाँसी में सभी बन्दी बनाये गये लोगों में आत्माराम गोविन्द खेर , रघुनाथ विनायक धुलेकर , कृष्ण चन्द्र पंगोरिया, लक्ष्मणराम शर्मा, रोहिणी डॉ० सुशीला नैयर आदि प्रमुख थे ।[78]

<u>बुन्देलखण्ड में क्रान्तिकारी आन्दोलन के प्रति सभी लोगों का सहयोग :</u>

बुन्देलखण्ड क्रान्तिकारी आन्दोलन का प्रमुख केन्द्र रहा जहाँ चन्द्रशेखर आजाद, पंडित परमानन्द , डॉ० भगवानदास माहौर आदि क्रान्तिकारियों ने देश को स्वतन्त्र कराने के लिये अपनी गतिविधियाँ जारी रखीं । 1924 ई0 के अन्तिम महीनों में लगभग 20 वर्ष की आयु में चन्द्रशेखर आजाद झाँसी आये । इस समय तक वे हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी के प्रमुख सदस्य थे । इस दल के प्रधान रामप्रसाद बिस्मिल थे ।[79] झाँसी में क्रान्तिकारी दल का गठन करने हेतु उसी समय सचिन्द्र नाथ बख्शी भी यहाँ आये थे झाँसी नगर स्थित टकसाल मोहल्ले में मास्टर रुद्र नारायण का घर क्रान्तिकारियों का प्रमुख केन्द्र था । झाँसी में रहकर इन क्रान्तिकारियों का सम्पर्क भगवान दास माहौर , सदाशिव राव मलकापुरकर एवम् गंगाधर वैशम्पायन से हुई[80] काकोरी काण्ड से फरार होने के बाद चन्द्रशेखर आजाद मास्टर रुद्रनारायण

---

78. स्वतन्त्रता संग्राम के सैनिक, एस0पी0 पुलिस भट्टाचार्या सूचना विभाग , लखनऊ .
79. यश की धरोहर, माहौर भगवानदास, पृष्ठ-56.
80. वही, पृष्ठ-56, 57 .

के घर ही रहने लगे थे । कुछ ही दिनों पश्चात् उन्होंने ओरछा स्टेट के एक छोटे से गाँव ढिमिरपुरा[81] में सातार नदी के किनारे साधु के रूप में रहना प्रारम्भ किया । कभी झाँसी तथा कभी ओरछा में रहते हुये आजाद अपनी क्रान्तिकारी गतिविधियों को जारी रखे हुये थे । इसी प्रकार पंडित परमानन्द जो गदर पार्टी के एक सदस्य थे । वे हमीरपुर में अपना संघर्ष जारी किये हुये थे ।

बुन्देलखण्ड से इन महान क्रान्तिकारियों को व्यापक जन-सहयोग मिला । लोग आजादी के प्रति इतने सजग थे कि छुक-छुप कर आजाद तथा उनके क्रान्तिकारी साथियों को खाने-पीने तथा अन्य चीजें देने में अपना गौरव महसूस करते थे । हिन्दू-मुस्लिम ईसाई तथा आदि सभी धर्मावलम्बी राष्ट्रीय एकता के सूत्र में बँधकर देश को आजाद करने के इस प्रयास में इन क्रान्तिकारियों का साथ दे रहे थे ।

---o---

81. इस गाँव का नाम अब आजादपुरा है .

अध्याय नवम्

उपसंहार

भारत के हृदय में स्थित बुन्देलखण्ड सदैव ही राजनीतिक गतिविधियों का केन्द्र बना रहा । समय-समय पर दशार्ण, जेजाक भुक्ति आदि नामों से प्रख्यात यह क्षेत्र काशी के गहरवार क्षत्रियों के समय बुन्देलखण्ड नाम से प्रसिद्ध हुआ[1] रोम के प्रसिद्ध भूगोलवेत्ता टालमी ने 151 ई0 के लगभग अपने भूगोल नामक ग्रन्थ की रचना की जिसमें उसने कनगौरा नामक स्थान का उल्लेख किया है । जो यमुना के दक्षिण में स्थित था । टालमी के कनगौरा का साम्यिप्य कालिंजर से किया जाता है जो बुन्देलखण्ड का प्रसिद्ध दुर्ग था ।[2] टालमी ने बुन्देलखण्ड को कन्द्रावती नाम से सम्बोधित किया है और इसके कुछ नगरों का भी उल्लेख किया है । निश्चित ही यह विवरण इस क्षेत्र की प्राचीनता की ओर संकेत देता है ।

1- स्वातन्त्र मनोवृत्ति एवम् विदेशी सत्ता से संघर्ष :

बुन्देलखण्ड का इतिहास शौर्य, साहस तथा स्वतन्त्रता प्रिय भावना से सम्बन्धित रहा है । यहाँ कि पठारी जलवायु तथा उबड़-खाबड़ भूमि के कारण लोगों के परिश्रम तथा स्वतन्त्रता प्रेरणा की

1- देखिये अध्याय प्रथम .

2- स्टेटिस्टीकल डिसक्रिप्टिव एण्ड हिस्टोरिकल एकाउण्ट आफ नार्थ-वेस्ट प्राविंसेस आफ इंडिया, भाग-1, ई0टी0 एटकिंसन: [बुन्देलखण्ड] भाग-1, पृष्ठ-2.

भावना प्रधान रही है । इसीलिये यहाँ के लोग विदेशी सत्ता से संघर्ष करते रहे । यहाँ के लोगों ने हमेशा-हमेशा के लिये किसी भी विदेशी सत्ता के सामने समर्पण नहीं किया और न ही उनकी स्वतन्त्रता की भावना हमेशा के लिये समाप्त हुई । ऐसी परिस्थिति में जबकि अपने विपक्षियों की महती शक्ति के कारण परिस्थिति विपरीत हुई तो थोड़े समय तक यहाँ के लोग अवश्य शान्त रहे किन्तु फिर भी स्वतन्त्रता की भावना किसी न किसी रूप में परिलक्षित होती रही ।

इसका सबसे अच्छा उदाहरण पन्ना नरेश छत्रसाल बुन्देला ने 18 वीं शताब्दी के प्रारम्भ में प्रस्तुत किया । मुगलों की सत्ता के विरुद्ध उनका संघर्ष वीरसिंह देव, जुझारसिंह तथा उनके पिता चम्पतराय के ही संघर्ष के क्रम में था । औरंगजेब की धार्मिक कट्टरता की नीति के विरुद्ध जो प्रतिक्रिया हुई थी उसके फलस्वरूप इस साहसी बुन्देला शासक ने बहादुरशाह के समय में बुन्देलखण्ड में एक स्वतन्त्र सत्ता की स्थापना कर ली थी ।[3] जिस समय छत्रसाल बुन्देलखण्ड में अपनी स्वतन्त्र सत्ता की स्थापना कर रहे थे उस समय मुगल सम्राट फर्रुखसियर 1713-19 ने बुन्देलखण्ड में अपनी शासन-सत्ता की पुनः स्थापना करने के लिये अपने सबसे बहादुर सरदार मुहम्मद खान बंगश को इस आशय से बुन्देलखण्ड भेजा कि वह छत्रसाल की सत्ता को नष्ट कर सके । एक विशाल सेना के साथ मोहम्मद खान बंगश ने बुन्देलखण्ड

3- बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, गोरेलाल तिवारी, काशी नागरी-प्रचारिणी सभा, वाराणसी, पृष्ठ 66-116.

में प्रवेश किया और ऐसी परिस्थितियों में छत्रसाल को जून 1728 में जैतपुर के किले में स्वयम् को बन्द करना पड़ा । जिस समय बंगश जैतपुर के किले में घेरा डाले हुये था उस समय पेशवा बाजीराव प्रथम उत्तर-भारत के अभियान के सिलसिले में गढ़मंडला के दुर्ग के पास घेरा डाले हुये था । छत्रसाल ने अपना एक प्रतिनिधि भेजकर पेशवा की मदद की याचना की जिससे प्रेरित होकर बाजीराव ने बंगश के विरुद्ध छत्रसाल की सहायता की ।[4] अतः मराठा तथा बुन्देला सेनाओं ने मिलकर न केवल बंगश को पराजित ही किया, बल्कि उसे यहाँ से भाग जाने के लिये भी विवश किया ।

छत्रसाल ने पेशवा बाजीराव के सामयिक मदद से प्रसन्न होकर उन्हें अपने तीसरे पुत्र के रूप में मान्यता दी तथा अपने साम्राज्य का 1/3 भाग भी बाजीराव को सौंप दिया । छत्रसाल ने अपनी मृत्यु के पूर्व पन्ना में एक दरबार किया और पेशवा बाजीराव को सम्मानित किया । उन्होंने अपने दोनों पुत्रों को पेशवा के संरक्षण में पेश किया तथा हमेशा उनकी सहायता करने के लिये कहा । छत्रसाल की मृत्यु के बाद कुछ समय तक मराठों और बुन्देलों के सम्बन्ध मधुर बने रहे किन्तु मराठों की साम्राज्य-विस्तार नीति तथा बुन्देला राज्यों में हस्तक्षेप की नीति के कारण मधुर सम्बन्ध खराब हुये । 1761 में पानीपत की तीसरी लड़ाई में मराठों की पराजय के पश्चात् बुन्देलखण्ड में भी मराठा सत्ता को धक्का लगा । मराठों और बुन्देलों की फूट का

4- जी०एस० सरदेसाई-न्यू हिस्ट्री ऑफ दी मराठा, भाग-II, पृष्ठ 105-107.

साथ लेकर चलने से ही इस क्षेत्र में निगाह लगाये हुये अंग्रेजों को अपनी शक्ति तथा सत्ता स्थापित करने का अवसर मिला और 1802 की बेसिन की संधि से यहाँ ब्रिटिश सत्ता की स्थापना हुई। ब्रिटिश शासन काल में भी बुन्देलखण्ड के लोगों ने अपनी स्वतन्त्रता को बनाये रखने के लिये एक जुट होकर संघर्ष किया और 1857 के विद्रोह के समय हिन्दू-मुस्लिम तथा अन्य सभी क्रान्तिकारियों ने राष्ट्रीय एकता की अद्भुत मिसाल पेश की और विदेशी सत्ता के कड़वे अनुभव कराये।

1870 में इस क्षेत्र की राष्ट्रीय एकता की मजबूती तथा हिन्दू-मुस्लिम सहयोग अंग्रेजों के लिये एक सबक था। इसके बाद फूट डालो राज्य करो की नीति और प्रभावी रूप से लागू की गई और इस क्षेत्र में दमनचक्र चलाया गया लेकिन इसके बावजूद भी अंग्रेज यहाँ की राष्ट्रीय एकता को तोड़ नहीं पाये। स्वतन्त्र मनोवृत्ति के साथ-साथ राष्ट्रीय एकता के मजबूत तत्व बुन्देलखण्ड के इतिहास की प्रमुख विशेषता बन गई।

2- सर्वधर्म समन्वय की प्राचीन परम्परायें :

पहाड़ियों, गुफाओं एवम् जंगलों से घिरा हुआ यह क्षेत्र ऋषियों तथा मुनियों की शरण स्थली रहा है। महाभारत के रचयिता

वेद व्यास की आश्रयी कालपी, पैवाल ऋषि के आश्रम का केन्द्र जालौन तथा बाँदा वामदेव की कर्मस्थली थी । बाँदा के अतिरिक्त चित्रकूट तो बुन्देलखण्ड के अनेकों ऋषियों एवम् सन्तों के आध्यात्मिक विकास की आश्रमस्थली रही है । समय-समय पर अनेक राजाओं ने यहाँ हिन्दू, जैन, बौद्धधर्म तथा अनेकों देवी-देवताओं के मंदिरों का निर्माण प्रचुर संख्या में कराकर इन सभी धर्मों को समान रूप से फलने फूलने का समान अवसर प्रदान किया । चन्देल शासकों का काल इन धर्मों के पारस्परिक समन्वय का गौरवमय युग था । इस युग में हिन्दू तथा जैन मंदिर का निर्माण ही नहीं हुआ बल्कि इनके धर्मावलम्बियों में परस्पर सद्भाव और सहिष्णुता के स्पष्ट संकेत परिलक्षित हुये । इससे लोग यह समझने लगे कि हिन्दू तथा जैन दोनों एक ही वृक्ष की शाखायें हैं ।

बुन्देलखण्ड के समीप ही साँची में बौद्ध स्तूप का निर्माण इस क्षेत्र की सर्वधर्म समन्वय की भावना को और मजबूती प्रदान करता है। गुप्त शासकों के समय दतिया के निकट सेवढ़ा नामक स्थान पर सनकानिक महाराज का मंदिर निर्मित कराया गया । सेवढ़ा के निकट सनकुँआ नामक स्थान सनकानिक सम्प्रदाय का प्रमुख केन्द्र था । बुन्देलों के समय सर्वधर्म समन्वय की यह परम्परा अनवरत रूप से चलती रही । महाराजा छत्रसाल बुन्देला ने अपने गुरु प्राणनाथ के नाम पर प्रणामी सम्प्रदाय चलाया । वीरसिंह देव के समय तो मुगल बुन्देला सम्बन्धों की जो प्रगाढ़ता प्रारम्भ हुई उससे सर्वधर्म सद्भाव तथा राष्ट्रीय एकता का ठोस आधार तैयार हुआ जिसके चिन्ह बुन्देलखण्ड के जनजीवन में स्पष्ट परिलक्षित होते हैं ।

3- छत्रसाल मस्तानी प्रकरण बुन्देलखण्ड में राष्ट्रीय एकता की एक ठोस आधार-शिला :

बुन्देलखण्ड में राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से छत्रसाल मराठा मैत्री तथा उनका मस्तानी से सम्बन्ध एक महत्वपूर्ण घटना है ।[5] यह उल्लेखनीय है कि जैतपुर युद्ध के पश्चात् छत्रसाल ने अपने दरबार की सुन्दर, साहसी एवम् सैन्य-कला में प्रवीण मुस्लिम नर्तकी मस्तानी को बाजीराव को समर्पित कर दिया था । बाजीराव तथा मस्तानी के सम्बन्धों के बीच धर्म, जाति तथा सम्प्रदाय किसी प्रकार बाधक स्वरूप नहीं थे । मस्तानी ने भी शीघ्र ही हिन्दू खान-पान, भाषा, रहन-सहन आदि सभी अपना लिया था और उसकी मृत्यु तक उसके सभी आचार-व्यवहार ब्राह्मण कुल वधुओं की ही तरह रहे । वह हिन्दू ललनाओं की तरह बाजीराव से प्रेम करती थी । हिन्दू-मुस्लिम परिवेश के सम्मिलन का तत्कालीन परिस्थिति में बाजीराव और मस्तानी सम्बन्ध एक आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करता है । इसका श्रेय बुन्देलखण्ड की राष्ट्रीय एकता की परम्पराओं को ही है । इस सम्पर्क से पेशवा बाजीराव का कठोर सैनिक जीवन उसके प्रेम से अनुप्राणित हो उठा ।[6]

सन् 1734 में मस्तानी ने एक पुत्र को जन्म दिया । यह पुत्र शमशेर बहादुर था । पेशवा बाजीराव ने पूना में सुप्रसिद्ध शनिवार

5- देखिये अध्याय पंचम ।

6- डी०डी० गुप्ता, मस्तानी बाजीराव और उनके वंशज बांदा के नवाब, प्रथम संस्करण 1983, पृष्ठ-07 .

वाड़े में मस्तानी और उसके पुत्र के लिये 1736 में एक कक्ष का निर्माण कराया जो आज भी मस्तानी महल के नाम से प्रसिद्ध है। इस महल की ओर से बाहर जाने की ओर जो दूसरा द्वार है उसका नाम मस्तानी दरवाजा रखा गया । बाद में उसे अली बहादुर दरवाजा भी कहा जाने लगा था ।[7] मस्तानी अपने पुत्र शमशेर बहादुर के साथ उसी महल में बाजीराव के साथ रहती रही और उसकी मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र शमशेर बहादुर और पौत्र अली बहादुर का निवास स्थान भी यही रहा ।[8] बाजीराव की मृत्यु के तुरन्त बाद मस्तानी की भी मृत्यु हो गयी ।[9] मस्तानी और बाजीराव के इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि महाराष्ट्र में मस्तानी को सती सुहागनी माना जाता रहा है । शमशेर बहादुर के विवाह के अवसर पर उसके नाम पर सुहागनों को भोजन कराये जाने का भी उल्लेख मिलता है ।[10] आज भी पूना से 20 मील दूर पाबल[11] नामक छोटे से ग्राम में उसके मकबरे को देखकर लोगों के मन में राष्ट्रीय एकता रूपी इस अमर प्रेम की स्मृतियाँ ताजी हो उठती हैं ।

7- बी०डी० गुप्ता, मस्तानी बाजीराव और उनके वंशज बाँदा के नवाब, प्रथम संस्करण 1983, पृष्ठ-07.

8- हिस्टोरिकल जीनिओलाजीज (सरदेसाई), पृष्ठ-98, शनिवार बाड़ा (जी०एच० खरे), पृष्ठ 7-10, 19 पारसनीस, पृष्ठ-84 पादटिप्पणी ।

9- वही, पृष्ठ-12.

10- पेशवा दफ्तर, भाग-27, 81.

11- पाबल मस्तानी की जागीर थी यहाँ उसकी समाधि, मस्जिद और वहाँ के अवशेष अभी भी विद्यमान हैं ।

4- शमशेर बहादुर द्वारा अपने पिता बाजीराव की परम्पराओं का परिवर्धन तथा बुन्देलखण्ड राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने के प्रयास :

शमशेर बहादुर मस्तानी और पेशवा बाजीराव का एक मात्र पुत्र था जिसका जन्म 1734 में हुआ था । उसकी शिक्षा-दीक्षा मुस्लिम बालक की तरह हुई तथा उसका विवाह एक मुस्लिम धर्म परिवर्तित हिन्दू परिवार की कन्या से कर दिया गया ।[12] इस कन्या का नाम लालकुँवर था । उसका दूसरा विवाह एक मुस्लिम परिवार की कन्या मेहरबाई से हुआ था । यही अली बहादुर बाद में बाँदा का प्रथम नवाब बना ।

अपने पिता द्वारा बुन्देलखण्ड में प्राप्त क्षेत्रों को संगठित करने के लिये शमशेर बहादुर ने महत्वपूर्ण योगदान दिया । अपने पिता की तरह बुन्देलाओं से मैत्री को मजबूत करने के इरादे से शमशेर बहादुर ने पन्ना और जैतपुर के उत्तराधिकार विवादों में निर्णायक की भूमिका निभाई । उल्लेखनीय यह है कि पन्ना और जैतपुर छत्रसाल के वंशजों के बीच उत्तराधिकार सम्बन्धी विवाद चल रहा था । छत्रसाल के वंशज शमशेर बहादुर से भाईचारा मानते थे और शमशेर बहादुर ने बड़े मेल-मिलाप के साथ इस समस्या का हल कराया । राष्ट्रीय एकता तथा हिन्दू-मुस्लिम एकता का वह

12- देखिये अध्याय पंचम .

रास्ता जिसे बुन्देलखण्ड में मस्तानी और बाजीराव ने दिखाया था उसे शमशेर बहादुर ने और प्रशस्त किया ।

5- बाँदा के नवाब तथा बुन्देलखण्ड में राष्ट्रीय एकता :

शमशेर बहादुर का पुत्र अली बहादुर ने बाँदा के प्रथम नवाब होने की उपाधि प्राप्त की । बाँदा में इसी ने इस नये राजवंश की स्थापना की जिसकी उत्पत्ति मस्तानी और बाजीराव के सम्पर्क से हुई थी । बाँदा के नवाबों ने बुन्देलखण्ड में अपने पूर्वजों के बताये हुये मार्ग पर चलकर राष्ट्रीय एकता के तत्वों को मजबूत किया । बदली हुई राजनैतिक परिस्थिति में 1804 में अंग्रेजों द्वारा बाँदा पर अधिकार करने के पश्चात् बाँदा के नवाब तथा उसके उत्तराधिकारी जुल्फिकार अली तथा अली बहादुर द्वितीय केवल नाम मात्र के नवाब बन गये । 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम में अली बहादुर द्वितीय ने सक्रिय रूप से शामिल होकर विदेशी शासन के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा खड़ा किया तथा रानी लक्ष्मीबाई का साथ दिया ।

मस्तानी बाजीराव से उत्पन्न हुई सन्तति ने हिन्दू-मुस्लिम एकता एवम् राष्ट्रीय एकता के तत्वों को भली-भाँति पुष्ट और विकसित किया । अली बहादुर से लेकर अन्त तक बाँदा के नवाबों के कार्यों तथा उनके जीवन वृत्तान्त को इसी रूप में देखा जा सकता है । बुन्देलखण्ड में बाजीराव द्वारा जीते हुये प्रदेशों की प्राप्ति के लिये बाँदा के नवाबों ने सतत् संघर्ष किया और यदि हिम्मत बहादुर गोसाई ने धोखा न दिया होता और वह अंग्रेजों के साथ न जा मिला

होता तो निश्चय ही बुन्देलखण्ड का इतिहास कुछ और हुआ होता किन्तु गोसाई सेनानायक की स्वार्थपरता एवम् धोखे की नीति ने अली बहादुर तथा शमशेर बहादुर द्वारा किये गये विजय अभियानों को असफल बना दिया । बुन्देलखण्ड की मिट्टी में स्वयम् को सम्माहित कर यहाँ की स्वतन्त्रता , साहस, स्वाभिमान आदि गुणों का प्रतिनिधित्व बाँदा के नवाबों ने किया । यह कहना असंगत नहीं होगा कि मस्तानी और पेशवा बाजीराव के स्नेह ने बुन्देलखण्ड में राष्ट्रीय एकता को ठोस आधार प्रदान किया । बांदा में 1857 के विद्रोह के समय इसी कड़ी में नवाब अलीबहादुर द्वितीय ने बुन्देलखण्ड के क्रान्ति वीरों जैसे महारानी लक्ष्मीबाई , राजा मर्दनसिंह आदि के साथ ही संयुक्त प्रयासों में शामिल होकर देश को अंग्रेजी दासता से मुक्त कराने हेतु प्रयास किया ।

6- <u>बुन्देलखण्ड में एक वफादार प्रजा के निर्माण का ब्रिटिश प्रयास:</u>

1803 की बेसिन की संधि से बुन्देलखण्ड में ब्रिटिश प्रभुसत्ता का उदय हुआ । धीरे-धीरे ब्रिटिश साम्राज्य का विस्तार होता गया । कठोर राजस्व नीति, कुटीर उद्योग धन्धों का विनाश , कपड़ा वस्त्र उद्योग का पतन, कपास की खेती तथा अन्य हस्त-शिल्प को नष्ट कर ब्रिटिश शासकों ने इस क्षेत्र को सामाजिक, आर्थिक रूप से पिछड़ा बना दिया । शोषण की प्रवृत्ति तथा भारतीयों को धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप और भेद-भाव की नीति ने 1857 के विद्रोह को जन्म दिया जिसमें हिन्दू तथा मुस्लिम की एकता तथा सर्व-धर्म

समन्वय का अच्छा उदाहरण देखने को मिला । झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के नेतृत्व में बाँदा के नवाब अली बहादुर झाँसी के जेल दरोगा बख्शीश अली तोपची गुलाम गौस खाँ, सिपहसालार काले खाँ तथा अन्य सभी धर्मों ने मिलकर बुन्देलखण्ड में अँग्रेजों के शासन को कड़ी चुनौती दी किन्तु अँग्रेजों की कुशल सैनिक शक्ति तथा प्रभावी युद्ध प्रणाली से यह विद्रोह समाप्त कर दिया गया ।

1857 में हिन्दू-मुस्लिम एकता की मजबूती को देखते हुये अँग्रेजों ने बुन्देलखण्ड में एक ऐसी प्रजा के निर्माण की आवश्यकता समझी जो विदेशी शासन के प्रति वफादार हो । यद्यपि ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासन में ईसाई मिशनरियों को भारत में आने की सुविधायें दी गई थीं लेकिन 1858 के बाद यह मिशनरी अधिकांश संख्या में आने लगे । शिक्षण संस्थायें, अस्पताल, अनाथालय आदि खोलकर तथा अन्य प्रलोभनों से बुन्देलखण्ड के गरीब लोगों को ईसाई बनाया जाने लगा । धर्म के नाम पर भावनात्मक एकता स्थापित करने तथा ब्रिटिश शासन को मजबूती प्रदान करने के उद्देश्य से इस सुनियोजित नीति को अपनाया गया । अँग्रेज यह समझते थे कि यहाँ के हिन्दू तथा मुसलमानों पर विश्वास नहीं किया जा सकता था इसीलिये मिशनरियों को ईसाई बनाने के लिये छूट दे दी गई । लेकिन राष्ट्रीय चेतना के प्रचार तथा प्रसार से तथा भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस की स्थापना और राष्ट्रीय नेताओं के विचारों तथा बुन्देलखण्ड के राष्ट्रीय एकता की प्रेरणा से इस क्षेत्र में धर्म के नाम पर विभाजन करने में अँग्रेजों को सफलता नहीं मिली । उल्लेखनीय यह है कि

बुन्देलखण्ड के मिशनों को यद्यपि विदेशी सहायता प्राप्त होती रही किन्तु उनके प्रति स्थानीय लोगों का व्यवहार सद्भावपूर्ण था । अलीपुर तथा छतरपुर रियासतों के राजाओं ने अपने यहाँ मिशनरियों को स्कूल और अस्पताल खोलने के लिये आमन्त्रित किया तथा उन्हें भूमि दान में प्रदान की । इस सद्भावपूर्ण नीति के कारण अँग्रेजों का बुन्देलखण्ड में एक वफादार प्रजा का निर्माण और राष्ट्रीय एकता तोड़ने का प्रयास सफल नहीं हुआ ।

7- **खिलाफत आन्दोलन के समय बुन्देलखण्ड में हिन्दू-मुस्लिम एकता का अद्भुत प्रदर्शन :**

1919 में प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति के पश्चात् अँग्रेजों ने टर्की से बदला लेने के उद्देश्य से वहाँ के सुल्तान से खलीफा का पद छीन लिया । भारत के मुसलमानों ने इस कार्य को अपने धर्म गुरु का अपमान समझा । गाँधी जी ने खलीफा के साथ हुये अन्याय को दूर करने की माँग की और उन्होंने खिलाफत आन्दोलन चलाया । इस समय हिन्दू और मुसलमानों में एकता की लहर समूचे भारत में ज्वार भाटा की तरह उठी ।[13] हिन्दू और मुसलमान गले मिलने लगे ।

बुन्देलखण्ड के हमीरपुर जिले में प्रसिद्ध स्वतन्त्रता सेनानी दीवान शत्रुघ्न सिंह ने इस अवसर पर हिन्दू-मुस्लिम संगठन को

13- समर गाथा; सम्पादक डॉ0 भवानी दीन, प्रथम संस्करण 1955 बसन्त प्रकाशन महोबा, पृष्ठ-30.

मजबूत बनाने को जोरदार अभियान छेड़ा । राठ के अता उल्लाखाँ, सैयद अहमद, शेख रोशन और शेख नवाब जैसे मुस्लिम और मूलचन्द्र शर्मा, मातादीन बुधौलिया, हीरालाल और गरीबदास जैसे हिन्दू भाई इस हिन्दू-मुस्लिम एकता को मजबूत बनाने का प्रयास करने लगे । 1920 में राठ में मोहर्रम बड़े जोश से मनाया गया । दीवान् शत्रुघ्न सिंह ने हृदय से सहयोग करने का प्रस्ताव कांग्रेस समिति से पास कराया । अतः राठ के हिन्दुओं ने ताजियों का स्वागत किया।[14] हिन्दुओं तथा मुसलमानों ने अपने मकानों को दीपकों से अलोकित कर सारे राठ को रोशनी से जगमगा दिया । हिन्दुओं ने ताजियों को कंधों पर रखा । सर्वप्रथम दीवान् साहब ने अपना कंधा ताजियों में लगा दिया और देखते ही देखते वहाँ एकत्रित सभी कांग्रेसियों ने अपने कंधे पर ताजिये रख लिये । हसन और हुसैन तथा भारतमाता की जय से राठ नगर गूँज उठा । हिन्दू महिलाओं ने छतों से अपने आभूषणों को ताजियों के ऊपर न्योछावर कर गरीबों की झोलियाँ भर दीं । इस तरह हिन्दू मुस्लिम सहयोग तथा राष्ट्रीय एकता के अनूठे तत्व बुन्देलखण्ड में निरन्तर मजबूत होते गये ।

जहाँ ताजियों के जुलूस में हिन्दुओं की भागेदारी थी वहाँ जलविहार के मेले में मुस्लिम लोगों का सहयोग भी इस क्षेत्र में राष्ट्रीय एकता को मजबूत आधार प्रदान करता है । 1920 में राठ नगरी में जलविहार के मेले के समय जब राम-सीता, राधा और कृष्ण के विमान

14- समर गाथा; सम्पादक डॉ0 भवानी दीन, प्रथम संस्करण, 1955, बसन्त प्रकाशन महोबा , पृष्ठ-31.

निकल रहे थे उस समय यहाँ के मुसलमानों ने किसानों को अपने कंधों पर रख लिया और शंख बजाने लगे। राठ के मुसलमानों ने अपने मकानों के सामने सीता-राम और राधे-श्याम की मूर्तियों की आरती उतारी। इस तरह 1920 में राठ के मोहर्रम और जलविहार के उत्सवों पर हिन्दू-मुस्लिम सद्भाव का अनोखा दृश्य देखने को मिला[15] इसी तरह का वातावरण पूरे बुन्देलखण्ड में छाया रहा।

8- झाँसी के मराठा शासक तथा राष्ट्रीय एकता:

झाँसी में मराठा राजाओं के समय हिन्दू-मुस्लिम सहयोग भाई-चारा एवम् राष्ट्रीय एकता को मजबूत आधार प्रदान किया गया। उल्लेखनीय है कि 1835 में रामचन्द्र राव की मृत्यु के पश्चात् झाँसी रियासत की गद्दी पर उनका चाचा रघुनाथराव बैठा। रघुनाथराव हिन्दू-मुस्लिम सहयोग के प्रबल समर्थक थे और उन्होंने दोनों धर्मों में राष्ट्रीय तत्वों को सत्य प्रदान करने के उद्देश्य से एक मुस्लिम महिला से विवाह किया था जिसका नाम गवराबाई था। रघुनाथराव और गवराबाई से दो पुत्र भी उत्पन्न हुये जिनमें प्रथम शमशेर बहादुर तथा दूसरा अली बहादुर था। अली बहादुर ने झाँसी के नई बस्ती में स्थित नई मस्जिद का निर्माण कराया था। रघुनाथराव द्वारा पोषित की गई राष्ट्रीय एकता को और अधिक मजबूती गंगाधर राव तथा लक्ष्मीबाई के समय में मिली। बख्शीश अली, अमान खाँ और

15- समर गाथा, सम्पादक डॉ0 भवानी दीन, प्रथम संस्करण, 1955, बसन्त प्रकाशन महोबा, पृष्ठ-31।

काले खाँ जो रानी झाँसी की सेना के प्रमुख सेनानायक थे । वे लक्ष्मीबाई के प्रिय तथा वफादार सरदारों में से थे । झाँसी में मोहर्रम के समय में निकाले जाने वाले ताजियों में पहला ताजिया रानी लक्ष्मीबाई का हुआ करता था जिसे रानी लक्ष्मीबाई झाँसी का ताजिया कहते हैं । इस प्रकार बुन्देलखण्ड के मराठा राजाओं ने हिन्दू-मुस्लिम एकता को प्रगाढ़ बनाने तथा राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने के महत्वपूर्ण कार्य किये ।

बुन्देलखण्ड के सन्तों, फकीरों, सूफियों, कवियों एवम् लेखकों ने भी अपनी लेखनी से इस एकता को मजबूती प्रदान करने में सहयोग दिया है । ग्वालियर सूफी सन्तों का केन्द्र था । झाँसी में भी अनेकों पीरों एवम् सूफी सन्तों की दरगाहों पर उर्स आयोजित किये जाते रहे हैं जो राष्ट्रीय एकता को मजबूती प्रदान करने के प्रतीक हैं ।

9- बुन्देलखण्ड में गाँधी जी का तथा मौलाना शौकत अली का आगमन तथा राष्ट्रीय एकता :

1920-21 के असहयोग आन्दोलन के समय गाँधी जी तथा मौलाना शौकत अली का 20 नवम्बर 1920 को झाँसी आगमन हुआ। झाँसी नगर के मध्य शाही बाग में इन नेताओं के स्वागत के लिये बहुत सुन्दर मञ्च तैयार किया गया । गाँधी जी ने भाषण देते हुये कहा कि हमारा उद्देश्य केवल हिन्दू-मुस्लिम एकता और हिंसा रहित असहयोग

है । इस अवसर पर मौलाना शौकत अली ने भी सभा को सम्बोधित किया । कुलपहाड़ के ईसाई मिशन ने भी गाँधी जी का स्वागत किया था और आन्दोलन में सहयोग करने के लिये ईसाई मिशनरियों ने 101/- रुपये की थैली गाँधी जी को भेंट की थी । गाँधी जी के प्रेरक नेतृत्व ने राष्ट्रीयता की जिस भावना को पल्लवित किया था उससे बुन्देलखण्ड के ईसाई मिशन के लोग भी अत्यन्त प्रभावित हुये । हिन्दू-मुस्लिम तथा ईसाईयों ने मिलकर राष्ट्रीय एकता को इतना सशक्त कर दिया जिससे कि अंग्रेजों की फूट डालो राज करो नीति सफल नहीं हो पाई । सविनय अवज्ञा आन्दोलन तथा भारत छोड़ो आन्दोलनों में भी इसी प्रकार की सक्रिय भागीदारी बुन्देलखण्ड की जनता ने की ।

बुन्देलखण्ड महान् क्रान्तिकारियों का केन्द्र भी रहा है । चन्द्रशेखर आजाद ओरछा में सातार नदी के किनारे साधु वेष में रहते थे । इन क्रान्तिकारियों को बुन्देलखण्ड में सभी वर्गों का सहयोग मिला । इस प्रकार इस क्षेत्र में राष्ट्रीय एकता के तत्व सदैव सुदृढ़ होते रहे ।

—o—

सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

"A" NATIONAL ARCHIEVED OF INDIA, NEW DELHI.

1. Foreign Department Political Consultation, 11 June, 1817, File No. 14.

2. Foreign Department Political Proceeding Consultation, 17-1-1842, File No. 6-12.

3. Foreign Department Political Consultation, 26-10-1817, File No. 49.

4. Foreign Department Political Consultation, 7-4-1817, File No. 62.

5. Foreign Department Political Consultation, 16-11-1842, File No. 125.

6. Foreign Department Political Consultation, persian letter No. 256, 15-4-1856.

7. Foreign Department Political Consultation, letter dated 30 Dec. 1859, F. No. 283.

8. Foreign Department Political Consultation, letter dated 31 Dec. 1858, F.No. 2131.

9. Foreign Department Political Consultation, letter dated 8 Nov. 1858, Plate No. 20.

10. Foreign Department Secret Consultation, 18 July, 1859, F. No. 188.

11. Foreign Department Secret Consultation, 28 May, 1858, F. No. 151-55.

12. Foreign Department Secret Consultation, 30 April, 1858, F. No. 145.

13. Foreign Department Political Consultation, 4-5-1817, F. No. 54.

14. Introductory note to discriptive list of Records of the Bundelkhand Political Agency, National Record-Office, New Delhi.

15. Foreign secret consultation, 18 December, 1857.

---

16. लेटर नं0 19. 1858, डेटेड कैम्प बान्पुर, 11 मार्च, 1858.

17. लेटर नं0 22. आफ 1858, डेटेड कैम्प तालबेहट, 14 मार्च, 1858.

18. लेटर नं0 48. आफ 1858, डेटेड कैम्प बिफोर झाँसी, दिनांक 22 मार्च, 1858.

19. लेटर नं0 69. आफ 1858, डेटेड कैम्प बिफोर झाँसी, दिनांक 29 मार्च, 1858.

20. पिन्कने वीकली रिपोर्ट नम्बर 48, 22 मार्च, 1858.

21. प्रोसीडिंग "होम डिपार्टमेन्ट पॉलिटिकल ब्रांच" फाईल नम्बर 19/1908, राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली.

"B" <u>PUBLISHED RECORDS & GAZETTEER.</u>

1. Hutchinson and Chick, N.A. (Ed. and Com.) : Annals of the Indian Rebellion (1857-58).

2. Atkinson, E.T. : Statistical, Descriptive and Historical Account of the N.W. Provinces of India, Vol. I. (Bundelkhand) Allahabad, 1874.

3. Drake-Brockman, D.L. : District Gazetteers of the United Provinces of Agra & Oudh, Vol. XXIV, Allahabad, 1909.

4. Drake-Brockman D.L. : Jalaun Gazetteers, Allahabad, 1909.

5. Hunter, W.W. : Dis-orders Enquiry Committee Evidence, (Confidential), 1920.

6. Forrest, G.W. : Selections from state papers Military Department (1857-58).

7. Hunter, W.W. : The imperial Gazetteer of India, Vol. V, London, 1881.

8. Hale, H.W. : Terrorism In India (1917-1936) Government of India Press, Simla, 1937.

9. Joshi, Smt. Esha Basanti. : U.P. District Gazetteers Jhansi, 1965, Lucknow.

10. Ker, J.C. : Political Trouble In India (1907-1917), Published by Home Dept., Govt. of India, Confidential Publications, 1917.

Selections from vernacular newspapers in the Punjab, North-Western Provinces, Oudh and Central Provinces (1864-1888).

Selections from native newspapers published in United Provinces.

The Revolt in Central India (1857-59), compiled in the Intelligence Branch, Divisio of Chief of the staff, Army Head-Quarters, India, Simla (1908).

: The Imperial Gazetteer of India-Central India, Vol. XIV, 1908.

11. Tiwari, G.L. : Bundelkhand Ka Sankshipt Itihas, Ed. I., Samvat 1990, Kashi Nagari Pracharini Sabha, Varanasi.

"C" <u>REPORTS</u>, <u>MEMOIRS</u> <u>&</u> <u>TREATIES</u>.

1. Aitchinson, C.U. : A Collection of Treaties, Engagements and Sanada, Calcullta, 1909.

2. Census of India, 1951. : District Census Hand-Book, Uttar Pradesh, 23-Jhansi District, Allahabad, 1954.

Final Report on the Settlement of Jhansi District, 1895.

3. Impey, W. H.L. and Meston, J.S. : Report on the 2nd Settlement of the Jhansi District, N.W. Provinces, Allahabad, 1892.

4. Jenkinson, E.G. : Jhansi District Settlement Report, Allahabad, 1871.

5. N.W.P. Settlement Report. : Jhansi District, 1892.

6. Pim, A.W. : Final Settlement Report on the Revision of the Jhansi District including Lalitpur Sub-division (1903-1906), Allahabad, 1907.

: Report of the Second Settlement of Jhansi District, 1892.

: Report of the Committee appointed by the Council on July 28, 1931 of the U.P. Provincial Congress Committee to enquire into the Agrarian situation in the Province- "Agrarian Distress in the United Provinces."

"D" SECONDARY SOURCES.

1. Arnold, Edwin : Marquis of Dalheusie's Administration.

2. Ahluwalia, M.M. : Freedom Struggle In India, (1858-1909).

3. Banerjee, S.N. : Indian Constitutional Documents, Vol. I, V - Annexation of Jhansi.

4. Banerjee, S.N. : A Nation in Making, London, 1925.

5. Bhargava, Dr. Moti Lal. : Architects of Indian Freedom Struggle, New Delhi, 1981.

6. Burgess, James : The Chronology of Indian History, Delhi, 1972.

7. Burton, Major R.G. : History of the Hyderabad Contingent in Central India.

8. Chaudhuri, S.B. : Civil Rebellian In the Indian Mutinies, 1857-59, Calcutta, 1957.

9. Chattopadhaya, Haraprasad. : The Sepoy Mutiny 1857, A Social Study & Analysis.

10. Chandra Bipin, Tripathi Amles, & De, Derun. : Freedom Struggle, New Delhi. 1972.

11. Cotton : India & Home Memories.

12. Dublish, Dr. (Smt.)Kaushalya Devi. : Revolutionaries & Their Activities in Northern India, Delhi, 1982.

13. Dutt, Rajni Palme. : India Today.

14. Dutt, K. Ishwara. : Congress National Cyclopaedia. The Indian National Congress (1885-1920) Vol. I. - Pre-Gandhi Era.

15. Das, Manmath Nath. : Partition & Independence of India (Inside Story) of the Mountbatton Days) Delhi, 1982.

16. Das, Durga. : India From Curson to Nehru & After New Delhi, 1969.

17. Forrest, G.W. : History of Indian Mutiny.

18. Fisher, F.B. : India's Silent Revolution.

19. Gupta, Dr.B.D. : Maharaja Chhatrasal Bundela, Agra, 1958.

20. Gupta, Dr.B.D. : Mastani, Baji Rao Aur Unke Vanshaj Banda Ka Nawab(Hindi) Gwalior, 1983.

21. Gillean : The Rani.

22. Gopal, Dr. S. : The Viceraryalty of Lord Ripon.

23. Guha, Arun Chandra. : India's Struggle Quarter of a Century (1921-46) Part. II. Govt. of India, Publication.

24. Gupta, ManmathNath. : History of the Indian Revolutionary, Movement. Bombay, 1972.

25. Ghosh, Pratima. : Meerut Conspiracy case & The Left-Wing In India, Calcutta, 1978.

26. Gupta, Amit Kumar. : North-West Frontier Province Legistlature & Freedom Struggle, (1932-47).

27. Holmer, T.R. : A History of the Indian Mutiny.

28. Hibbert Christopher. : The Great Mutiny, India (1857), London, 1978.

29. Holmes, T.Rice. : A History of the Indian Mutiny & of the Disturbances which accompanied in among civil population, London, 1898.

30. Hussain, Mahmuda: Board of Aditors. A History of the Freedom Movement Vol. II.

31. Heinemann, Arnold. : Congress and the Raj, Facets of the Indian Struggle (1917-47), New Delhi.

32. Innes, Lt. General McLeod. : The Sepoy Revolt.

33. Justin, MacCarthy. : A History of our times.

34. Kincoid, Charles, A. : Laxmi Bai, Rani of Jhansi, & Other Essays, A Journal of Royal Asiatic Society, 1943.

35. Kaye, J.W. & Mellesson, G.B. : The History of the Sepoy, War In India, Vol. I To IV., London, (1864-1888).

36. Krishnamoorty Dr. Alladivaidehi. : Freedom Movement in India, (1858-1947), Hyderabad, 1977.

37. Lal, S. : Bharat Mein Angrezi Raj, Vol. II & III.

38. Lowe. : Central India During Rebellion.

39. Mukerjee, Hirendranath. : India's Struggle For Freedom, (1962).

40. Misra, A.S. : Nana Saheb Peshwa, Lucknow, 1961.

41. Mortin, M. : The Indian Empire.

42. Mookherji, Sudhansu Bimal. : India, Since (1857).

43. Muir, Ramsay. : The Making of British India. (1756-1858) Historical Series XXVIII of Publications of University of Manchester, London, 1923.

44. Malleson, Col. G.B. : The Indian Mutiny of 1857, 3rd. Ed. London, 1891.

45. Mac Munn, Lt. General Sir George. : The Indian Mutiny in Perspective, London, 1931.

46. Marx, Karl. : Articles on India, Bombay, 1951.

47. Mitra, Nripendra Nath. : The Indian Annual Register 1923 & 1933, Calcutta.

48. Masani, M.R. : The Communist Party of India-A Short History, London, 1954.

49. Motilal 'Ashant : Jhansi Darshan.

50. Masumdar, R.C. : The Sepoy Mutiny of The Revolt of 1857, Calcutta, 1957.

51. Nigam, M.L. : Cultural History of Bundelkhand, 1983.

52. Nagar, AmritLal : Ankho Dekha Gadar (Hindi Translation of Manjha Pravas in Marathi by Bhatt, G.).

53. Pathak, Dr. S.P. : "The Socio-Economic History of Jhansi District, During the later half of the 19th. Century" (Ph.D. Thesis, Agra University, Agra, 1977).

54. Pannikar, K.M. : A Survey of Indian History, 1966.

55. Pannikar, K.M. : Asic & Western Dominana London, 1955.

56. Parasnis, B.C. : Jhansi Ki Rani, Laxmi Bai.

57. Prasad, Bisheshewar. : National Movement for Freedom In India-A Retrospect (A paper submitted to the Asian Relations Conference, 1957).

58. Pandey, B.N. : The Indian Nationalist Movement (1885-1947) select Documents, London-1979.

59. Romesh, Dutt. : India In The Victorian Age.

60. Roberts, P.E. : History of British India.

61. Rosell, W.H. : My Indian Mutiny Diary in The Year (1858-59).

62. Rizvi, S.A.A. & Bhargava, M. L. (Editors). : Freedom Struggle In Uttar Pradesh, Source Material.

63. Raghuvanshi, V.P.S. : Indian Nationalist Movement & Thought, 1959, Agra.

64. Rai, Lajpat. : Young India.

65. Reeves, P.O., Graham, B.D. & Goodman, J.M. : Hand Book of Elections on U.P. (1920-51).

66. Roy, M.N. : Memoirs, Bombay, 1964.

67. Rudra Pandey. : Jhansi (Pub. Gwalior, 1990).

68. Sardesai, G.S. : New History of the Marathas, Vol. II.

69. Srivastava, A.L. : Shuja-Ud-Daulah, Vol. I., 2nd. Ed. 1961, Agra.

70. Srivastava, A.L. : History of Modern India (From advent of Emopeans) Agra, 1969.

71. Shejwalkar, T.S. : Indian Historical Records Commission Procs. Vol. XXVIII Pt. II, Nagpur, 1950, "Danger to Jhansi".

72. Sen, S.N. : Eighteen Fiffty Seven, Calcutta, 1858.

73. Sen, S.N. : History of Modern India.

74. Savarkar, V.D. : The Indian Warof Independence 1857.

75. Srivastava, Khushhalilal. : The Revolt of 1857 in Central India, Malwa, 1966.

76. Singh, Ramfal : Hundu-Muslim Sanskrit Ekta Ka Itihas. Vol. I & II.

77. The Vedic Age. : Bharti Itihas Samitis History & Culture of the Indian People Vol. I. Forwarded by K.M. Munsi.

78. Thompson, Edward & Garrett, G.T. : Rise and Fulfilment of British Rule In India, Allahabad, 1982.

79. Thompson, Edward. : The other side of the Medal, London, 1930.

80. Thompson, Edward: Enlist India for Freedom London, 1940.

81. Tahmankar, D.V. : The Rani of Jhansi.

82. Tilak, B.G. : Journey to Modras, Ceylon & Burma.

83. Tegart, Charles : Terrirism In India.

84. Transfer of Power. : Volumes (1942-47), Vol. IX, No. 248.

85. Velbuzen, E.De. : The English In India.

86. Vajpeyi, Dr. J.N. : The Extremist Movement In India, Allahabad, 1974.

87. Washbrook, D.A. : The Emergence of Provincial Politics,Madras Presidency, (1870-1920), Combridge, 1976.

88. Zaidi, A.M. & Zaidi, S.G. (Editors). : The Encyclopaedia of the Indian National Congress Vol. XII (1936-46), & Vol. VII (1916-1920).

"ई" पत्र - पत्रिकाएं

1. मधुकर : पं० बनारसी दास चतुर्वेदी, कुण्डेश्वर।

2. वीणा वादिनी : [हीरक जयन्ती विशेषांक] 1991-92, सरस्वती पाठशाला इन्टरमीडिएट इण्टर कालेज, झाँसी, रमेश चन्द्र गौरहार, वरिष्ठ अध्यापक, सेण्ट ज्यूड्स हा० से० स्कूल, झाँसी के सौजन्य से ।

3. कंचन प्रभा मासिक पत्रिका : अंक अप्रैल, 1975 ई०, कानपुर उत्तर प्रदेश से प्रकाशित ।

4. जर्नल ऑफ इण्डियन हिस्ट्री : यूनीवर्सिटी ऑफ केरल, त्रिवेन्द्रम ।

5. इतिहास अनुशीलन : इतिहास अनुशीलन प्रतिष्ठान, भोपाल ।

6. साप्ताहिक हिन्दुस्तान : 23 फरवरी 1964 ई० का अंक, नई दिल्ली से प्रकाशित ।

7. दैनिक जागरण : दैनिक समाचार पत्र 26 जनवरी, 1978 ई० का अंक, झाँसी से प्रकाशित ।

8. दैनिक जागरण : 10 अप्रैल, 1978 ई0 का अंक ।

9. दैनिक भास्कर : दैनिक समाचार पत्र 27 दिसम्बर, 1990 ई0 का अंक, झाँसी से प्रकाशित ।

10. ट्रान्सपोर्ट रिव्यू : का0 अयोध्या प्रसाद स्मृति अंक, सम्पादक का0 धरेन्द्र सक्सेना ।

——0——
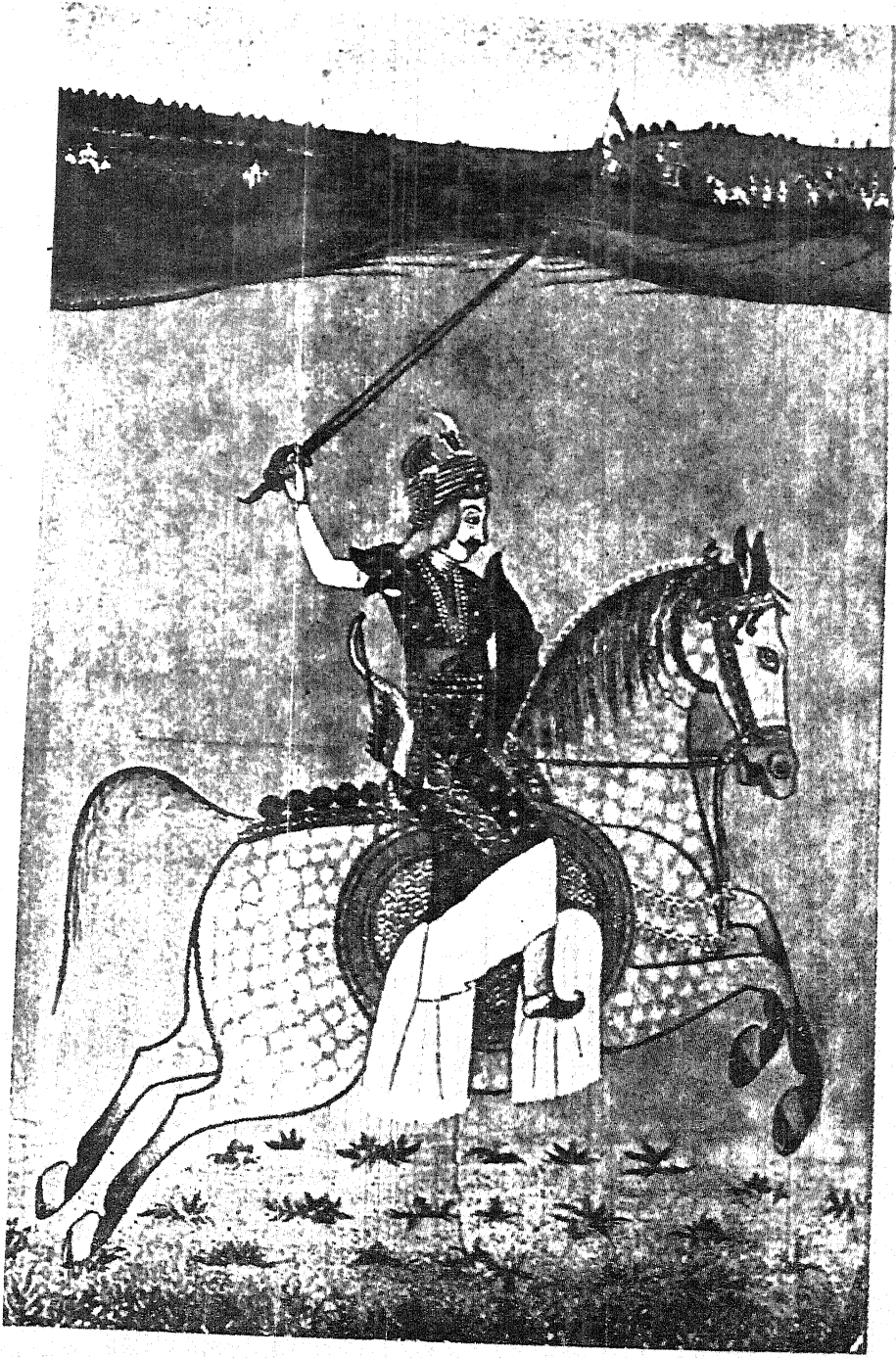
पेशवा बाजीराव प्रथम

मस्तानी (केलकर म्यूजियम)

नवाब अली बहादुर द्वितीय

RANI LAKSHMI BAI

Adapted from '1857 : A Pictorial Presentation'
by Publications Division, Govt. of India

STAR FORT

चंबल नदी
ग्वालियर राज्य
जालौन
कौंच
कालपी
कटैरा
बेरी
समथर
दतिया
झाँसी
चिरगांव
गुरसराय
पहाड़ी
ओरछा
खनियाधाना
चन्देरी
बानपुर
जिगनी
सरीला
चरखारी
बिहट
जैतपुर
गौरिहार
आलीपुर
गरौली
लुगासी
बांदा
तरौन
पहरा
कामता
अजयगढ़
पन्ना
जसो
विजयराघौगढ़
शाहगढ़
गढ़ाकोटा
सागर
सुरवा
नर्मदा नदी
भोपाल राज्य
रीवा राज्य
SCALE - 1 c.m. = 50 K.M.
बुन्देलखंड में
मराठी दासतान्तर्गत
स्थानीय राज्य - o
मराठी ठिकाने ●